भारतीय ग्रन्थालय संघ
हिन्दी ग्रन्थमाला, २

ग्रन्थालय प्रक्रिया

भारतीय ग्रन्थालय संघ

१९३३ ई. में स्थापित

(परिषद् पञ्जीयन विधि Societies Registration Act
(XXI of 1860) के अधीन पञ्जीकृत)

अध्यक्ष :

डॉ० श्री. रा. रंगनाथन, एम्. ए., डी. लिट्., एल्. टी., एफ्. एल्. ए.

मन्त्री :

श्री स. दास गुप्त, बी. ए. (केन्टब), डिप्. लिब्. एस् सी.

कोषाध्यक्ष :

श्री श्रीनिवासन

प्रकाशन

हिन्दी ग्रन्थमाला

१. रंगनाथन (श्री. रा.) : ग्रन्थ अध्ययनार्थ हैं, *Books are for use* का मुरारि लाल नागर द्वारा रूपान्तर. १९५०.
२. रंगनाथन (श्री. रा.) तथा नागर (मु. ला.) : ग्रन्थालय प्रक्रिया. १९[illegible]

अंग्रेजी ग्रन्थमाला

१. रंगनाथन (श्री. रा.) : लायब्रेरी टूर, यूरोप एण्ड अमेरिका, १९४८: इम्प्रेशन्स एण्ड रिफ्लेक्शन्स. १९५०.
२. रंगनाथन (श्री. रा.), संपा. : पब्लिक लायब्रेरी प्रोविज़न एण्ड डॉक्युमेंटेशन प्रॉब्लम्स. १९५१.
३. रंगनाथन (श्री. रा.) तथा शिवरामन (के. एम्.) : लायब्रेरी मेनुअल. १९५१.

सामयिक

१. ऍनाल्स. २ वर्षों में एक संपुट.
२. बुलेटिन. ,, ,, ,,
३. ग्रन्थालय. ,, ,, ,,

उपर्युक्त तीनों सामयिकों के विभिन्न अवदान

अवगिल

इस सामान्य आख्या के साथ एक आवरण में त्रैमासिक अवदान ३१ मार्च, ३० जून, ३० सितम्बर तथा ३१ दिसम्बर को प्रकाशित होते हैं।

ग्रन्थालय प्रक्रिया

श्री. रा. रंगनाथन

तथा

मुरारि लाल नागर

१९५१

भारतीय ग्रन्थालय संघ

देहली

२२
थ५१

रामा प्रिंटिंग वर्क्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली ।

महात्मा गान्धी

को

प्रतिपाद्य

ग्रन्थालय शास्त्र पञ्चसूत्री

ग्रन्थालयी सदासेवी पञ्चसूत्री-परायणः ।
ग्रन्था अध्येतुमेते च सर्वेभ्यः स्वं स्वमाप्नुयुः ॥
अध्येतुः समयं शेषेदालयो नित्यमेव च ।
वर्धिष्णुरेष चिन्मूर्तिः पञ्चसूत्री सदा जयेत् ॥

पूर्वपीठिका

विश्ववन्द्य महात्मा गांधी ने भारतवर्ष की स्वतन्त्रता की नौका को तीर तक पहुंचा दिया। १५ अगस्त १९४७ भारतवर्ष के इतिहास में अमर दिन हो गया। किन्तु भारत को स्वतन्त्र हुए एक वर्ष भी न बीत पाया था कि महात्मा गांधी ने अपना शरीर विलीन कर दिया। उन्होंने उस दिन तक मन, वचन और कर्म से कठोर परिश्रम किया, भारत को स्वतन्त्रता दिलाई और उसके बाद ही सहसा अपना विलय कर लिया। इस घटना का एक दृष्टान्त विश्वामित्र के द्वारा उपस्थित किया गया था। ब्रह्मर्षि विश्वामित्र ने अनेक उद्योग और कठिन परिश्रम कर श्री रामचन्द्र और जनकनन्दिनी का संयोग कराया और उसके बाद वे सहसा अन्तर्हित हो गये।

महात्मा गांधी के पश्चात् जीवित रहने वाले हम भारतीयों और हमारी भावी सन्तानों के सिर पर बड़ा भारी उत्तरदायित्व है। हमारी स्वतन्त्रता सचमुच उपयोगी बन सके और वह भारतीयों की शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक सभी दिशाओं में उन्नति करने में सहायक बन सके इसका हमें ही ध्यान रखना है। भारत का प्रत्येक निवासी वय और लिङ्ग के भेद के बिना, सामाजिक पद और प्रतिष्ठा का अन्तर रखे बिना अपने-अपने व्यक्तित्व का निरन्तर पूर्ण विकास करता रहे इसकी जिम्मेदारी हमारे ही ऊपर है।

वर्तमान समय में मानव जाति विकास की उस कोटि पर पहुंच गई है जब शरीर, मन और आत्मा—इन तीनों दिशाओं में उन्नति करने के लिए मानसिक उन्नति करना अनिवार्य है। मानसिक परिश्रम तथा मस्तिष्क की उन्नति से ही सच्चे अर्थ में व्यक्तित्व का विकास हो सकता है।

लाखों प्रौढ़ों की मानसिक उन्नति की व्यवस्था करने के लिए

ग्रन्थालय के सिवा और कोई दूसरा साधन ध्यान में नहीं आ सकता। ग्रन्थालय ही एक ऐसा साधन है जिसकी सहायता से हम लाखों प्रौढ़ों का सामूहिक शिक्षण कर सकते हैं।

हमें स्वतन्त्र भारत की प्रथम स्वतंत्र पीढ़ी होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अतः हमारा यह प्रधान कर्तव्य है कि हम बिना विलम्ब किये भारतवर्ष में एक छोर से दूसरे छोर तक चारों ओर ग्रन्थालयों का एक विस्तृत जाल बिछा दें।

ग्रन्थालय आन्दोलन का परिपोषण और प्रवर्द्धन तथा ग्रन्थालयों के विशाल जाल का अविलम्ब विस्तारण तभी हो सकता है जब ग्रन्थालय व्यवसाय, शासक वर्ग तथा जन-साधारण सहयोग के साथ पूरा-पूरा प्रयत्न करें। ग्रन्थालय आन्दोलन का उद्देश्य क्या है, उसे उन्नत करने का साधन क्या है तथा उसकी सफलता की सिद्धि के लिए किये जाने वाले कार्यों की क्या अवस्थाएँ होनी चाहिएँ इन प्रश्नों का समाधान तथा उनके विषय में एकमत होना अत्यन्त आवश्यक है। उपर्युक्त तीनों प्रकार के कार्यकर्ताओं का एकमत ही इस महान् कार्य की सिद्धि करा सकता है।

हम आज शताब्दियों से पराधीन थे। हमारा जीवन विदेशी शक्ति द्वारा नियन्त्रित था। इन कारणों से हममें इतनी अयोग्यता आ गई है कि न तो हम विवेक के साथ विचार कर सकते हैं और न साहस के साथ काम ही कर सकते हैं। हमें मालूम ही नहीं है कि हमारे अधिकार क्या हैं और हमारे कर्तव्य क्या हैं। अतः शासक वर्ग का, विशेषकर संघ के प्रथम शासक वर्ग के सदस्य विशिष्ट बुद्धिमान् महापुरुषों का यह प्रथम कर्तव्य है कि वे इस कार्य का सूत्रपात करें।

मद्रास ग्रन्थालय संघ गत पच्चीस वर्षों से निरन्तर उद्योग करता आ रहा है। उसके महान् उद्योगों से उस प्रान्त की जनता ने अपने ग्रन्थालय सम्बन्धी अधिकारों को जान लिया है। इस सत्कार्य के लिए उसका जितना धन्यवाद किया जाए उतना थोड़ा है। सच्ची लगन से किया हुआ सत्कार्य कदापि निष्फल नहीं हो सकता। मद्रास के शासक वर्ग ने इस विषय में भारतवर्ष का नेतृत्व किया है। यह सौभाग्य उसी प्रान्त को प्राप्त हुआ है। वहां सर्वजन ग्रन्थालय विधि (Public Libraries Act) स्वीकृत कर लिया गया है और उसके

अनुसार कार्य प्रारम्भ हो गया है। हमें आशा है कि मद्रास का यह उदाहरण अनुसृत किया जाएगा तथा संघ, बम्बई, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और केरल के शासक वर्गों से की गई प्रार्थनाएं सफल होंगी एवं वे शासक वर्ग अपने-अपने अधिकार क्षेत्रों में योग्य विधानकरण द्वारा ग्रन्थालय आन्दोलन का श्रीगणेश करेंगे।

यह आवश्यक है कि ग्रन्थालय व्यवसाय भी इस ग्रन्थालय आन्दोलन की सफलता की सिद्धि के लिए अपना हिस्सा बटाये। हमारी यह धारणा है। उसके लिए यह समय उपयुक्त आ गया है। किन्तु वह अपना अंशदान पूर्णतम रूप से और सर्वश्रेष्ठ ढंग से कर सके तथा जन-साधारण के मत को पूरी तरह अपने अनुकूल बना सके इसके लिए यह सर्वथा आवश्यक है कि उसकी शक्ति पूरी तौर पर बढ़ जाए। अर्थात् जब तक सारे भारत के लिए अपेक्षित ग्रन्थालयियों का अस्तित्व नहीं होता तब तक ग्रन्थालय व्यवसाय पूरी तरह सशक्त नहीं बन सकता। साथ ही वह विशेष प्रभाव भी नहीं दिखला सकता। किन्तु इसके होने के लिए कुछ समय लगेगा। यह संभव नहीं है कि हम एक ही दिन मे लाखों ग्रन्थालयियों को शिक्षा-दीक्षा देकर प्रस्तुत कर लें।

ग्रन्थालयियों के सम्बन्ध में एक बड़ी विचित्र भ्रमपूर्ण धारणा फैली हुई है। सच तो यह है कि सब प्रकार की नई सेवाओं के सम्बन्ध में आरम्भ में इसी प्रकार की भ्रमभरी धारणाएं स्थान किये रहती हैं। साधारण जनता, स्थानीय संस्थाएँ तथा शासक वर्ग ही ऐसे भ्रम में पड़े हुए हों यह बात नहीं, बल्कि दुःख की बात तो यह है कि विश्वविद्यालय क्षेत्रों में भी इस प्रकार का अन्धकार फैला हुआ है। दुःख इसलिए कि कम-से-कम उन्हें तो सच्ची स्थिति की पहचान चाहिए।

वह भ्रमपूर्ण धारणा यह है। लोग यह समझते हैं कि कोई भी व्यक्ति ग्रन्थालय को चेतनामय कर सकता है, उसे जानदार बना सकता है। यहां तक कि जो लोग योग्यता आदि की दृष्टि से अत्यन्त निम्न कोटि के हैं तथा जो अन्य किसी व्यवसाय से अपना पेट तक नहीं चला सकते वे भी ग्रन्थालय को भली भांति चला सकते हैं, लोग ऐसा मानते हैं।

किन्तु संसार में सभी व्यक्ति एक से नहीं होते। हमारे समाज में भी कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो अधिक जानकार हैं। वे यह तो मानते हैं कि ग्रन्थालय चलाने के लिए दीक्षा उपयोगी है, किन्तु उसके लिए विशिष्ट योग्यता और लम्बे समय तक ली हुई दीक्षा अनिवार्य है, इसे मानने के लिए वे तत्पर नहीं होते। वे यह समझते हैं कि निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को भी दो या तीन महीनों तक संक्षिप्त दीक्षा देकर ग्रन्थालय कार्य के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। वे ग्रन्थालय उद्देश्य को तुच्छ दृष्टि से देखते हैं।

परन्तु कुछ अन्य व्यक्ति उपर्युक्त प्रकार के व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक चतुर एवं विवेकी होते हैं। वे यह तो मान लेते हैं कि ग्रन्थालय चलाने के लिए पूर्णतर दीक्षायुक्त स्नातक (ग्रेजुएट) अनिवार्य हैं, किन्तु इतने ही से वे सन्तुष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार के ग्रन्थालयियों को ऐसा पद तथा वेतन दिया जाए जिससे ग्रन्थालय व्यवसाय में योग्य व्यक्ति आएं और टिके रहें, इस बात को वे स्वीकार नहीं करते।

इन सब आरम्भ की मूर्खताओं को दूर होने में कुछ वर्ष लगेंगे। किन्तु राष्ट्र का ग्रन्थालय कार्य तब तक रुका नहीं रह सकता। उसे तो आगे बढ़ना ही पड़ेगा। सच तो यह है कि इन विघ्न-बाधाओं के रहते हुए भी यदि उसकी गति लगातार बनी रही तो वही गति जनता का आवश्यक उद्बोधन करेगी और उद्बोधित जनता ही समय पाकर स्वयं उन विघ्न-बाधाओं को उखाड़ फेंकेगी।

इन बातों का ध्यान कर आज हमें केवल इसी विचार से सन्तोष कर लेना पड़ता है कि ग्रन्थालय आन्दोलन के वर्तमान शैशव काल में भारतीय ग्रन्थालयों के संचालन की जिम्मेदारी अधिकतर ऐसे लोगों पर पड़ेगी जो वस्तुतः आदर्श स्वरूप न होंगे। आज के ग्रन्थालयी या तो ऐसे होंगे जिनमें समाज सेवा की भावना पर्याप्त मात्रा में होगी, किन्तु ग्रन्थालय शास्त्र की दीक्षा का अभाव होगा; अथवा वे ऐसे होंगे जिन्हें प्रवर्तकता का वरदान न मिला होगा। संभव है उन्हें कुछ महीनों तक ध्यानहीन, असत्य रूप, सामूहिक शिक्षण पाने का अवसर मिला हो।

हमारे इस सन्तोष-अङ्गीकार की विचार-सरणि ने एक नई

विचार-धारा को जन्म दिया। हमारा यह दृढ़ विश्वास होता जा रहा है कि भारत में आज इने-गिने ग्रन्थालयी ही ऐसे हैं जिन्हें समाज से योग्य पद तथा उचित वेतन पाने का सौभाग्य मिला है। उनके सिर पर बड़ी भारी जिम्मेदारी आ पड़ी है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। उनका यह प्रथम कर्तव्य है कि वे ग्रन्थालयों के कार्य से प्राप्त अपने विशिष्ट अनुभवों को ग्रन्थों के रूप में व्यक्त तथा स्थायी बनाएं और इस प्रकार भावी ग्रन्थालयियों का मार्ग-प्रदर्शन करें। कारण भारत में निकट भविष्य के कुछ वर्षों में ग्रन्थालय ऐसे ही व्यक्तियों द्वारा चलाये जाएंगे जो कि या तो सर्वथा व्यवसाय से बाहर के होंगे अथवा आधे व्यवसाय के। हमारा यह प्रस्तुत ग्रन्थ भारत के आधुनिक ग्रन्थालय व्यवसाय के उपर्युक्त उत्तरदायित्व को निबाहने वाला एक छोटा सा अंश-दान है।

यहां हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि इस प्रकार की "घोल पिलाने वाली" "प्रक्रिया" केवल वर्तमान संक्रमण काल में ही उपयुक्त मानी जा सकती है। हम उस संक्रमण काल का पहले विवरण दे चुके हैं। हमें आशंका होती है कि कहीं इससे हमारे विलक्षण बुद्धि व ले अधिकारी यह न समझ बैठें कि इस प्रकार का ग्रन्थ देश की ग्रन्थालय सेवा की आधारभित्ति बन सकता है। मुझे विश्वास है कि विचारशील अधिकारी वर्ग ऐसी भूल न करेंगे। स्थानीय संस्थाएं, शासक वर्ग तथा विश्वविद्यालयों से हमारी यह प्रार्थना है कि वे आज ही से—इसी क्षण से इस बात की हर प्रकार से चेष्टा करें कि देश में शीघ्र ही पूर्ण दीक्षित ग्रन्थालय व्यवसाय का विशिष्ट दल तैयार हो जाए। उन्हें चाहिए कि वे इस सम्बन्ध में पूर्व निश्चित योजना के अनुसार आगे बढ़ें, जिससे कि कम-से-कम १९८० ई० में भारतीय ग्रन्थालय व्यवसाय अपनी पूर्ण युवावस्था को पहुंच जाए और उसकी पूर्ण संख्या १,२०,००० हो जाए।

हमारे पाठक यह आश्चर्य न कर बैठें कि इतने अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता कैसे पड़ सकती है। यदि हम भारत के विस्तृत क्षेत्रफल को तथा विशाल जनसंख्या को ध्यान में लाएं और शान्ति से विचार करें तो हमें यह स्पष्ट ज्ञात हो जाएगा कि यह संख्या कुछ बड़ी नहीं है। भारतवर्ष में जब ग्रन्थालयों का अस्तित्व पर्याप्त मात्रा में हो

आएगा तब इतने ही नहीं, बल्कि इससे भी अधिक ग्रन्थालयियों की आवश्यकता पड़ेगी। इसमें कोई सन्देह नहीं।

भारतवर्ष में आज से ३० वर्षों के पूर्व ही १ राष्ट्रिय केन्द्र ग्रन्थालय, २४ राज्य केन्द्र ग्रन्थालय, ३२१ ग्राम केन्द्र ग्रन्थालय, १५४ नगर केन्द्र ग्रन्थालय, ५,००० शाखा ग्रन्थालय, १४,००० जङ्गम ग्रन्थालय, ३,००,००० समर्पण प्रतिष्ठान, प्रायः १,००० कार्यभार ग्रन्थालय, ३० विश्वविद्यालय और गवेषणा ग्रन्थालय, १,००० महाविद्यालय ग्रन्थालय, ३२१ विद्यालय मण्डल ग्रन्थालय तथा १५,००० विद्यालय ग्रन्थालय हों यह अपेक्षित है।

देश में १,२०,००० व्यवसायी ग्रन्थालयियों की व्यवस्था करने के लिए शिक्षण संस्थाओं की विविध एवं परस्पर सम्बद्ध परंपरा की आवश्यकता अवश्य ही पड़ेगी। इन ग्रन्थालयियों का प्रमुख दल कम-से-कम ९०० व्यक्तियों का होगा। वे भारत के सर्वश्रेष्ठ नर-रत्न होंगे। उनका व्यक्तित्व परम उच्च कोटि का होगा। वे उत्पादक विचार, जन-नेतृत्व, साहसपूर्ण दृष्टि तथा अपने व्यवसाय के प्रति अनन्य भक्ति से परिपूर्ण रहेंगे। इस प्रकार के ३० व्यक्तियों को प्रति वर्ष दीक्षा देनी पड़ेगी। यह संभव नहीं है कि उन्हें विभिन्न अवयव राज्यों में अलग-अलग दीक्षा दी जाए। बुद्धि का उचित उपयोग इसी में है कि संघ शासक वर्ग अपने देहली विश्वविद्यालय में अखिल भारतीय ग्रन्थालय शास्त्र महाविद्यालय को चलाए तथा इन मार्ग-विधाताओं को शिक्षित-दीक्षित बनाए। साथ ही यह भी आवश्यक है कि अवयव राज्य के शासक वर्ग अपने चुने हुए श्रेष्ठ व्यक्तियों को इस महाविद्यालय में भेजें तथा वहां शिक्षा-दिक्षा दिलाएं। इन व्यक्तियों को अपनी दीक्षा ग्रन्थालय शास्त्र में वाचस्पति (डॉक्टरेट) उपाधि प्राप्त कर समाप्त करनी आवश्यक होगी। ये व्यक्ति राष्ट्रिय केन्द्र ग्रन्थालय के प्रधान ग्रन्थालयी बनेंगे। राज्य केन्द्र ग्रन्थालयों के राज्य ग्रन्थालयी तथा उप ग्रन्थालयी भी वे ही होंगे। ग्राम केन्द्र ग्रंथालयों के प्रधान ग्रन्थालयी, महान् नगर केन्द्र ग्रन्थालयों, विश्वविद्यालय ग्रन्थालयों तथा विशिष्ट कार्यभार ग्रन्थालयों के प्रधान भी वे ही बनेंगे।

ग्रन्थालयियों का दूसरा दल प्रायः ३,००० होगा। वे लघु नगर

ग्रन्थालयों के अध्यक्ष बनेंगे, राष्ट्र, राज्य, ग्रामीण क्षेत्र और महान् नगरों के ग्रन्थालयों के परिभागाध्यक्ष होंगे तथा कार्यभार ग्रन्थालयों के प्रधान बनेंगे। वे काफी योग्य होने चाहिएं। प्रति वर्ष इस प्रकार के एक सौ व्यक्तियों को प्रस्तुत करना पड़ेगा। उन्हें दो वर्ष के स्नातकोत्तर (पोस्ट-ग्रेजुएट) तथा गहन दीक्षा पाठ्य-क्रम को स्वीकार करना पड़ेगा, और ग्रन्थालय शास्त्र में उपाधि लेकर शिक्षा पूर्ण करनी पड़ेगी। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए भारत को केवल एक ग्रन्थालय-शास्त्र-केन्द्र-महाविद्यालय की आवश्यकता पड़ेगी। यह वही महाविद्यालय होगा जिसका हम पहले वर्णन कर आ चुके हैं और जिसके द्वारा प्रमुख दल प्रस्तुत किया जाएगा। यह महाविद्यालय भी देहली विश्वविद्यालय के ही अधीन होगा। यही योजना उपयुक्त होगी।

तृतीय दल की संख्या प्रायः ५०,००० होगी। उन्हें इस प्रकार की शिक्षा दी जाएगी कि वे विभिन्न ग्रन्थालयों के उच्च अधिकारियों की देख-रेख में कार्य कर सकें। उनके लिए एक वर्ष का स्नातकोत्तर दीक्षा पाठ्यक्रम ही पर्याप्त होगा। इस प्रकार के १,७०० व्यक्तियों को प्रति वर्ष दीक्षित करने के लिए यह आवश्यक होगा कि भारत का प्रत्येक विश्वविद्यालय एक ग्रन्थालय शास्त्र महाविद्यालय चलाए। उन महा-विद्यालयों के शिक्षक वे ही होंगे जो उसी पूर्वोक्त देहली विश्वविद्यालय के राष्ट्रिय ग्रन्थालय शास्त्र महाविद्यालय से वाचस्पति अथवा तत्सम उपाधि प्राप्त कर चुके होंगे।

अवशिष्ट ६६,००० व्यक्तियों को बहुत छोटे ग्रन्थालयों में काम करना पड़ेगा। उनके लिए ऐसी व्यवस्था की जाएगी कि प्रत्येक अव-यव राज्य में तीन महीनों का एक लघु-पाठ्य-क्रम चलाया जाए। उसके द्वारा उनमें ग्रन्थालय सम्बन्धी विशिष्ट विचारधारा उत्पन्न की जा सके और उनका प्रवर्तन कर दिया जाए। फलतः उनमें यह शक्ति आ जाएगी कि वे इसी विशेष उद्देश्य से लिखी हुई इस प्रकार की एक 'प्रक्रिया' द्वारा अपने साधारण कार्य को भली भांति चला सकें।

'विद्यालय तथा महाविद्यालय ग्रन्थालय' (*School and college libraries*) इसी प्रकार की एक 'प्रक्रिया' है। वह इसी प्रकार के साधारण कार्यकर्ताओं के लिए बनाई गई है, जो शिक्षा-

सम्बन्धी ग्रन्थालयों में कार्य करना चाहते हैं। हमारा यह विचार है कि कार्यभार ग्रन्थालयों के कार्यकर्ताओं के लिए भी इसी प्रकार की स्वतन्त्र 'प्रक्रिया' प्रस्तुत की जाए। 'ग्रन्थालय-प्रक्रिया' (*Library manual*) नामक यह ग्रन्थ नगर एवं ग्राम ग्रन्थालयों के साधारण कार्यकर्ताओं के लिए मुख्यतया उद्दिष्ट है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम अध्याय में ग्रन्थालय समितियों के सदस्य, स्थानीय संस्थाएं तथा जनसाधारण का भी उल्लेख किया गया है। इसमें 'ग्रन्थालय पञ्चसूत्री' का भी निरूपण किया गया है। उनके द्वारा आधुनिक ग्रन्थालयों के लिए मुख्यत: अपेक्षित विशिष्ट दृष्टिकोण का सिंहावलोकन न्याय से निष्कर्ष निकाला गया है। इस अध्याय में संक्षिप्त रूप में हमारे मौलिक ग्रन्थ 'ग्रन्थालय शास्त्र पञ्चसूत्री' (*Five laws of library science*) का सार बतलाया गया है।

द्वितीय अध्याय में अनुलय सेवा नामक ग्रन्थालय के प्राणभूत कार्य का विस्तृत प्रतिपादन किया गया है। इसमें ग्रन्थालय के अन्तिम लक्ष्य का वर्णन है। यह लक्ष्य यही है कि प्रत्येक पाठक को उसके अपने ग्रन्थ प्राप्त करने में तथा प्रत्येक ग्रन्थ को उसके अपने पाठक प्राप्त करने में सहायता दी जाए। साथ ही वह अत्यन्त व्यक्तिगत तथा सुखदायक रीति से की जानी चाहिए। इस कार्य में लेशमात्र भी समय का अपव्यय न होना चाहिए। यह अध्याय हमारे 'अनुलय सेवा तथा वाङ्मयसूचि' (*Reference service and bibliography*) नामक ग्रन्थ का अति संक्षिप्त सार कहा जा सकता है।

तृतीय अध्याय अधिक विस्तृत है। कारण इसमें अध्ययन के लिए ग्रन्थों के लेन-देन की दैनिक परिपाटी बताई गई है। हमारे 'ग्रन्थालय सञ्चालन' (*Library administration*) नामक ग्रन्थ के अध्याय ६ के बहुत बड़े अंश का इसमें प्रतिपादन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में 'ग्रन्थालय सञ्चालन' (*Library administration*) के अन्य अनेक भागों से अंश उद्धृत किये गए हैं। इसमें निम्नलिखित विषयों का वर्णन है :—

ग्रन्थवरण, ग्रन्थ-आदेश सामयिक कार्य, परिग्रहण, प्रदर्शन कार्य, आय-व्यय लेखन, अनुयोग तथा भाण्डार।

पञ्चम अध्याय में ग्रन्थालय वर्गीकरण बताया गया है। लघु ग्रन्थालयों के संग्रहों में साधारणतः आने वाले विषयों के लिए बनी-बनाई वर्ग संख्याएं इसमें दी गई हैं। वर्गसंख्याओं का निर्माण हमारे 'द्विबिन्दु वर्गीकरण' (Colon classification) तथा मेलविल ड्यूई के 'दशमलव वर्गीकरण (Decimal classification) दोनों के अनुसार किया गया है।

षष्ठ अध्याय ग्रन्थालय सूची से सम्बद्ध है। इसमें कुछ उदाहरणों द्वारा सूचीकरण कला दिखाई गई है। हमारे 'अनुवर्ग सूची कल्प' (*Classified catalogue code*) की कुछ मूलभूत धाराओं का निरूपण भी किया गया है।

सप्तम अध्याय में ग्रन्थालय भवन और कार्यालय के उपयोग में आने वाली वस्तुओं का वर्णन है।

अष्टम अध्याय में ग्रन्थालय शास्त्र की हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली दी गई है।

प्रस्तुत ग्रन्थ का अंग्रेजी रूप इसी उद्देश्य से लिखा गया था कि भारत की मुख्य भाषाओं में अनुवाद-कार्य के लिए उसे आधार बनाया जा सके। महात्मा गांधी का ही यह प्रताप है कि आज स्वतन्त्र भारत के स्वतन्त्र वातावरण में हम अपने को पा रहे हैं। आज यह भली भांति मान लिया गया है कि विचारशील लोगों में विदेशी भाषा को माध्यम बनाना तथा जनसाधारण में ज्ञान के विस्तार के लिए उसका उपयोग करना अति अधिक मूर्खता से भरा कार्य था। चिन्तन कार्य के लिए विदेशी भाषा के उपयोग करने का एक महान् दुष्परिणाम यह हुआ है कि हमारी भारतीय भाषाएं निर्जीव और पङ्गु बन गई हैं। गत एक शताब्दी में अनेक विचार प्रकट हुए हैं। उन्हें व्यक्त करने के लिए हमारी भाषाओं में परिभाषाएं ही नहीं हैं। और यह तो स्पष्ट ही है कि ग्रन्थालय शास्त्र इसी वर्तमान काल का सद्योजात विषय है। हम कई वर्षों से एक ऐसे साधन के आविष्कार में लगे हुए हैं जिससे कम से कम ग्रन्थालय शास्त्र के सम्बन्ध में उचित व्यवस्था की जा सके और समरूप परिभाषाओं के द्वारा भारतीय भाषाओं में कार्य का आरम्भ किया जा सके। वस्तुतः इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हमारे मौलिक ग्रन्थ प्राचीन सूत्र-प्रणाली के अनुसार अनूदित किये जा

रहे हैं। इन सूत्रों के साथ संस्कृत वार्तिक तथा हिन्दी टीका भी होगी। इन ग्रन्थों में मानित परिभाषाएं दी जाएंगी। अष्टम अध्याय में दी हुई पारिभाषिक शब्दावली उन हिन्दी परिभाषाओं को निरूपित करती है जिन्हें हमने अस्थायी रूप से स्वीकृत किया है। हम उन्हें अस्थायी इसी लिए कह रहे हैं कि इस विषय में अन्तिम स्थायिता नहीं हो सकती। और यह तो निश्चित ही है कि कम से कम प्रथम प्रयत्न में तो नहीं ही हो सकती। जो उत्साही व्यक्ति हमारे इस ग्रन्थ को किसी भारतीय भाषा में अनूदित करना चाहें वे इस शब्दसूची का उपयोग कर सकते हैं। यदि अनुवादक अपनी भाषाओं में उन परिभाषाओं का उपयोग करें, जो हमारी सूची में दी हुई संस्कृत परिभाषाओं के समरूप हों, तो वे भारत के समस्त ग्रन्थालयों के लिए एकरूप ग्रन्थालय परिभाषाओं के निर्माण में बहुत बड़ी सहायता पहुंचाएंगे। हमारी यह अभ्यर्थना है कि 'अवगिल' के माध्यम द्वारा अथवा साक्षात् पत्र-व्यवहार द्वारा इन परिभाषाओं के विषय में चर्चा की जाए। इस सम्बन्ध में 'अवगिल' के प्रथम संपुट में चर्चित परिभाषोपसूत्रों को ध्यान में रखना चाहिए। प्रस्तुत ग्रन्थ को भाषान्तर करने की अनुमति प्राप्त करने के लिए भारतीय ग्रन्थालय संघ से मांग करनी चाहिए।

अध्याय १

ग्रन्थालय शास्त्र पञ्चसूत्री

ग्रन्थालय के कार्य को जानने के लिए तथा उसे भली भांति करने के लिए यह आवश्यक है कि हम ग्रन्थालय के उद्देश्य को जानें और उसका स्मरण रखें। ग्रन्थालय एक सामाजिक संगठन है। उसका यह दायित्व है कि वह ग्रन्थों के द्वारा अनुप्रेरणा, अनुसूचना तथा विनोद प्रस्तुत करे। ग्रन्थ स्वयं भावों के वाहक हैं। वे भाव अतीत तथा वर्तमान दोनों काल के हो सकते हैं। ग्रन्थ की मानव से तुलना लाभदायक होगी। इसके आत्मा, सूक्ष्मदेह तथा स्थूलदेह तीनों हैं। वे क्रमशः ये हैं :—

(१) प्रतिपाद्य विषय;

(२) भाषा एवं शैली; और

(३) कागज, छपाई तथा आवरण।

इस प्रकार ग्रन्थ मूर्तीकृत भाव हैं। यह कहा जा सकता है कि भाव को भी हमने इस प्रकार बदल लिया है कि उसे इधर-उधर ले जाया जा सके। यह ठीक उसी प्रकार किया गया है जिस प्रकार हम बिजली के शुष्क कोषों को परिवर्तित कर लेते हैं। ग्रन्थालय इस प्रकार के शुष्क कोषों के समूह का शक्ति प्रतिष्ठान है। अपनी सफलता के लिए ग्रन्थालय के लिए यह आवश्यक है कि वह उन ग्रन्थों का भावों के रूप में पुनः परिवर्तन कर ले। इस प्रकार के रूपान्तर के लिए जो कुछ भी किया जा सकता है उस सब की समष्टि ही ग्रन्थालय का कार्य है।

हमने अपने ग्रन्थ 'ग्रन्थालय शास्त्र पञ्चसूत्री' में (*Five Laws of library science, 1931*) में यह बताया है कि इस रूपान्तर को

किस भावना के साथ करना चाहिए। वह भावना निम्नलिखित पांच सूत्रों में निहित है :—

(१) ग्रन्थ अध्ययनार्थ हैं।

(२) ग्रन्थ सर्वार्थ हैं।

(३) प्रतिग्रन्थ अध्येता हो।

(४) पाठक का समय बचे।

(५) ग्रन्थालय वर्धिष्णु है।

हमारे आदरणीय बन्धुवर स्व० महामहोपाध्याय आचार्य एस० कुप्पुस्वामी शास्त्री महोदय ने उपर्युक्त पांच सूत्रों को संस्कृत पद्यों में निबद्ध किया है।

कोशवान् हि सदाचार्यः पञ्चसूत्रीपरायणः।
पुस्तानि पठितुं तानि सर्वेभ्यः स्वं स्वमाप्नुयुः॥
पठन्तं समयं तस्य शेषेत् कोशः सदापि च।
वर्धमानः स चिन्मूर्तिः पञ्चसूत्रीं विदन्त्विमाम्॥

इन दो अनुष्टुप् पद्यों को एक आर्या में भी गाया जा सकता है।

ग्रन्थोऽध्येतुं, ग्रन्थो विश्वस्मै, प्रतिग्रन्थमध्येता।
कालोऽध्येतुः शेष्यः, सोऽयं वर्धिष्णुरवयवी नित्यम्॥

११ प्रथम सूत्र

इन सूत्रों से हमें कुछ अनुमान करने में सहायता प्राप्त होती है। प्रथम सूत्र से हम यह अनुमान करते हैं कि ग्रन्थालय में ग्रन्थों को मंगवाना, संघटित करना तथा उन्हें रखना शोभा-कार्य के उद्देश्य से नहीं किया जाता। यहां अद्भुत-आलय के समान उनका संरक्षण नहीं किया जाता। प्रत्युत उन कार्यों का उद्देश्य यह होता है कि वे ग्रन्थ पढ़े जाएं, समझे जाएं तथा जनता के द्वारा व्यवहार में लाए जाएं। इसका अर्थ यह होता है कि नगर ग्रन्थालय में इस प्रकार के ग्रन्थ न खरीदे जाएं जो अद्भुत अथवा अलभ्य होने के कारण अति-अधिक मूल्य के हों। वह सर्वजन ग्रन्थालय के धन का अपव्यय ही होगा। साथ ही ग्रन्थों का दिखाव ऐसा हो कि वे पाठकों को आमन्त्रित करें और पाठक उन्हें आकांक्षा के साथ उठाएं। ग्रन्थों का आकार-प्रकार,

उनका रूप ऐसा हो, उनकी छपाई-सफाई ऐसी हो कि वे भली भांति उपयुक्त किए जा सकें तथा सुखपूर्वक पढ़े जा सकें। इसका अर्थ यह होता है कि ग्रन्थालय में ग्रन्थों का वरण बड़ी सावधानी से किया जाए। उन्हें स्वच्छ एवं सुन्दर रखा जाए तथा उन्हें अच्छी अवस्था में दिखाया जाए।

१३ द्वितीय सूत्र

द्वितीय सूत्र यह बताता है कि ग्रन्थालय में किस प्रकार के ग्रन्थ खरीदे जाने चाहिएं। वह यह सूचित करता है कि ग्रन्थालय अपने ग्राहकों की अभीष्ट वस्तुओं की पूरी जानकारी रखे। उदाहरणार्थ, यदि कोई ग्रन्थालय सर्वजन ग्रन्थालय है तो उसका यह कर्तव्य है कि उस क्षेत्र की जनता के जो व्यवसाय हों उनसे सम्बद्ध ग्रन्थों की व्यवस्था की जाए। यदि वह ग्रन्थालय एक विद्यालय ग्रन्थालय है तो पाठ्यक्रम से सम्बद्ध ग्रन्थों के मंगाने ही से उसकी इष्ट सिद्धि न हो जाएगी, प्रत्युत समस्त प्रकार के कला-कौशल, ज्ञान-विज्ञान, इतिहास-चरित, यात्रा आदि सभी विषयों से सम्बद्ध ग्रन्थ रखने पड़ेंगे। कारण यह है कि बच्चों का औत्सुक्य अनन्त होता है। सर्वजन ग्रन्थालय तथा विद्यालय ग्रन्थालय दोनों प्रकार के ग्रन्थालयों में उपरिनिर्दिष्ट प्रकार के ज्ञानवर्धक ग्रन्थ तो होने ही चाहिएं, साथ ही साथ ऐसा साधारण साहित्य भी होना चाहिए जो मनोविनोद कर सके।

यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि उस साहित्य से किसी प्रकार का हानिकारक परिणाम न हो, जैसा कि ताश खेलने आदि से होता है। ग्रन्थालय में ऐसे ग्रन्थ भी होने चाहिएं जो आध्यात्मिक जीवन सम्बन्धी जिज्ञासा उत्पन्न करें, उसका समाधान करें तथा अध्यात्मवाद की ओर चित्त को आकृष्ट करें। द्वितीय सूत्र यह भी बताता है कि ग्रन्थों का भाषा तथा शैली रूप सूक्ष्म देह भी पर्याप्त मात्रा में भिन्न-भिन्न प्रकार का होना चाहिए। ग्रन्थालयों में ऐसे ग्रन्थ होने चाहिएं जिन्हें साधारण से साधारण व्यक्ति भी समझ सके और साथ ही साथ असाधारण व्यक्ति भी समझ सके। परिपक्व बुद्धि वाला वृद्ध तथा अपरिपक्व बुद्धि वाला शिशु—दोनों ही समझ सकें। साथ ही बीच की समस्त कोटियों के समस्त व्यक्ति समझ सकें। द्वितीय सूत्र ग्रन्थों के भौतिक शरीर के सम्बन्ध में भी कुछ निर्देश करता है। वह

निर्देश यह है : ग्रन्थालय में बच्चों के लिए ऐसे ग्रन्थ खरीदने चाहिएं जिनके अक्षर बड़े हों तथा कागज टिकाऊ हो। यह एक उदाहरण है। उसी प्रकार और दूसरों के भी सम्बन्ध में समझ लेना चाहिए। कार्य-भार ग्रन्थालय में जो ग्रन्थ खरीदे जाएं वे उपजीव्य संस्था द्वारा किए जाने वाले कार्यभार से निकट सम्बन्ध रखते हों।

१३ तृतीय सूत्र

जब हम अपना ध्यान तृतीय सूत्र की ओर खींचते हैं तो उसे और भी अधिक कठोर पाते हैं। वह घोषणा करता है कि प्रत्येक ग्रन्थ का अन्तिम लक्ष्य—चरम स्थान—पाठक का हाथ है। यदि हम इस बात को ध्यान में लाएं कि ग्रन्थ अचेतन अवस्था में रहता है, वह स्वयं होकर पाठक के हाथों में कूद नहीं पड़ सकता, और न उसे बोलने की ही शक्ति है तो हम इस तृतीय सूत्र से बहुत कुछ अनुमान कर सकते हैं। ग्रन्थों को उनके पाठकों तक ले जाना या पाठकों को उन ग्रन्थों तक पहुंचाना एकमात्र ग्रन्थालयी पर निर्भर करता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जो भी ग्रन्थ पाठक के बिना नित्यप्रति ग्रन्थालय के फलक पर पड़े रहने के लिए बाध्य होता है और अपने पाठक को नहीं पाता है वैसा प्रत्येक ग्रन्थ ग्रन्थालयी को निरन्तर अभिशाप देता रहता है। उस अभिशाप से बचने के लिए ग्रन्थालयी को चाहिए कि वह जनसमाज में भ्रमण करता रहे और पाठकों की मनुहार करता रहे। उसे चाहिए कि संभाव्य पाठकों को नए ग्रन्थों के आने की सूचना दे तथा समय समय पर प्राचीन उपेक्षित ग्रन्थों के रहने की भी जानकारी कराए। इस कार्य के लिए वह ग्रन्थालय-पत्रिका को साधन बना सकता है। वह पत्रिका लिखित हो, टाइप की हुई हो या छपी हो—यह ग्रन्थालय साधनों पर निर्भर रहेगा। दूसरा उपाय यह है कि उन ग्रन्थों की सूचना स्थानीय समाचार-पत्रों में दी जाए। तीसरा उपाय यह है कि जहां कहीं जनता एकत्रित हो वहां घोषणाएं की जाएं। ग्रन्थालय जनता की क्या सेवा कर सकता है इसका भी विज्ञापन करना चाहिए। इसके लिए भी समाचारपत्रों में घोषणाएं करनी चाहिएं। जनसमाज की सभाओं में व्याख्यान देने चाहिएं। हस्त सूचनाओं को बांटना चाहिए। कारखानों में, शिक्षा-संस्थाओं में तथा क्रीड़ागृहों में भी स्वयं जाना चाहिए। यहां तक कि

अलग अलग घरों में भी जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जनता को ग्रन्थालय की ओर आकृष्ट करने के लिए सब प्रकार के संभव विज्ञापन-साधनों को उपयोग में लाना चाहिए। ग्रन्थालयी को जब तक इस बात का विश्वास न हो जाए कि उस ग्रन्थालय के घेरे का प्रत्येक व्यक्ति उस ग्रन्थालय का नियमित पाठक अथवा आगन्ता नहीं बन गया है तब तक उसे चैन न लेनी चाहिए।

वास्तविक दृष्टि से देखा जाए तो इसका यह अर्थ होता है कि उसे अपने प्रचार कार्य में सदा सावधान--जागरूक--रहना चाहिए। ग्रन्थ कृत्रिम वस्तु हैं। जनसाधारण ग्रन्थों का अध्ययन स्वयं होकर शीघ्र नहीं करते। उस अध्ययन का आरम्भ कराना पड़ता है। किसी विशिष्ट जनसमाज के वर्ग को ग्रन्थ-अनुशीलन का अभ्यासी बनाने के लिए वर्षों का समय अपेक्षित होता है। उदाहरणार्थ, हम क्रॉयडन नाम के ब्रिटिश नगर का उल्लेख कर सकते हैं। वहां के ग्रन्थालय को कार्यशील रहते हुए आज पचास वर्ष बीत चुके हैं। उसका कार्य बड़ी सफलता तथा समर्थता के साथ होता आया है। क्रॉयडन की जनता पूर्णतया साक्षर एवं शिक्षित है। तथापि वहां का ग्रन्थालय, अपने जीवन के ५० वर्षों में अब तक जनता के केवल ६० प्रतिशत भाग को नियमित आगन्ता बनाने में समर्थ हो सका है। यह ध्यान रखना चाहिए कि यह निःशुल्क ग्रन्थालय है। उसमें ग्रन्थों को घर ले जाने के लिए जमानत के रूप में कुछ भी देने की आवश्यकता नहीं होती। प्रचार कार्य के क्षेत्र में भी कम उद्योग नहीं किए गए हैं। तथापि ४० प्रतिशत जनता को अब भी ग्रन्थालय में लाना बाकी है। भारतीय ग्रन्थालयों को इससे सावधान हो जाना चाहिए। हमारे भारतीय बन्धु आज अधिकांश में निरक्षर हैं। जो लोग साक्षर हैं भी, उनमें भी अध्ययन का अभ्यास नहीं के बराबर है। न तो विद्यालय में, न कार्यालय में और न घर में ही—कहीं भी उन्हें इस बात का अभ्यास नहीं हो पाता कि अनुसूचन, मनोविनोद अथवा अनुप्रेरणा के लिए ग्रन्थों का अवलोकन या स्पर्श कर सकें। और न उन्हें यही अवसर मिलता है कि क्रॉयडन की जनता के समान अन्य लोगों को अध्ययन करते हुए देखें। इसके अतिरिक्त यह बात है कि आज भारत में जिस प्रकार के ग्रन्थ उत्पादित होते हैं वे इंग्लैण्ड के ग्रन्थों की तुलना

में कलामात्र भी आकर्षक नहीं हैं। साथ ही यह भी बहुत बड़ी बाधा है कि हमारे यहां सब प्रकार के कला कौशलों से सम्बद्ध ग्रन्थ नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, सांप्रत विचारधारा को व्यक्त करने वाले ग्रन्थों का पर्याप्त संख्या एवं प्रकार में अस्तित्व नहीं है। इसके बिना जनता को ग्रन्थालयों में आकृष्ट नहीं किया जा सकता। ये सब सुविधाएं क्रॉयडन के ग्रन्थालय को प्राप्त हैं।

उपरिनिर्दिष्ट बातें यह बताती हैं कि मनुहार तथा प्रचार-कार्य के बिना हमारी जनता को ग्रन्थाभ्यासी बनाना अत्यन्त कठिन है; और इस बाधा को दूर किए बिना कोई गति नहीं है। हमारे अधिकारी या ग्रन्थालयी इस बात का विश्वास न कर बैठें कि ग्रन्थालय के लिए एक भवन बना देने से और उसे आलमारी और ग्रन्थों द्वारा सजा देने मात्र से उनके कर्तव्य की इतिश्री हो जाती है। यदि हमारी जनता ग्रन्थालय में आने का अभ्यास नहीं डालती तो वे उसका दोष इस बात पर न लगाएं कि जनता स्वयं ग्रन्थों की उपेक्षा करती है। वस्तुतः दोष जनता का नहीं है। दोष है ग्रन्थालयियों का और ग्रन्थालय-अधिकारियों का। उनका यह कर्तव्य है कि प्रत्येक ग्रन्थ के लिए उसके पाठक को प्राप्त करने के हेतु हर संभव उपायों का सहारा लें। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए, प्रचार-कार्य के प्रत्येक प्रकार के साधनों द्वारा समाज के प्रत्येक व्यक्ति को ग्रन्थालय में आने के लिए बाध्य करें। इस कार्य में सफल होने के लिए कई वर्ष लगेंगे। धैर्य, अध्यवसाय तथा विश्वास की नितान्त आवश्यकता है।

१४ चतुर्थ सूत्र

तृतीय सूत्र ग्रन्थालय-अधिकारियों पर तथा ग्रन्थालयियों पर इस महत्त्वपूर्ण कर्तव्य का आरोप करता है कि वे अपने क्षेत्र की समस्त जनता को ग्रन्थालय में आने के लिए प्रवृत्त करें। उसके बिना प्रत्येक ग्रन्थ के लिए उसका पाठक मिलने की संभावना नहीं हो सकती। उधर तृतीय सूत्र तो इस कर्तव्य का आरोप करता है और इधर चतुर्थ सूत्र और भी अधिक महत्त्वपूर्ण कर्तव्य आरोपित करता है। वह कर्तव्य यह है कि जो व्यक्ति एक बार भी ग्रन्थालय में आ जाए वह सदा के लिए उस ग्रन्थालय का ग्राहक बना लिया जाए। उसकी ग्राहकता को स्थायी बनाए रखने के लिए एक ही उपाय है। वह उपाय

यही है कि प्रत्येक पाठक की इस प्रकार सेवा की जाए और उसे इस प्रकार सन्तोष दिया जाए कि वह सदा के लिए ग्रन्थालय का प्रेमी बन जाए। उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति सच्चे रूप में और तत्परता के साथ की जानी चाहिए। ग्रन्थालय में पुनः पुनः आने के लिए एक प्रकार के मानसिक उल्लास की आवश्यकता होती है। यदि उसे जीवित रखना है तो पाठक का समय लेशमात्र भी नष्ट न होने देना चाहिए। इसकी सिद्धि के लिए ग्रन्थालय-अधिकारियों को चाहिए कि पर्याप्त संख्या में अनुलय-ग्रन्थालयियों की व्यवस्था करें। अनुलय-ग्रन्थालयी को चाहिए कि वह प्रसन्न-मुख-मुद्रा के साथ ग्रन्थालय में आने वाले प्रत्येक आगन्ता का स्वागत करे, उसका सत्कार करे। उसे चाहिए कि मित्रतापूर्वक, प्रसन्नता के साथ प्रत्येक आगन्ता की सहायता करे; जिससे वह अपनी प्रत्येक आवश्यकता को व्यक्त कर सके। उसे चाहिए कि जो ग्रन्थ तथा सामयिक उस पाठक की आवश्यकताओं को पूर्ण करें उनसे उसका संयोग करा दे। उसका यह कर्तव्य है कि पाठक अपने अभीष्ट ज्ञातव्य विषय की खोज में जब तक लगा रहे तब तक वह उसके साथ निरन्तर कार्य करता रहे। वह पाठक को तब तक न छोड़े जब तक उस पाठक को उसकी इष्ट वस्तु न मिल जाए।

१४१ अनुलय ग्रन्थालयी

अपने कर्तव्य को सफलतापूर्वक पूर्ण करने के लिए अनुलय ग्रन्थालयी के दो विशिष्ट गुण होने चाहिएं। उसे समाज सेवा के लिए आन्तरिक प्रवृत्ति होनी चाहिए। उसे मानवता से प्रेम होना चाहिए। उसे इस बात में श्रद्धा होनी चाहिए कि ग्रन्थों में मानवता की सहायता करने की शक्ति है। ज्ञान-जगत् के प्रत्येक विभाग का उसे विस्तृत परिचय होना चाहिए। उसे अपने ग्रन्थालय के संग्रह का पूर्ण आन्तरिक परिज्ञान होना चाहिए। उसे इस बात का भी पूरा पूरा ज्ञान होना चाहिए कि फलकों पर ग्रन्थ किस प्रकार व्यवस्थित किए गए हैं। साथ ही यह भी ज्ञात रहना चाहिए कि ग्रन्थालय-सूची में किस-किस प्रकार की जटिलताएं हैं। ग्रन्थालय में फलकों पर ग्रन्थ इस प्रकार रखे हों कि उनका क्रम उनके उपयोग में सहायक हो। ग्रन्थालय की सूची भी इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर बनाई जाए। इन्हीं दो साधनों की

सफलता पर, इन्हीं की श्रेष्ठता पर अनुलय सेवा की सफलता और श्रेष्ठता निर्भर करती है। इन दोनों की सिद्धि के बिना अनुलय सेवा की सिद्धि नहीं हो सकती।

१४२ आन्तरिक समय

पाठक के मानसिक उल्लास की रक्षा के लिए केवल यही पर्याप्त नहीं है कि तत्परता के साथ, व्यक्तिगत सेवा के द्वारा, उसका समय बचाया जाए। अपितु यह भी आवश्यक है कि उसे कार्य-रहित होकर एक क्षण के लिए भी प्रतीक्षा करने के लिए बाध्य न होना पड़े। ऐसा अवसर ही न आने दिया जाए जब उसे यह प्रतीत हो कि उसका समय नष्ट हो रहा है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि चतुर्थ सूत्र पाठक के बाह्य समय को बचाने की अपेक्षा उसके आन्तरिक समय को बचाना कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण मानता है और इसी बात पर अधिक जोर देता है। हम उसका यहाँ एक निदर्शन उपस्थित करना चाहते हैं :—

मैं ग्लासगो नगर के महान् केन्द्रीय ग्रन्थालय की कार्य-प्रणाली का अध्ययन कर रहा था। मैंने देखा कि ग्रन्थ की प्रत्येक प्रार्थना-चिटिका पर एक घड़ी के द्वारा छाप लगाई जा रही थी। वह घड़ी ऐसी थी जिसका मुख भाग तथा घण्टे और मिनिट की सुइयाँ रबर की बनी हुई थीं। प्रत्येक प्रार्थना-चिटिका पर उस घड़ी को वेग के साथ दबाना पड़ता था। उस घड़ी का जीवन कितना अल्पकालीन होगा तथा उस ग्रन्थालय को उस प्रकार की घड़ी को खरीदने के लिए कितना अधिक धन खर्च करना पड़ता होगा इसका हम अनुमान लगा सकते हैं। मैंने ग्रन्थालयी से पूछा कि वे इस प्रकार अपव्यय क्यों कर रहे थे। कुछ समय के बाद मुझे निम्न निर्दिष्ट दृश्य देखने में आया। उसने यह प्रमाणित कर दिया कि वह अपव्यय न था, बल्कि एक अनिवार्य आवश्यकता थी। उसका कारण यह था कि इस घटना में उल्लिखित पाठक के मन में समय के आन्तरिक ज्ञान ने एक प्रकार का भ्रम उत्पन्न कर दिया था। जब तक वह पाठक अपने भ्रम को न पहचान ले तब तक उसके मानसिक उल्लास की रक्षा नहीं हो सकती।

एक पाठक ने आरोपक से कठोर शब्दों में प्रतिवाद किया कि

उसे अपने ग्रन्थ के लिए युगों तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। उसकी आंखें लाल थीं और वह क्रोध में मतवाला हो रहा था। वह इस बात की प्रतिज्ञा कर रहा था कि वह फिर कभी ग्रन्थालय में नहीं आएगा। उस ग्रन्थालय ने उसका अमूल्य समय नष्ट किया था। मैं तथा ग्रन्थालयी उसके पास गए। उससे पूछा गया कि उसे कितनी देर प्रतीक्षा करनी पड़ी। वह बोला—कम से कम चौथाई घण्टा। इतने में ग्रन्थ आ गया। पाठक से कहा गया कि वह ग्रन्थ के पाने के समय को अङ्कित कर ले। उसके बाद उसे यह बताया गया उसे केवल पांच ही मिनिट तक प्रतीक्षा करनी पड़ी थी। "आप यह कैसे कह सकते हैं ?", वह गरज कर बोला। उसने कहा, "मुझे पूरा विश्वास है कि मैंने कम से कम पन्द्रह मिनिट तक प्रतीक्षा की है"। उसकी प्रार्थना-चिटिका पर उस घड़ी द्वारा लगाई हुई रबर-मुद्रा उसे दिखाई गई। अब उसे विश्वास हो गया कि वह भ्रम में था। उस भ्रम के उत्पन्न होने का कारण भी यह था कि उसे निष्कार्य रहकर प्रतीक्षा करनी पड़ी थी। उसने वचन दिया कि वह उस ग्रन्थालय का सदा संरक्षक बना रहेगा।

१४३ बाह्य समय

आधुनिक ग्रन्थालय प्रणाली में आन्तरिक समय सम्बन्धी भ्रम को सर्वथा दूर कर दिया जाता है। साथ ही बाह्य समय को भी दो नई युक्तियों द्वारा पर्याप्त मात्रा में बचाया जाता है। एक युक्ति का नाम है—'आसङ्ग'। इसका तात्पर्य यह है :—प्रत्येक पाठक को इतनी छूट और सुविधा दी जाए कि वह बिना किसी रुकावट के चयन-प्रकोष्ठ में जा सके। वहाँ जाकर ग्रन्थ-फलकों तक पहुंच सके तथा अपने मनचाहे जिस किसी ग्रन्थ को उलट पलट कर देख सके। इस कार्य में उसे लेशमात्र भी बाधा न हो। उसे यही प्रतीत हो कि वह मानों अपने घर के निजी संग्रह में ही खोज कर रहा है। दूसरी युक्ति का नाम है—ग्रन्थों के आरोपण के लिए 'ग्रन्थ-चिटिका—पाठक-चिटिका—रीति'। इस रीति के अनुसार यह व्यवस्था की जाती है कि पाठक को अपेक्षित ग्रन्थ के लिए प्रार्थनापत्र भरने में समय का अपव्यय न करना पड़े। साथ ही आरोपण लेखक को भी उस ग्रन्थ के अथवा उस पाठक के नाम को लिखने की आवश्यकता न पड़े।

आसङ्गरूपी प्रथम युक्ति के द्वारा इस बात का प्रबन्ध होता है कि पाठक जब तक अपने ग्रन्थ को खोजकर निकाले तब तक वह निरन्तर व्यस्त रहे। उस समय उसको यह भ्रम न हो पाए कि उसका समय नष्ट हो रहा है, अर्थात् उसके आन्तरिक समय का नाश हो रहा है। बाह्य समय का अपव्यय भी उपर्युक्त रीति के द्वारा शून्य अवस्था तक पहुंचा दिया जाता है।

१४२१ आसङ्गार्थ सुरक्षाएं

आसङ्ग-प्रणाली की व्यवस्था के लिए यह आवश्यक है कि ग्रन्थालय भवन में तथा उसके विभिन्न भागों में सुरक्षा की व्यवस्था की जाए। सब प्रवेश तथा निर्गम केवल एक ही केन्द्र-बिन्दु पर होने चाहिएं। वह केन्द्र-बिन्दु वही है जहाँ ग्रन्थालय का आरोपण-आधार रहता है। प्रवेश तथा निर्गम द्वारों में यान्त्रिक व्यवस्था होती है। आरोपण-आधार के अन्तर्भाग में बैठा हुआ कर्मचारी अपने पैरों द्वारा उसका नियन्त्रण कर सकता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि कोई भी व्यक्ति आरोपण-आधार सहायक की अनुमति के बिना न तो ग्रन्थालय में प्रवेश कर सके और न बाहर जा सके। उसे इस बात का सन्तोष कर लेना चाहिए कि कोई भी पाठक उस निर्गम-द्वार से तब तक बाहर न जा सके जब तक उसका भली भांति परीक्षण न कर लिया जाए। उसे इस बात का सन्तोष कर लेना चाहिए कि कोई भी पाठक अनजान में अथवा दुर्बुद्धिपूर्वक किसी ग्रन्थ अथवा अन्य पाठ्य सामग्री को अपने साथ बाहर नहीं ले जा रहा है। अन्य सब खिड़कियाँ, दरवाजे तथा अन्य खुले भाग महीन जालियों द्वारा सुरक्षित कर दिए जाएं; जिससे अनधिकृत रूप में ग्रन्थों को बाहर न ले जाया जा सके। यह भी आवश्यक है। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि आसङ्ग पद्धति का अर्थ ग्रन्थालय में पूर्ण स्वतन्त्रता होता है, किन्तु प्रवेश तथा निर्गम के स्थानों पर कठोरतम नियन्त्रण भी होता है। अनुलय-ग्रन्थालयियों को चयन प्रकोष्ठ में यह कार्य दिया जाता है कि वे ग्रन्थों और पाठकों के बीच सम्बन्ध स्थापित करें। किन्तु उनका यह भी कर्तव्य होता है कि वे भरपूर देखभाल करते रहें। इसका एक लाभ यह होता है। आसङ्ग ग्रन्थालय में पाठकों को जो सुविधाएं दी जाती हैं उनके कारण कदाचित् उन्हें

दुष्कार्य करने का प्रलोभन हो, किन्तु वह न हो सके। कारण अनुलय-ग्रन्थालयी की उपस्थिति उनमें इस प्रकार के प्रलोभन को उत्पन्न न होने देगी। इस प्रकार इस देखरेख से पाठक उन दुष्प्रवृत्तियों से विरत किए जा सकेंगे। किन्तु इससे भी अधिक विरति उस सेवा से उत्पन्न होगी जो अनुलय ग्रन्थालयी के द्वारा प्रसन्नता और दया के साथ सर्वदा की जाएगी। वह सेवा ऐसी होगी जिसके परिणाम-स्वरूप पाठकों में अधिकारिता तथा स्वत्व की भावना उत्पन्न होगी।

१४४ बाह्य समय

आसङ्ग ग्रन्थालय में पाठक के बाह्य समय को बचाने के लिए अनेक उपाय काम में लाए जाते हैं। उनमें एक यह है। ग्रन्थों को एक ऐसे सहायक क्रम में व्यवस्थित किया जाए कि पाठक का बाह्य समय कम से कम खर्च हो। किसी एक विशिष्ट विषय के सभी ग्रन्थ एक साथ एक स्थान पर एकत्रित किए जाने चाहिएं। इस प्रकार के विशिष्ट विषयों के विभिन्न समूह ज्ञातेय क्रम के अनुसार एक दूसरे का अनुगमन करें। इसकी सिद्धि के लिए स्वयं विशिष्ट विषय भी ज्ञातेय क्रम का अनुपालन करें। इस प्रकार की व्यवस्था होनी चाहिए। विशिष्ट विषयों का ऐसा व्यवस्थापन, किसी विशिष्ट विषय के ग्रन्थों का परस्पर सहायक व्यवस्थापन तथा विशिष्ट विषय का स्वयं निर्धारण—ये सब वस्तुएं ग्रन्थालय शास्त्र की एक महत्त्वपूर्ण शाखा है। इसे ग्रन्थालय वर्गीकरण कहा जाता है। ग्रन्थालय वर्गीकरण में प्रत्येक ग्रन्थ के लिए उसकी अद्वय क्रामक (क्रमबोधक) संख्या दी जाती है। इसे क्रामक (व्यवस्थापक) संख्या कहते हैं। क्रामक संख्या के दो भाग होते हैं—वर्गसंख्या और पुस्तक संख्या। उदाहरणार्थ, प्रस्तुत ग्रन्थ की वर्गसंख्या २:२५ है। यह संख्या इस ग्रन्थ के आख्या-पत्र-पृष्ठ पर दी हुई है। २:२५ वर्गसंख्या है और उसका अर्थ है—'नगर ग्रन्थालय में कार्य"। भ:१ पुस्तक संख्या है और उसका अर्थ होता है १९५१, जो ग्रन्थ के प्रकाशन का वर्ष है। ग्रन्थ में प्रतिपादित विशिष्ट विषय के नाम का क्रामक संख्याओं में रूपान्तर वर्गसंख्या कहा जाता है। ग्रन्थ के कुछ अन्य तत्त्वों का रूपान्तर पुस्तक संख्या कहा जाता है।

इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए क्रामक संख्याओं से बनी हुई

अङ्कमयी, कृत्रिम, साङ्केतिक भाषा का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार की क्रामक संख्यात्मक कृत्रिम भाषा वर्गीकरण पद्धति कही जाती है। प्रसिद्ध एवं मुद्रित वर्गीकरण की पद्धतियों की तालिका निम्नलिखित है :—

नाम	आविष्कार वर्ष	आविष्कर्ता	आविष्कार देश
१. दशमलव वर्गीकरण	१८७६	मेलविल ड्यूई	संयुक्तराष्ट्र अमेरिका
२. विस्तारशील वर्गीकरण	१८९१	सी. ए. कटर	,,
३. कांग्रेस वर्गीकरण	१९०४	लायब्रेरी ऑफ कांग्रेस	,,
४. विषय वर्गीकरण	१९०६	जे. डी. ब्राउन	ग्रेट ब्रिटेन
५. द्विबिन्दु वर्गीकरण	१९३३	श्री. रा. रंगनाथन	भारत
६. वाङ्मयसूचीय वर्गीकरण	१९३४	एच्. ई. ब्लिस	संयुक्तराष्ट्र अमेरिका

१४५ द्विबिन्दु वर्गीकरण

उपर्युक्त पद्धतियों में द्विबिन्दु ही एक ऐसी वर्गीकरण पद्धति है जिसका भारतवर्ष में आविष्कार हुआ है। जिन क्षेत्रों में अन्य पद्धतियां असफल सिद्ध हो चुकी है, उनमें यह स्वाभाविकतया अतिशक्तिशाली प्रमाणित हुई है। उदाहरणार्थ, भारतीय शास्त्र का उल्लेख किया जा सकता है। आयुर्वेद, सिद्धभेषज प्रणाली, भारतीय भाषा शास्त्र, वैदिक धर्म, हिन्दू, जैन तथा बौद्ध धर्म, भारतीय दर्शन, भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र तथा विधि आदि विषयों के सम्बन्ध में द्विबिन्दु वर्गीकरण प्रौढ़ अवस्था को प्राप्त हो चुका है। इसके अतिरिक्त इस पद्धति में और भी कई विशेषताएं हैं। इसमें अन्य सब पद्धतियों की अपेक्षा कहीं अधिक मात्रा में इस प्रकार के अनेक तत्त्व भरे पड़े हैं जो इस पद्धति के सार्वदेशिक उपयोग में सहायक हो सकते हैं। भारतीय संस्कृति एवं भारतीय ग्रन्थों के योग्य व्यवस्थापन में यह जितनी ही कुशल तथा परिपूर्ण है, उतनी ही कुशल और परिपूर्ण है भारतीय-इतर संस्कृति तथा ग्रन्थों के व्यवस्थापन में। वर्तमान एवं अतीत ज्ञान के व्यवस्थापन में यह जितनी ही पटु है, उतनी ही पटुता के साथ भविष्यत् ज्ञान को भी व्यवस्थापित कर सकती है। यह एक ऐसी विशेषता है जिसके कारण यह अन्य सब पद्धतियों की अपेक्षा

आगे बढ़ जाती है। एक ब्रिटिश ग्रन्थालयी ने इसके सम्बन्ध में यह कहा है कि "प्रत्येक नया विषय अपने साथ अपनी जेब में निजी द्वि-बिन्दु संख्या लेकर प्रकट होता है"। विशिष्ट विषयों के नामों को द्वि-बिन्दु संख्याओं में अनूदित करने का कोष अध्याय ५ में दिया जाएगा।

१४५१ वर्गीकृत व्यवस्थापन का फल

ग्रन्थों का सुवर्गीकृत व्यवस्थापन पाठकों का समय बचाने के द्वारा केवल चतुर्थ सूत्र को ही सन्तुष्ट करता हो यह बात नहीं; प्रत्युत वह ग्रन्थों के उपयोग को भी बढ़ाता है और इस प्रकार प्रथम सूत्र को भी सन्तुष्ट करता है। हां, यह आवश्यक है कि पर्याप्त मात्रा में योग्य दर्शकों की व्यवस्था की जा सके। वे दर्शक विभिन्न प्रकार के होते हैं। सर्वप्रथम पंक्ति दर्शक होते हैं, जो यह बताते हैं कि सम्बद्ध अन्तर्मार्ग के सामने वाले ग्रन्थाधार के खात में कौन ग्रन्थ पाए जा सकते हैं। दूसरा प्रकार खातदर्शकों का होता है, जो यह बताते हैं कि उस खात में कौन कौन से विशिष्ट विषय पाये जा सकते हैं। तीसरे प्रकार के दर्शक फलक-दर्शक होते हैं, जो यह बताते हैं कि उस सम्बद्ध फलक में कौन कौन से विशिष्ट विषय और कौन कौन से ग्रन्थ पाये जा सकते हैं। इन दर्शकों में क्रामक संख्यात्मक कृत्रिम भाषा में विशिष्ट विषयों का रूपान्तर होता है तथा उन विषयों के नाम प्राकृतिक भाषा में भी दिए रहते हैं। इनके अतिरिक्त, ग्रन्थों के पृष्ठ भाग में भी एक दर्शक होता है जिस पर, उस ग्रन्थ की क्रामक संख्या लिखी रहती है। इस प्रकार के सहायक दर्शकों की बहुलता ज्ञानवर्धक होती है। जो पाठक चयन प्रकोष्ठ में ग्रन्थाधारों के बीच भ्रमण करेगा उसके लिए वह बड़ी लाभप्रद होगी। साथ ही वह ग्रन्थों के उपयोग को बढ़ाने में भी सहायक होगी। इतना ही नहीं, उसके और भी अनेक लाभ हैं। कारण, वर्गीकरण पद्धति किसी विशिष्ट विषय के समस्त ग्रन्थों को एक साथ एकत्रित करती है। विशिष्ट विषयों को भी परस्पर इस प्रकार के स्वाभाविक क्रम में व्यवस्थित करती है, जो क्रम उन विषयों के अन्योन्य ज्ञातेय क्रम का समादर करता है। अतएव द्वितीय सूत्र भी सन्तुष्ट हो सकेगा। अर्थात् प्रत्येक पाठक को अपने ग्रन्थ पाने की अच्छी संभावना रहेगी। उदाहरणार्थ, जो पाठक कर-विधान के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना चाहता है, उसे कर-विधान से सम्बद्ध समस्त

ग्रन्थ एक स्थान में एकत्रित मिलेंगे। उनके बाईं ओर जन-अर्थ से सम्बद्ध ग्रन्थ मिलेंगे, जिनमें कर-विधान के अध्याय होंगे। उनके भी और बाईं ओर द्रव्य एवं मुद्राशास्त्र के ग्रन्थ होंगे। उनके और बाईं ओर अर्थ शास्त्र के सामान्य ग्रन्थ होंगे, जिनमें भी कर-विधान के अध्याय होंगे। इन फलकों तक आते समय उसे मार्ग में ऐसे फलक भी मिले होंगे जिनमें इतिहास के ग्रन्थ रखे होंगे। इन ग्रन्थों की उसे आधार-भूमि-अध्ययन के लिए आवश्यकता पड़ी होगी। कर-विधान के उन ग्रन्थों के दाहिनी ओर विशिष्ट करों के ग्रन्थ होंगे। उनके अनन्तर बीमा और उनके भी बाद विभिन्न वस्तुओं के ग्रन्थ होंगे। ग्रन्थों का ऐसा प्रदर्शन, समय का नाश किए बिना, प्रत्येक पाठक को अपने ग्रन्थ प्राप्त करने में सहायता देगा। इतना ही नहीं, इससे यह भी लाभ होगा कि प्रत्येक ग्रन्थ को अपने पाठक प्राप्त करने की संभावना अधिक हो जाएगी।

१४६ ग्रन्थालय सूची

ग्रन्थालय शास्त्र के सूत्रों को सफल बनाने में ग्रन्थालय वर्गीकरण का जितना हाथ है, उतना ही सूची का भी है। महत्त्व की दृष्टि से दोनों समान हैं। उसे इस प्रकार बनाया जा सकता है, और बनाया जाना भी चाहिए, जिससे ग्रन्थों का उपयोग बढ़े। प्रत्येक पाठक को अपने ग्रन्थ पाने में सहायता मिले। प्रत्येक ग्रन्थ को अपने पाठक प्राप्त करने में सहायता मिले। साथ ही पाठक का समय भी बचे। पाठक किसी भी ग्रन्थ को उसके किसी सम्बद्ध मार्ग द्वारा पाने का प्रयत्न कर सकता है। संभव है उसे केवल उसके ग्रन्थकार का ही स्मरण हो, अथवा उस माला का ही स्मरण हो जिसमें वह ग्रन्थ छपा हो। कदाचित् यह भी हो कि संपादक, अनुवादक अथवा टीकाकार जैसे ग्रन्थकार के किसी सहकार का ही स्मरण हो। यह भी संभव है कि उसे इनमें से किसी वस्तु का स्मरण न हो। एकमात्र विषय का ही स्मरण हो। इसका अर्थ यह होता है कि सूची में एक ग्रन्थ को अनेक नामों के अन्दर लिखना चाहिए। वे नाम ग्रन्थकार, संपादक, अनुवादक, टीकाकार आदि सहकार, तथा विषय आदि में से एक, दो या अधिक हो सकते हैं। किसी विशिष्ट ग्रन्थ के सम्बन्ध में जितने भी नाम उपलब्ध होंगे उन सब का उल्लेख करना पड़ेगा। ये सब नाम

प्राकृतिक भाषा में होंगे। अतः यह आवश्यक है कि इस प्रकार के नामों द्वारा आरब्ध होने वाले संलेख उन नामों के द्वारा, जिन्हें हम शीर्षक कहते हैं, अनुवर्ण क्रम में व्यवस्थित किए जाएं। साधारणतः लोगों की यह धारणा होती है कि इस प्रकार के संलेख ही ग्रन्थालय सूची के सर्वस्व हैं। अर्थात् इनके अतिरिक्त सूची में और कुछ नहीं होता। किन्तु यह धारणा मिथ्या है। ये संलेख सुनिर्मित ग्रन्थालय सूची के अर्धांशमात्र होंगे। यह सत्य है कि यह अर्धांश आवश्यक है। किन्तु वह पर्याप्त नहीं है। इसे सूची का अनुवर्ण भाग कहा जा सकता है। कारण इसके संलेख वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किए रहते हैं। दूसरे अर्धांश में ऐसे संलेख होंगे जो वर्गसंख्याओं के द्वारा आरब्ध होंगे। वे वर्गसंख्याएं क्रामक संख्याओं के रूप में व्यक्त विशिष्ट विषयों के नाम होंगे। अन्य शब्दों में यह कह सकते हैं कि वे प्राकृतिक भाषा में न होकर क्रामकसंख्यात्मक, अङ्कमयी, कृत्रिम, वर्गीकरण भाषा में होंगे। प्रत्येक ग्रन्थ के लिए इस प्रकार का एक संलेख होगा। इसमें उस ग्रन्थ का मुख्य विषय निर्दिष्ट होगा। साथ ही साथ और उतने संलेख होंगे, जितने सहायक विशिष्ट विषय उस ग्रन्थ में वर्णित होंगे। प्रथम प्रकार का संलेख उस ग्रन्थ का मुख्य संलेख कहा जाएगा और द्वितीय प्रकार का अन्तर्विषयी। द्वितीय को विषय विश्लेषक भी कहा जाता है। ये सब संलेख क्रामक संख्या और वर्गसंख्या के अनुसार व्यवस्थित किए जाते हैं। कारण उन संलेखों के आरम्भ में—उनकी अग्ररेखाओं में—ये ही संख्याएं होती हैं। इसलिए इस भाग को अनुवर्ग भाग कहा जा सकता है। यह भाग अनुवर्ण भाग की अपेक्षा कहीं अधिक गहन और सूक्ष्म उद्देश्य को पूर्ण करता है।

यदि कोई पाठक किसी विशिष्ट ग्रन्थ की आकांक्षा रखता है तो अनुवर्ण भाग स्वतः उसकी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सहायक होगा। किन्तु, इसके विपरीत, यदि उसका ध्येय कोई एक विशिष्ट विषय है और उसी की खोज में वह ग्रन्थालय में उपस्थित होता है तो उसकी आवश्यकताएं अनुवर्ण भाग के द्वारा पूर्ण नहीं हो सकतीं। यदि सूची उसके सामने उसके इष्ट विषय से सम्बद्ध संपूर्ण पाठ्य सामग्री का परिपूर्ण तथा परिसम्बद्ध विश्व दृश्य उपस्थित करे तभी उसकी आकांक्षाएं पूर्ण रीति से शान्त हो सकती हैं। इतना ही नहीं, उस

विशिष्ट विषय के समस्त उपविषय तथा वे व्यापक विषय जिनका वह उपविषय है, वे सब विषय सामने उपस्थित होने चाहिए। इसके अतिरिक्त, बहुत कम पाठक ऐसे होते हैं जो अपने उद्दिष्ट विशिष्ट विषय का ठीक ठीक नाम ले सकें। साधारणतः यह देखा गया है कि या तो वे अधिक व्यापक विषय का नाम लेते हैं या अधिक व्याप्य विषय का। इसी प्रकार सूची में खोज करने के सम्बन्ध में भी वे व्यापक अथवा व्याप्य विषय से खोज आरम्भ करते हैं।

इस प्रकार की सूची में, पाठक ज्योंही संख्या के द्वारा निर्दिष्ट प्रदेश में प्रवेश करता है, त्योंही संख्या का कार्य समाप्त हो जाता है। इसके पश्चात् सख्याएं उसके विचार का विषय नहीं रहतीं। वे उसके ध्यान को विकृष्ट नहीं करतीं। उसका चित्त केवल उस ज्ञातेय क्रम का परिज्ञान करने में व्यस्त रहता है जिस क्रम में उसके ग्रन्थों के नाम एक के पश्चात् एक उपस्थित होते रहते हैं। वह आनन्द-विभोर हो उठता है। इस आनन्द का मूल कारण एक विशिष्ट सन्तोष है। पाठक यह देखता है कि अनेक विषय ऐसे हैं जिनकी आवश्यकता का वह अनुभव करता था, किन्तु जिन्हें स्पष्ट शब्दों में व्यक्त न कर पाता था। वे सब विषय उसके सम्मुख उपस्थित होने लगते हैं। इस आशा की परिपूर्ति से जो सन्तोष होता है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। यह एक गहनतर कार्य है जिसे ग्रन्थालय सूची के द्वारा पूर्ण किया जाता है। ग्रन्थालय का यह कर्तव्य है कि पाठक के द्वारा इस प्रकार अनुच्चारित आवश्यकताओं की पूर्ति करे। विशेषकर इसलिए कि साधारण पाठक न तो यही जानता है कि इन आवश्यकताओं को किस प्रकार मूर्त बनाए और न यही जानता है कि किस प्रकार उन्हें प्रतिपादित करे। समय का अपव्यय किए बिना प्रत्येक पाठक को उसके ग्रन्थ प्राप्त करने मे सहायता दे सके—यह शक्ति पूर्वोक्त प्रकार की द्विभागिक सूची में ही है। इस प्रकार की सूची के निर्माण की रीति अध्याय ६ में वर्णित की जाएगी।

१४७ मानक

चतुर्थ सूत्र में एक और अनुमान छिपा हुआ है। ग्रन्थालय के कर्तृगणों का कर्तव्य है कि वे पाठक का समय बचाएं। इसके लिए यह

आवश्यक है कि वे अपना भी समय बचाएं। तभी वे पाठक की पृथक् रूप से सेवा कर सकते हैं। अब तक हम यह भली भांति देख चुके हैं। इससे अनेक अर्थ निकलते हैं। ग्रन्थालय के अधिकारी जितने कर्तृगणों को आवश्यक मानें—उससे अधिक, कहीं अधिक—लोगों की आवश्यकता पड़ सकती है। एक तो यह अर्थ निकलता है। दूसरा यह है कि कर्तृगणों का समय बचाया जाए। कारण उन्हें ग्रन्थालय सञ्चालन के लिए दैनिक परिपाटी सम्बन्धी कार्य करना भी आवश्यक है। उसके बिना ग्रन्थालय चल नहीं सकता। ग्रन्थालय का कार्य पिछड़ जाए यह भी उचित नहीं है। दैनिक परिपाटी के निर्वाह के लिए अपेक्षित समय को बचाने के लिए कई वस्तुएं आवश्यक हैं। ग्रन्थालय में उपयोग में आने वाली वस्तुओं में, निर्धारण में तथा रीतियों में मानक किया जाए, सरलीकरण किया जाए और उनके द्वारा पूरा लाभ उठाया जाए। यह सब आवश्यक है। ग्रन्थालय व्यवसाय ने ही लेखों की पत्रक प्रणाली तथा अनुयोग की समलम्ब प्रणाली का आविष्कार किया है। यह आविष्कार ग्रन्थालय व्यवसाय की ओर से अन्य व्यवसायों तथा व्यापारों के प्रति की हुई महती सेवा मानी जानी चाहिए। ये प्रणालियां चतुर्थ सूत्र से उत्पन्न परवशता के कारण आविर्भूत हुई हैं।

१४८ केन्द्रीकरण

चतुर्थ सूत्र का यह एक और भी सुझाव है कि वर्गीकरण तथा सूचीकरण जैसे अवैयक्तिक कार्य केन्द्र में ही किए जाएं। इसका फल यह होगा कि ग्रन्थालय के अधिकांश कर्तृगण अनुलय सेवा-रूपी मानव एवं वैयक्तिक उद्देश्य की सिद्धि के लिए मुक्त हो जाएंगे। चतुर्थ सूत्र कहता है:—"किसी एक विशिष्ट ग्रन्थ की हजारों विभिन्न प्रतियों को देश के हजारों विभिन्न ग्रन्थालयी वर्गीकृत करें और सूचीकृत करें, यह क्या बात है! उससे कौनसा लाभ होने वाला है? ग्रन्थों के वर्गीकरण तथा सूचीकरण के द्वारा जिस उद्देश्य को सिद्ध करने की इच्छा की जाती है उसकी सिद्धि के लिए और भी अधिक सरल, सुन्दर और मितव्ययी उपाय विद्यमान है। उसके उपयोग से और अधिक समता तथा एक-रूपता सिद्ध हो सकेगी। वह उपाय यह है कि प्रत्येक ग्रन्थ राज्य के अथवा राष्ट्र के केन्द्रीय ग्रन्थालय में वर्गीकृत किया जाए। उसके

सूचीपत्रक उसी वर्गसंख्या के साथ उसी केन्द्रीय संस्था में छापे जाएं। फिर वे उन हजारों ग्रन्थालयों में बांटे जाएं जहां उनकी मांग हो। क्या यह मार्ग अधिक लाभदायक नहीं है? अवश्य है।"

किसी ग्रन्थालय में एक वर्ष के बीच आने वाले एक हजार ग्रन्थों के बदले में इस प्रकार के केन्द्रीकरण द्वारा ग्रन्थालय कर्तृगणों में से एक व्यक्ति को मुक्त किया जा सकेगा। यदि ग्रन्थालय उस व्यक्ति को अनुलय सेवा के कार्य में लगा सके तो उसके समय का योग्यतर प्रतिफल प्राप्त हो सकेगा। जिन देशों में ग्रन्थालय अनेक वर्षों से स्थिर हैं तथा कार्य करते आ रहे हैं, जिन देशों में प्रत्येक ग्रन्थालय अपना स्वतन्त्र वर्गीकरण तथा सूचीकरण करते आ रहे हैं उनकी बात और है। कारण उन्होंने जिस समय कार्य आरम्भ किया था उस समय परिस्थिति कुछ और थी। राष्ट्रिय मितव्ययिता की मांग यह है कि विवेक से काम लिया जाए। व्यर्थ की भावनाओं से प्रभावित न हुआ जाए। वस्तुओं पर दृष्टिपात करते समय संपूर्ण राष्ट्र के हित को ध्यान में रखा जाए। इस राष्ट्रिय मितव्ययिता का उस समय कोई नाम भी न जानता था। ऐसी परिस्थिति में उस प्रकार के ग्रन्थालयों में स्थानीय मिथ्या गौरव इस प्रकार के केन्द्रीकरण को प्रविष्ट ही न होने देता था।

किन्तु भारत तो आज ग्रन्थालय आन्दोलन का श्रीगणेश कर रहा है। वह इस क्षेत्र में बहुत समय के पश्चात् आ रहा है। वह उस समय आ रहा है जब कि सम्पूर्ण राष्ट्र को इकाई मानते हुए राष्ट्रिय योजनाओं के निर्माण का बोलबाला है। भारत को चाहिए कि वह अन्य देशों के अनुभव से लाभ उठाए, उनसे शिक्षा ग्रहण करे। वह केन्द्रीकृत वर्गीकरण तथा सूचीकरण के द्वारा कार्य आरम्भ करे। यह उचित नहीं है कि भारत के ग्रन्थालयी अन्य देशों के मिथ्या भयों से भ्रान्त हो बैठें। अन्य देश अपनी अपनी वर्तमान ग्रन्थालय स्थिति में शनैः शनैः पहुंचे हैं। उनकी प्रगति अत्यन्त मन्द रही है। उनकी वर्तमान अवस्था कुछ अंशों में उच्च है, इसमें कोई सन्देह नहीं। तथापि वे ऐसी अनेक अपव्ययी प्रणालियों को मानने के लिए बाध्य हैं, जिनके कारण महान् अनर्थ होता रहता है। उन्होंने अपने को प्रबल-

चित्त आत्माभिमान में जकड़ रखा है। वे उस दयनीय दुर्दशा से अपने को मुक्त नहीं कर सकते।

उदाहरणार्थ, युनेस्को के ग्रन्थालय विभाग के अध्यक्ष श्री एडवर्ड जे० कार्टर हमारे विचारों का निम्नलिखित शब्दों में अनुमोदन करते हैं। "भारत के लिए यह उचित नहीं है कि वह अपनी ग्रन्थालय सेवाओं को आकस्मिक एवं स्वेच्छाजन्य रूप में परिवर्धित करे। उसके लिए वह समय बीत चुका।" आपकी इस उक्ति से मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ हूं। आपके लिए यह अनिवार्य है कि आप छलांग मारें और कई साढ़ियां डांक जाएं। यह सर्वथा संभावित है कि इस प्रकार की उड़ान लेने में आप उन अन्य अनेक देशों से आगे बढ़ जाएं जिनमें उन्नति क्रमिक एवं मन्दगतिक हुई है"।

१५ पञ्चम सूत्र

पञ्चम सूत्र कुछ विभिन्न प्रकार का है। अन्य सूत्र हमें जिन ऊंची कोटियों तक खींच ले जाते हैं उनका यह रुकाव करता है। ग्रन्थालय सम्बन्धी त्रिमूर्ति—पाठक, ग्रन्थ तथा कर्तृगण—इसकी दृष्टि में उस सामूहिक रूप में नहीं आ पाते। यह सत्य है कि यह इन तीनों की वृद्धि का पृथक् पृथक् व्यष्टि रूप में विचार करता है। साथ ही यह भी विचार करता है कि एक की वृद्धि का दूसरे पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

इन विषयों का विचार करने के पूर्व, आरम्भ में ही हमें यह स्वीकार कर लेना पड़ेगा कि अवयव सम्बन्धी वृद्धि दो प्रकार की होती है। एक होती है समायोग के द्वारा, और दूसरी होती है पुनःस्थापन अथवा नवीनीकरण के द्वारा। उनके उदाहरण बच्चों के शरीर की वृद्धि तथा प्रौढ़ों के शरीर की वृद्धि से दिए जा सकते हैं। जिस प्रकार एक बच्चे के शरीर में दृढ़तापूर्वक उन्नता तथा गुरुता की दृष्टि से वृद्धि होती रहती है उसी प्रकार एक नवजात ग्रन्थालय में पाठक ग्रन्थ तथा कर्तृगणों की संख्या में दृढ़तापूर्वक वृद्धि होती रहती है। वर्धिष्णु मानव शरीर की वृद्धि में भी एक चरम सीमा आ जाती है, जिसके बाद वह उसी पहले रूप में नहीं बढ़ सकता। ठीक उसी प्रकार पाठक, ग्रन्थ तथा कर्तृगण की संख्या में भी एक चरम सीमा का निर्धारण

किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में एक अपवाद होता है। और वह है राष्ट्रिय केन्द्र ग्रन्थालय।

१५१ स्तनन्धय-अवस्था

भारतवर्ष में तृतीय कोटि के ग्रन्थालय अब तक विद्यमान नहीं हैं। ऐसे ग्रन्थालय नहीं हैं जो निरन्तर बढ़ते ही रहते हों—जिनका अन्त अथवा विराम कहीं न हो। इस प्रकार के ग्रन्थालय भी बहुत कम मिलेंगे जो द्वितीय कोटि के हों, अर्थात् प्रौढ़ अवस्था को पा चुके हों। जो भी ग्रन्थालय आज यहां विद्यमान हैं, वे अधिकतर स्तनन्धय अवस्था में ही हैं। उनमें भी अधिकांश तो अभी उत्पन्न ही होने वाले हैं। अतः हममें से अधिकांश लोगों का जीवन-काल ऐसे ही ग्रन्थालयों में बीतेगा जहां प्रथम प्रकार की वृद्धि होती रहेगी। अर्थात् वहां पाठक, ग्रन्थ तथा कर्तृगणों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती रहेगी—ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार एक शिशु के शरीर में होती रहती है। मेरा स्वयं अपना जीवन भी इसी प्रकार बीता है।

१५२ पाठक संख्या वृद्धि

आरम्भ में मैं यही बताना चाहता हूं कि ग्रन्थालय की वृद्धि वस्तुतः पाठकों की संख्यावृद्धि से उत्पन्न होती है। यही बात प्रथम तथा द्वितीय सूत्र द्वारा व्यक्त की जाती है। भारत की वर्तमान पीढ़ी के ग्रन्थालयियों को चाहिए कि वे जनता को ग्रन्थालय का अधिक से अधिक उपयोग करने के लिए प्रवृत्त करें। उनके विचार तथा समय पर पहली मांग यही है। उनका सबसे पहला उत्तरदायित्व यही है। भारत में प्रायः ८५ प्रतिशत व्यक्ति निरक्षर हैं। अतःनिरक्षरों को ग्रन्थ स्वयं पढ़कर सुना देने का तथा उनकी व्याख्या कर देने का भी प्रस्ताव किया जाना चाहिए। आधुनिक भारतीय ग्रन्थालयियों का यह भी कर्तव्य है कि निरक्षरता के निवारण के लिए जो भी स्थानीय संस्थाएं कार्य करती हों उनके साथ सहयोग करें। उन्हें सब प्रकार की सहायता पहुंचाने का यत्न करें। हमारे ग्रन्थालयों का यह कार्य तात्कालिक और अस्थायी रहेगा तथा प्रायः एक पीढ़ी तक जारी रखना पड़ेगा।

किन्तु यदि हम यह मान भी लें कि आगे चलकर साक्षरता

पूर्णतया व्यापक हो जाएगी, अर्थात् देश में एक भी व्यक्ति निरक्षर न रह जाएगा, तब भी ग्रन्थालयों को उन्नति की प्रौढ़ अवस्था तक पहुंचने के लिए कुछ वर्ष लगेंगे ही। यही बात पाश्चात्य देशों के अनुभवों से सिद्ध होती है। जिन नगरों में वर्षों से अनिवार्य शिक्षा प्रचलित है तथा सुचारु परिचालित ग्रन्थालय प्रणाली आज ७५ वर्षों से विद्यमान है, उन नगरों में भी सर्वजन ग्रन्थालयों का उपयोग करने वाली जनता का प्रतिशत भाग अब भी ३० तक नहीं पहुंचा है। यदि हम यह भी स्वीकार कर लें कि वय अथवा अन्य कठिनाइयों के कारण जनता का ३० प्रतिशत भाग ग्रन्थालय का उपयोग करने के लिए सर्वदा ही अशक्त रहेगा, तब भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि जो लोग ग्रन्थालयों का उपयोग करने में समर्थ हैं उनमें भी ४० प्रतिशत अब भी ग्रन्थालयों के बाहर ही हैं। इससे यह प्रकट होता है कि उन नगरों के ग्रन्थालय अब तक पाठकों की संख्या के सम्बन्ध में वृद्धि की प्रौढ़ अवस्था तक नहीं पहुंच सके हैं। ग्राम ग्रन्थालय प्रणाली की तो और भी बुरी अवस्था है। इस प्रकार हम यह पाते हैं कि आज के अधिकतर ग्रन्थालय शिशु-वृद्धि की अवस्था में हैं। इसके अनेक अभिप्राय निकलते हैं।

१५३ भवन वृद्धि

पाठकों की संख्या दृढ़ता के साथ किन्तु मन्दगतिपूर्वक बढ़ती ही रहेगी। इसकी तो आशा करनी ही चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि उसी अनुपात में संग्रह के ग्रन्थ भी बढ़ते रहें ऐसी व्यवस्था करनी पड़े। ग्रन्थों की वृद्धि, संख्या तथा प्रतिपाद्य विषय दोनों की दृष्टि से होती रहेगी। जब कि पाठक और संग्रह दोनों बढ़ते रहेंगे तो उनके साथ ही साथ कर्तृगणों को भी बढ़ाते रहना पड़ेगा। उसके बिना गति नहीं है। ग्रन्थालय की अवयव रूप त्रिमूर्ति के तीनों अङ्गों के सम्बन्ध में आशासित उन्नति का ध्यान हमें अनेक अवसरों पर रखना पड़ेगा। उनमें एक अवसर वह है जब हम ग्रन्थालय भवन के निर्माण की योजना बनाएं। जब हम अपने बच्चों के लिए घर बनाते हैं, उसका आरम्भ करते हैं—उस समय हम उस घर की ऊंचाई तथा क्षेत्रफल को निर्धारित करने के

लिए शिशुओं की कद को आधार नहीं मानते। हम घर को यह सोच कर बनाते हैं कि जब वे बच्चे पूर्णतया वृद्धि को प्राप्त हो जाएंगे, तथा अपने परिवार और मित्रों के साथ उस घर में रहने लगेंगे तब उनकी क्या आवश्यकताएं रहेंगी। उस आगामी समय को ध्यान में रखते हुए हम इस समय घर बनवाते हैं। ग्रन्थालय भवन की योजना बनाते समय भी हमें ग्रन्थालय की प्रौढ़ आवश्यकताओं का ध्यान रखना पड़ेगा। कम से कम बाह्य योजना तो ऐसी बनानी ही पड़ेगी। चाहे हम यह व्यवस्था कर लें कि हम भवन को कई खण्डों में बनाएंगे तथा समय का अन्तर देते हुए पूर्ण करेंगे। हमें अपना कार्यक्रम इसी प्रकार स्थिर करना पड़ेगा।

यदि ग्रन्थालय शास्त्र के पञ्चम सूत्र के उपर्युक्त अनुषङ्ग की उपेक्षा की गई तो उसका बहुत बुरा परिणाम होगा। अतीत में इसके कारण बहुत बड़ी हानियां हो चुकी हैं। ग्रन्थालय में निरन्तर वृद्धि होती ही रहती है। किन्तु पहले न सोचा हुआ भवन उतना ही बड़ा रहता है। एक अवस्था वह आती है जब उस भवन को न तो समरूप में विस्तृत किया जा सकता है; और न उसकी नींव ही उतनी शक्तिशाली होती है कि उसमें ऊर्ध्व रूप में वृद्धि की जा सके। जब भवन के निर्माण-आरम्भ के पूर्व ही इस प्रकार की योजना न बनाई हो तो यह सब कैसे संभव हो सकता है? परिणाम यह होता है कि उस भवन को सदा के लिए छोड़ना अनिवार्य हो जाता है।

जहां उपर्युक्त प्रकार की दो बाधाएं नहीं होतीं वहां भी प्रकोष्ठों की अथवा सम्पूर्ण भवन की आकृति कुछ ऐसी बेढंगी होती है कि उसमें परिवर्तन या परिवर्धन अशक्य हो जाता है। वह गोल हो सकती है। अत्यधिक समानरूपी भी हो सकती है। उसकी आकृति हमें इस बात का अवसर ही नहीं देती कि हम उसका विस्तार कर सकें। उसके विस्तार का केवल एक ही मार्ग होता है, और वह मार्ग प्रबन्ध सम्बन्धी अति व्यय को उत्पन्न किए बिना रह नहीं सकता। यदि आरम्भ से ही योजना बना ली जाए तो यह अपव्यय रोका जा सकता है।

मद्रास विश्वविद्यालय ग्रन्थालय की भवन सम्बन्धी आवश्यकताओं के विषय में किस प्रकार विचार बदलते गए उसका हम यहां निद-

र्शन उपस्थित करना चाहते हैं। १९२१ ई० में यह विश्वास किया गया था कि ५०'×३०' प्रकोष्ठ अधिकतम आवश्यकता की पूर्ति करेगा। अर्थात उससे बड़े भवन की किसी प्रकार आवश्यकता न पड़ेगी। १९२१ में यह सोचा गया था कि १९३१ में १९२१ की अपेक्षा तिगुने स्थान की आवश्यकता पड़ेगी। १९२४ की योजना में उस स्थान के छ:गुने स्थान का प्रबन्ध किया गया। १९२८ में हमने इस बात पर जोर दिया था कि उस स्थान के बीस गुने स्थान की योजना की जाए। हमारा आधार यह था : उस ग्रन्थालय में उस समय केवल ४०,००० ग्रन्थ थे। किन्तु भविष्य के तीस वर्षों में वे ग्रन्थ बढ़कर २,००,००० हो जाएगे। साथ ही दैनिक आगन्तुक संख्या भी तीस गुनी बढ़ जाएगी।

किन्तु होनहार कुछ और था। विश्वयुद्ध ने बड़ा भयानक परिणाम दिखाया। सारे संसार को पंगु बना डाला। इस परिस्थिति का उस ग्रन्थालय पर भी पर्याप्त असर पड़ा। उधर उस पर राजनीति का भी बुरा आक्रमण हुआ। उसके कारण सद्भावना की लता अस्थायी रूप से झुलसा दी गई। अगर परिस्थिति ऐसी न बन जाती तो वही भवन जो हमारे द्वारा बड़ी उदारतापूर्वक आयोजित किया गया था आज अति लघु प्रतीत होने लगता।

१५४ कर्तृगण वृद्धि

जो ग्रन्थालय उन्नति की पूर्व-प्रौढ़-अवस्था में होते हैं उनकी कर्तृगण-आवश्यकता पर पञ्चम सूत्र का क्या परिणाम होता है इसे बहुत कम लोग समझ पाते हैं। यदि कर्तृगणों में इतना उत्साह पर्याप्त मात्रा में हो और वे ग्रन्थालय की वृद्धि करने में अपना अंशदान करते रहें तो ग्रन्थालय बढ़े बिना रह नहीं सकता। उसके कर्तृगणों की आवश्यकता बढ़े बिना रह नहीं सकती। नये कर्तृगणों को नियुक्त किए बिना काम चल नहीं सकता। ये सब बातें अर्थात् पञ्चम सूत्र के परिणाम अनेक झुंझलाहटों को उत्पन्न करते हैं। अधिकारी यह समझ ही नहीं पाते कि स्वीकृत कर्तृगण कितनी शीघ्रता के साथ आवश्यक एवं अपेक्षित संख्या से कम पड़ जाते हैं। अधिकारियों की यह शिकायत होती है कि कर्तृगणों की वृद्धि के प्रार्थनापत्र रोज ही आते रहते हैं। वे उन प्रार्थनापत्रों का तिरस्कार कर देते हैं। अपर्याप्त

कर्तृगण अपने प्राणों की बाजी लगा देते हैं। वे चाहते हैं कि जिन सेवाओं की वे घोषणा करते हैं और जिन्हें प्रस्तुत करने का वे मनोरथ रखते हैं वे सब सेवाएं भली भांति की जाएं। किन्तु उनमें से आधी सेवाएं भी हो नहीं पातीं। प्रचार कार्य का यह परिणाम होता है कि जितने पाठकों की सेवा संभव हो उससे अधिक पाठक आते हैं। जितने ग्रन्थों का संघटन संभव हो उसकी अपेक्षा कहीं अधिक ग्रन्थ आते हैं। परिणाम यह होता है कि चारों ओर से शिकायतें आती रहती हैं। सब लोग असन्तोष प्रकट करते हैं। कुछ कटु स्वभाव वाले लोग ऐसे होते हैं जो उपहास करते हैं। कुछ निन्दा भी करते हैं। वे शोर मचाने में भी इतने कुशल होते हैं कि उनकी आवाज और सब लोगों की आवाजों को दबा देती है।

हमने इन बातों को पूर्व तथा पश्चिम दोनों देशों के ग्रन्थालयों में बार बार होते देखा है। अब तक हम इस बात को दैवी मानते थे। हमारी यह धारणा बन गई थी कि इससे किसी प्रकार बचा नहीं जा सकता। हम इस विपत्ति को भूकम्प के समान मानने लगे थे। किन्तु अभी अभी हमें कुछ प्रकाश की प्राप्ति हुई है। हमने एक ऐसा साधन ढूंढ निकाला है जिसे काम में लाने से न तो नवग्रन्थालयों की वृद्धि में बाधा पड़ेगी और न कठोर-परिश्रमी, उत्साही तथा नेतृत्व की भावना से परिपूर्ण कर्तृगणों की भावना की हत्या हो सकेगी। हमारे द्वारा आविष्कृत यह साधन इस विपत्ति का परिहार करेगा। हमारा प्रस्तावित साधन यही है कि ग्रन्थालय के अधिकारी एक बार सदा के लिए ग्रन्थालय-कर्तृगणों का एक गणितीय परिसूत्र स्वीकार कर लें। उस परिसूत्र में ग्रन्थालय के कार्य का तथा उसके कर्ताओं का अनुपात स्थिर किया गया है। एक बार उस परिसूत्र को मान लिया गया कि फिर कर्तृगणों की सख्यावृद्धि तथा परिवर्तन स्वयंजात और अवैयक्तिक हो जाएगा। फिर झुंझलाहट अथवा चिड़चिड़ेपन का अवसर न आ सकेगा। फिर हमें यह नहीं कहना पड़ेगा :—"ओह! ये अधिकारी कितना निर्विचार-पूर्वक उपहास करते हैं और कहते फिरते हैं, "कर्तृगण, कर्तृगण और सदा कर्तृगण!" उनका ज्ञान कितना शून्य है! वे ग्रन्थालय तथा उसके कर्तृगणों के कार्य का किस बुरी तरह से निर्धारण करते

है !" यहां हम उस परिसूत्र को प्रस्तुत करते हैं, जिसे हमने आविष्कृत किया है तथा जो सब विपत्तियों का अन्त कर देगा।

१५४१ कर्तृगण परिसूत्र

किसी ग्रन्थालय में, किसी विशिष्ट समय पर, वास्तविक कार्य के अनुपात के आधार पर कितने कर्तृगण होने चाहिए इसका निर्णय करने के लिए निम्नलिखित परिसूत्र सहायक होगा :—

परिसूत्र १ : संकलित कर्तृगण

यदि क = कर्तृगण की संकलित संख्या
कप्र = प्रबन्धक कर्तृगण की संख्या
कव्य = व्यावसायिक कर्तृगण की संख्या
कव्यइ = व्यावसायिक-इतर कर्तृगण की संख्या
संक = वर्ष के कार्यदिन की संख्या
संघ = प्रतिदिन ग्रन्थालय के खुले रहने के घंटों की संख्या
संदघ = प्रतिवर्ष के द्वार घंटों की संख्या
(एक घंटे तक खुला हुआ लेन-देन द्वार एक द्वार घंटा कहा जाता है)
संध = वार्षिक आयव्ययक में प्रस्तावित रुपयों की संख्या
संप = प्रतिवर्ष परिगृहीत संपुटों की संख्या
संपा = प्रतिदिन पाठकों की संख्या
संपु = ग्रन्थालय में स्थित संपूर्ण संपुटों की संख्या
संब = पाठकों के बैठने के स्थान की संख्या
संव = विषयोचित एवं निर्देशीकृत सामयिक प्रकाशनों की संख्या
संस = परिगृहीत सामयिक प्रकाशनों की संख्या
[च] = च, यदि च पूर्णाङ्क है; अथवा
= च का पूर्णावयव, यदि च पूर्णाङ्क की अपेक्षा ०.२५ से कम मात्रा में अधिक है

=च से अनुपद उत्तरवर्ती पूर्णाङ्क, यदि च पूर्णाङ्क की अपेक्षा ०.२५ अथवा उससे अधिक मात्रा में अधिक है

तब क=कप्र + कव्य + कव्यइ

जिसमें
$$\text{कप्र} = \frac{१}{२०,०००}\left\{ \text{संध} + २०.०००\left(\frac{\text{संत्र}}{१००}\right)\right\}$$

$$\text{कव्य} = \frac{१}{३,०००}\left\{ ३\,\text{संप} + ६०\text{संव} + ६\text{संस} + २\text{संदघ} + २\left(\text{संघ} + ६\left[\text{संपा}\right]\right)\right\}$$

$$\text{कव्यइ} = \frac{१}{२०,०००}\left\{ १०,०००\left(\text{कप्र} + \text{कव्य}\right) + \text{संपु}\right\}$$

१५४२ परिसूत्र २ : व्यावसायिक कर्तृगण में कार्य का विभाजन

यदि कश्र = अनुलय कर्तृगण की संख्या

कप्र = पर्यवेक्षक कर्तृगण की संख्या (ग्रन्थालयी तथा उसके प्रतिनिधि)

कन = अन्य निरूपक कर्तृगण की संख्या

कल = लेन-देन कर्तृगण की संख्या

तब
$$\text{कश्र} = \frac{\left[\frac{\text{संपा}}{५०}\right]\ \text{संक}}{२५०}$$

$$\text{कप्र} = \frac{\text{संघ} \times \text{संक}}{१,५००}$$

$$\text{कन} = \frac{\text{संप} + २०\ \text{संव} = २\text{संम}}{१,०००}$$

$$\text{कल} = \frac{\text{संदघ}}{१.५००}$$

१५४३ परिसूत्र ३ : अन्य निरूपक कर्तृगण में कार्य का विभाजन

यदि कग्रव = ग्रन्थ विभाग कर्तृगण की संख्या

कप्रव = प्रदर्शन विभाग कर्तृगण की संख्या

कवस = वर्गीकारक तथा सूचीकारक कर्तृगण की संख्या

कस = सामयिक विभाग कर्तृगण की संख्या

तब $कग्रव = \frac{संप}{६.०००}$

$कप्रव = \frac{संप}{३.०००}$

$कवस = \frac{संप + ४०संव}{२.०००}$

$कस = \frac{संस}{५००}$

१५५ प्रौढ़-अवस्था

जब ग्रन्थालय वृद्धि की प्रौढ़ अवस्था तक पहुँच जाता है तब उसकी वृद्धि का रूप भिन्न हो जाता है। वह रूप यह है। पुराने पाठकों का स्थान नये पाठक ग्रहण करते हैं। पुराने ग्रन्थों के स्थान पर नये ग्रन्थ आते हैं। जो कर्तृगण वृद्धता के कारण अवकाश ग्रहण कर लेते हैं उनके स्थान पर नये कर्तृगण आ जाते हैं। उस अवस्था में पाठक, ग्रन्थ तथा कर्तृगणों के सम्बन्ध में ग्रन्थालय चरम अवस्था को पहुँच चुका होगा। इतना होते हुए भी प्रचार कार्य में लेशमात्र भी शिथिलता न आने देनी चाहिए। कारण यह है। पुराने पाठकों के स्थान में नये पाठकों को प्राप्त करना अनिवार्य होगा। ग्रन्थक्रमण तथा ग्रन्थ-प्रदर्शन के कार्यों में भी लेशमात्र न्यूनता न होगी। क्योंकि पुराने अनचाहे ग्रन्थों को निकाल बाहर करना ही पड़ेगा। किन्तु ग्रन्थालय भवन को विस्तृत करने की आवश्यकता न पड़ेगी। विद्यालय तथा महाविद्यालय और कार्यभार-अधिष्ठान के ग्रन्थालय शीघ्र ही इस अवस्था को प्राप्त हो जाएंगे। हम यह बतला चुके हैं कि नगर ग्रन्थालयों को उस अवस्था तक पहुँचने के लिए कतिपय दशक लग सकते हैं, और कदाचित् एक शताब्दी भी लग सकती है। यह संभव है कि नगर के विभागों से सम्बद्ध, तथा ग्राम-ग्रन्थालय-प्रणाली से सम्बद्ध उपनगरों के शाखा ग्रन्थालय वृद्धि की प्रौढ़ावस्था को कुछ शीघ्र प्राप्त कर लें।

१५६ पञ्चम सूत्र की चेतावनी

ग्रन्थालय शास्त्र के पञ्चम सूत्र में क्या शक्ति है इसे समझने में यदि हम असफल रहे तो ग्रन्थालय कार्य में अनेक वस्तुएं दोषपूर्ण हो जाएंगी। ग्रन्थालय भवन के सम्बन्ध में जो भूल न होने देनी चाहिए उसका हम उल्लेख कर चुके हैं। जो ग्रन्थालय-अधिकारी अनुभवशून्य होते हैं, वे बहुधा वर्गीकरण की प्रकाशित मान्य पद्धति स्वीकार न करने का दुराग्रह कर बैठते हैं। प्रत्येक ग्रन्थालय स्वयं अपनी पद्धति का प्रबन्ध कर लेता है। पद्धति की योजना में बहुधा स्वच्छन्द आचरण तथा बलप्रयोग किया जाता है। फल यह होता है कि वह पद्धति थोड़े समय में ही निष्क्रिय और मृतप्राय बन जाती है। आज के अधिकतर ग्रन्थालयों में यह बात सामान्यतः पाई जाती है। एक बार एक पद्धति जहां क्रियाशून्य बन गई कि उसी क्षण दूसरी पद्धति का आविष्कार अनिवार्य हो जाता है। उसी मात्रा में दूसरी अवाञ्छनीय नीति यह है कि किसी प्रकाशित पद्धति को आंशिक अथवा परिवर्तित रूप में अपनाया जाए। परिणाम वही होगा—गति का अवरोध। "हमारा ग्रन्थालय तो बहुत छोटा है। हमें किसी विस्तृत पद्धति की आवश्यकता नहीं है। साधारण संख्या-अङ्कन हमारे लिए पर्याप्त होगा," यह एक युक्ति है जिसे हम बहुधा सुना करते हैं। ग्रन्थालय शास्त्र का पञ्चम सूत्र इसका प्रतिवाद करता है।

हम यहां एक बात और भी कह देना चाहते हैं। यदि वर्गीकरण की पद्धति श्रेष्ठ है तो उसके द्वारा, छोटे ग्रन्थालयों में पाये जाने वाले साधारण ग्रन्थों के लिए साधारण संख्याएं ही प्रस्तुत की जाएंगी। जो ग्रन्थ जिस संख्या का अधिकारी होगा उसे उतनी ही लम्बी वर्गसंख्या मिलेगी। वर्गीकरण की जिस पद्धति का उपयोग किया गया हो उसमें विस्तृत संख्याओं के निर्माण की यदि व्यवस्था हो तो इसका अर्थ यह नहीं होता कि किसी ग्रन्थ पर उसके विशिष्ट विषय द्वारा अपेक्षित संख्या की अपेक्षा विस्तृततर संख्या बलात् लाद दी जाएगी। इसी प्रकार सूचीकरण में भी यदि कठोर नियम वाले सूचीकल्प का उपयोग न किया गया तो सूची संमिश्रित खिचड़ी बन जाएगी। इस सम्बन्ध में भी लोग व्यर्थ की युक्ति उपस्थित करते हैं और कहते हैं, "भाई, हमारा ग्रन्थालय तो छोटा सा है। हम तो सूची के नियमों का केवल एक साधारण

संघात चाहते हैं। वह संघात ऐसा हो जिसे साधारण योग्यता का व्यक्ति भी समझ सके। चाहे वह दीक्षित हो अथवा नहीं।" इस विषय में भी यह बात ध्यान देने योग्य है कि ग्रन्थालय तो नित्य प्रति बढ़ता ही रहेगा। इस वस्तु का कौन विश्वास दिला सकता है कि भविष्य में ग्रन्थालय में एक भी ऐसा ग्रन्थ न खरीदा जाएगा जो सूचीकरण के सम्बन्ध में कठिनाई उत्पन्न करे। पञ्चम सूत्र इसी बात का आग्रह करता है और कहता है. "भाई, बुद्धि का उपयोग इसी में है कि आरम्भ से ही वर्गीकरण की प्रकाशित पद्धति का उपयोग किया जाए। सूचीकरण के लिए भी मुद्रित सूचीकल्प का स्वीकार किया जाए। इन दोनों का पूर्ण रीति से अङ्गीकार किया जाए। उनमें न तो किसी प्रकार का परिवर्तन किया जाए और न किसी प्रकार का परिवर्धन। उनमें किसी भी प्रकार की उलटफेर घातक सिद्ध होगी।"

१६ सिंहावलोकन

हमने अब तक ग्रन्थालय कार्य के परिज्ञान के लिए अपेक्षित पृष्ठभूमि का अध्ययन किया। अब हम उसे समाप्त करना चाहते हैं। किन्तु उसके पूर्व ग्रन्थालय शास्त्र के समस्त सूत्रों का सामूहिक परीक्षण करते हुए सिंहावलोकन न्याय से उनका पर्यालोचन करना अभीष्ट है। इन सूत्रों के पास कुछ ऐसे साधन हैं जिनके द्वारा वे इस बात का परीक्षण कर सकते हैं कि ग्रन्थालय उन सूत्रों का आदर करता है अथवा नहीं।

ये सूत्र भवन की ओर दृष्टिपात करते हैं। यदि वह साफ सुथरा, चमकीला तथा शानदार हो तो वे सन्तुष्ट हो जाते हैं। वे भवन के अन्दर प्रवेश करते हैं और चारों ओर आंखें दौड़ाते हैं। यदि आसन्दियां (कुर्सियां) सुखदायक हैं. लेखनाधार (मेज) विस्तृत हैं, प्रकाश आनन्दजनक है, वायुसञ्चार पर्याप्त है, भूमि अशब्दजनक है तो वे सन्तोष प्राप्त कर लेते हैं। उन्हें इस बात का विश्वास हो जाता है कि वहां पर पर्याप्त शान्ति रह सकेगी। वे चयन शाला में प्रवेश करते हैं। यदि अन्तर्मार्ग प्रशस्त हैं, ग्रन्थाधारों के सर्वोच्च फलक सुखप्राप्य हैं और प्रत्येक भूमि, अन्तर्मार्ग, खात तथा फलक के लिए पर्याप्त दर्शक लगे हुए हैं, यदि प्रकाश भरपूर है; यदि

ग्रन्थ खुले फलकों में रखे हुए हैं, यदि पाठक उनके आस पास घूमते हैं, यदि वे (पाठक) बिना किसी रुकावट के ग्रन्थों की उलट-पलट कर सकते हैं. यदि पाठकों की सहायता के लिए प्रसन्नमुखी अनुलय ग्रन्थालयी विद्यमान हैं और उन्हें वे सहायता पहुँचाते रहते हैं तो वे सूत्र सन्तुष्ट हो जाते हैं। वे सूत्र ग्रन्थालय के कार्य घण्टों को जानना चाहते हैं। वे पूछते हैं कि ग्रन्थालय कब से कब तक खुला रहता है। यदि उत्तर में उन्हें यह बतलाया जाता है कि ग्रन्थालय वर्ष में ३६५ दिन खुला रहता है, और प्रतिदिन प्रातःकाल से रात्रि तक, मनुष्य के उठने से लेकर सोने तक, मनुष्य के जागृत रहने के समस्त घण्टों में वह ग्रन्थालय निरन्तर खुला रहता है तो वे सूत्र सन्तुष्ट हो जाते हैं। उन्हें इस बात का विश्वास हो जाता है कि जनसाधारण शीघ्र ही ग्रन्थालय के अभ्यासी बन जाएंगे और सदा ही ज्ञान तथा प्रकाश की छत्रछाया में रहकर उच्च अवस्था में जीवन व्यतीत करेंगे। वे सब प्रकार के सुख तथा ऐश्वर्य आदि को प्राप्त करने में समर्थ हो सकेंगे।

—++++—

अध्याय २

अनुलय सेवा

२० लक्षण

ग्रन्थालय का चरम लक्ष्य क्या है ? यही कि जिन लोगों के लिए वह ग्रन्थालय चलाया जाता हो उनमें से प्रत्येक व्यक्ति योग्य बना दिया जाए। उसकी वह योग्यता ऐसी हो कि वह लाभ और सुख के साथ ग्रन्थों का उपयोग कर सके। इस विषय को हम गत अध्याय में निरूपित कर चुके हैं। इससे बढ़कर ग्रन्थालय का और कोई लक्ष्य नहीं हो सकता। यदि सच पूछा जाए तो हम यहां तक कह सकते हैं :—ग्रन्थालय की सत्ता उसी क्षण मानी जानी चाहिए जब कि उसकी त्रिमूर्ति—पाठक, ग्रन्थ तथा कर्तृगण—एक दूसरे से उद्देश्यपूर्ण एक सूत्र में आबद्ध रहती है। पुराण विचारधारा तो यह थी कि ग्रन्थों का संग्रह ही ग्रन्थालय है। यह धारणा उतनी ही मिथ्या है जितनी पाठकों के केवल समुदाय को अथवा कर्तृगण के केवल दल को ग्रन्थालय का नाम दे दिया जाए। उदाहरणार्थ, रात्रि के समय ग्रन्थालय बन्द रहता है। उस समय उसमें न तो पाठक रहते हैं और न कर्तृगण ही रहते हैं। किन्तु वहां पर ग्रन्थों का संग्रह तो रहता ही है। क्या उसे हम ग्रन्थालय कह सकते हैं ? कदापि नहीं। इतना ही नहीं, बल्कि जब उन तीनों की सत्ता हो, परन्तु उन तीनों में परस्पर कोई सम्बन्ध न हो उस समय भी—वे तीनों मिलकर भी—वे ग्रन्थालय नहीं कहे जा सकते। इसके विपरीत, ग्रन्थालयी के हाथ में विद्यमान एक भी ग्रन्थ जब पाठक से परिचित कराया जाता है तब उस एकाकी ग्रन्थ को भी ग्रन्थालय कहा जा सकता है। ग्रन्थालय की त्रिमूर्ति के अवयवों के बीच जब परस्पर उद्देश्यपूर्ण सहयोग का निर्माण किया

जाता है तब उसे अनुलय सेवा का नाम दिया जाता है। अतः ग्रन्थालयी का यह कर्तव्य है कि वह अनुलय सेवा को अपना सर्वोच्च धर्म माने।

अनुलय सेवा योग्य पाठक और योग्य ग्रन्थ का व्यक्तिगत रूप में सम्बन्ध स्थापित कराती है। ग्रन्थालय के अन्य प्रत्येक कार्य की परिपूर्णता अन्ततः अनुलय सेवा के ही द्वारा हो सकती है। अन्य किसी भी रीति से नहीं। आगामी अध्यायों में हम ग्रन्थालय की अनन्त परिपाटियों का वर्णन करना चाहते हैं। उनमें ग्रन्थवरण, ग्रन्थ-आदेश, सामयिक कार्य, ग्रन्थों का वर्गीकरण, सूचीकरण, परिग्रहण, संघटन तथा प्रदर्शन आदि सभी विषयों की चर्चा की जाएगी। ग्रन्थों का संग्रह, उनका संघटन तथा उनके सम्बन्ध में स्वीकृत अनन्त परिपाटी का निर्वाह ये सब वस्तुएं तब तक व्यर्थ हैं जब तक योग्य अनुलय सेवा नहीं की जाती। अतः यह आवश्यक है कि सब से पहले हम यह जानें कि अनुलय सेवा किस प्रकार की जानी चाहिए।

२१ सज्जीकरण

२११ नवीन ग्रन्थ

अनुलय सेवा के लिए यह आवश्यक है कि ग्रन्थों की सहायता से, धैर्य और परिश्रम के साथ, अनुलय ग्रन्थालयी अपने को सज्ज करे। ज्योंही कोई नया ग्रन्थ ग्रन्थालय में आए त्योंही शीघ्रता के साथ उसका पर्यालोचन करना चाहिए। इस कार्य के लिए यदि ग्रन्थ की वर्गसंख्या से सहायता ली गई तो अच्छा होगा। इस प्रकार वह पर्यालोचन भी समर्थ बन सकेगा। इसमें कोई सन्देह नहीं। पर्यालोचन करते समय अनुलय ग्रन्थालयी को अपने मस्तिष्क के दो भाग कर देने पड़ेंगे। जिस समय मस्तिष्क का एक भाग ग्रन्थों के पृष्ठों पर दृष्टिपात करने में लगा हो उसी समय दूसरा भाग पाठकों के जगत् का परीक्षण करता रहे। वह उन पाठकों को खोजता रहे जिनके साथ उस ग्रन्थ का सम्बन्ध कराया जा सकता हो। संभाव्य पाठकों की खोज तथा स्थिरीकरण में एक नहीं अनेक वस्तुओं का ध्यान रखना पड़ता है। ग्रन्थ का प्रतिपाद्य विषय, उसकी प्रतिपादन प्रणाली और स्तर, भाषा तथा शैली, चित्रों की तथा अन्य सहायकों की सत्ता—ये सभी बातें ध्यान में रखनी पड़ती हैं। उनके द्वारा अपने कार्य में सफ-

लता प्राप्त करनी होती है। हम चाहें कि केवल आख्या पढ़कर ग्रन्थ के पाठक को स्थिर कर लें यह असंभव है।

इस उद्देश्यपूर्ण पर्यालोचन के पात्र केवल नये ग्रन्थ ही नहीं होते, अपितु ग्रन्थालय में समय समय पर आने वाले प्राचीन ग्रन्थों की नई आवृत्तियां, वार्षिकों के नये अवदान तथा सामयिकों के नूतनतम अवदान—इन सभी वस्तुओं का पर्यालोचन अभीष्ट है। उदाहरणार्थ, एक घटना उपस्थित की जाती है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा की 'पत्रिका' का ५१ संपुट का ४र्थ अवदान हमारे ग्रन्थालय में आया। उसके पत्रों को उलटते समय श्री विजयचन्द्र सूरि के 'कुसण' शब्द का अर्थ' शीर्षक के एक लेख पर हमारी दृष्टि पड़ी। एकसम्बन्धी ज्ञान दूसरे के सम्बन्ध में स्मरण करा देता है। इस न्याय के अनुसार हमारी स्मृति जागृत हो उठी। हमें स्मरण हो आया कि श्रीयुत सु' ने कुछ सप्ताह पूर्व इस विषय की जिज्ञासा प्रकट की थी। उनके पास एक पत्र भेजा गया और उन्हें ग्रन्थालय में आने के लिए निमन्त्रण दिया गया। किन्तु वह पत्र उनके पास पहुँचे इसके पूर्व ही मार्ग में उनसे भेंट हो गई। उनसे उस लेख की चर्चा की गई। वे उसी क्षण प्रसन्नता के साथ ग्रन्थालय में आये। फलतः 'पत्रिका' ने भी ग्रन्थालयी को धन्यवाद दिया कि उसने उतनी शीघ्रता के साथ उसका पाठक उपस्थित कर दिया।

२१२ प्राचीन ग्रन्थ

समय समय पर प्राचीन ग्रन्थों का भी पर्यालोचन करते रहना पड़ेगा। बहुत से ग्रन्थ ऐसे होते हैं जो कदापि अपने स्थान से—अपने फलक से—हटने का नाम तक नहीं लेते। उनका पर्यालोचन करते समय इस उद्देश्य को ध्यान में रखना पड़ेगा कि उनमें कौन कौन से अध्याय, सूचना के विषय तथा विशेषताएं पाठकों के ध्यान में लाने योग्य हैं। संभव है उन वस्तुओं को खोज लेने के बाद उनके पाठक भी प्राप्त हो सकें। प्राचीन ग्रन्थों का पर्यालोचन इस दृष्टि से भी किया जा सकता है कि समय समय पर ग्रन्थालय में आने वाले नवीन ग्रन्थों के साथ उन प्राचीन ग्रन्थों का सामञ्जस्य स्थापित किया जा सके। संभवतः उन नवीन ग्रन्थों के सम्बन्ध से विद्यमान प्राचीन ग्रन्थों के

पढ़ने का चाव पाठकों में उत्पन्न किया जा सके। इस प्रकार जो ग्रन्थ तब तक पाठकों के द्वारा पूछे तक न गए थे उनमें भी नये मूल्यों का—वास्तविक उपयोगिताओं का—उत्पादन किया जा सकता है। कारण वे नये ग्रन्थों से समन्वित सिद्ध हो सकते हैं। २११ अनुच्छेद में 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का उल्लेख किया जा चुका है। उसमें अन्य अनेक अनुसन्धान थे। उनमें से कुछ ग्रन्थ तो ग्रन्थालय में ही पाए गए। उन्होंने भी अन्य अनेक ग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों का अनुसन्धान कराया। ये सब ग्रन्थ महीनों से फलकों पर व्यर्थ ही पड़े थे। उन्हें किसी पाठक ने स्पर्श तक न किया था। वे साधारणतः दीन, दुःखी, मलिन तथा सन्तप्त थे। उन्होंने खिन्न होकर अपने को धूल से आवृत कर लिया था। जब उन्हें उनके कारागारों से मुक्ति दिलाई गई—उन्हें उनके स्थानों से बाहर किया गया—तथा झाड़ पोंछकर श्री 'सु' के हाथों में दिया गया तब वे ग्रन्थ प्रसन्नता के मारे फूले न समाए। वे चमाचम चमकने लगे। उन्होंने 'पत्रिका' का मुक्तिदात्री के रूप में धन्यवाद किया। ग्रन्थालयी ने भी अपने प्राप्तव्य धन्यवाद का अंश पाया। इस बात को हम पुनः जोर के साथ कहना चाहते हैं कि जब मस्तिष्क का एक भाग इस प्रकार के नये सम्बन्ध को स्थापित करने में व्यस्त हो, ठीक उसी समय दूसरा भाग संभाव्य पाठकों की खोज करता रहे।

२१३ पाठक

अनुलय ग्रन्थालयी का सज्जीकरण जितना ग्रन्थों के जगत से सम्बद्ध है उतना ही पाठकों के जगत् से भी सम्बद्ध है। यदि संभाव्य दृष्टि से देखा जाए तो पाठकों का जगत् तथा ग्रन्थालय सेवा के लक्ष्य-भूत जनसमूह के समस्त व्यक्ति समव्यापक हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जिन लोगों की सेवा के लिए ग्रन्थालय की सत्ता मानी जा सकती है. उनमें से एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं निकल सकता जो ग्रन्थालय का संभाव्य पाठक न माना जा सके। उनमें से कोई भी व्यक्ति, किसी भी समय, किसी भी विषय के, किसी भी ग्रन्थ की मांग उपस्थित कर सकता है। यह तो हुई कल्पना की बात। यथार्थ वस्तु कुछ निराली ही है। ग्रन्थ एक कृत्रिम पदार्थ हैं। वे किसी भी स्थूल इन्द्रियों को आकृष्ट नहीं कर सकते। उनमें यह भी शक्ति नहीं है कि

इन्द्रियजन्य सुख से अमिश्रित होते हुए साक्षात् बुद्धि से सम्बन्ध कर सकें। इन सब कठिनाइयों के कारण, जनता के बहुत कम घटक ऐसे पाये जा सकेंगे जो स्वयं अपनी इच्छा से ग्रन्थालयों में जाएं और ग्रन्थों का उपयोग करें। जनसाधारण के अधिकांश वर्ग को समझा बुझाकर, फुसलाकर, मनाकर, लुभाकर ग्रन्थालय में ले जाना पड़ता है। इसके लिए अनेक उपायों का सहारा लेना पड़ता है। जनता को ग्रन्थ-उपयोग की ओर प्रवृत्त करने के लिए जो विशिष्ट युक्तियां काम में लाई जाती हैं उनमें निम्नलिखित प्रधान हैं।

सज्जीकरण के लिए जो विशिष्ट उपाय काम में लाये जाते हैं उनमें जनसाधारण की अभ्यर्थना भी होती है और व्यक्तिगत परि-लोभन भी हो सकता है। समाचारपत्रों में सूचना, साक्षात् अथवा परम्परया ग्रन्थों से सम्बन्ध रखने वाले विशिष्ट लेख, पुस्तिकाएं तथा लघुसूचन, जनसभाओं में भाषण, जनता को आकृष्ट करने में क्षम विशिष्ट व्यक्तियों का ग्रन्थालय सम्बन्धी अभिभाषण, ग्रन्थालय पत्रि-काओं का प्रकाशन तथा अन्य प्रत्येक प्रकार का अवैयक्तिक प्रचार कार्य जनसाधारण अभ्यर्थना कहा जा सकता है। रथ्या-अनुसन्धान, संस्थाओं में गमन, निवासगृहों में मिलन, सब प्रकार के मेले, तमाशे, प्रदर्शनी और उत्सवों में ग्रन्थालय-गृहों का सञ्चालन तथा उस प्रकार के प्रत्येक अवसरों का संभाव्य पाठकों की प्राप्ति के लिए उपयोग यह सब व्यक्तिगत परिलोभन कहा जा सकता है।

२२ सेवा

प्रत्येक प्रकार के उचित प्रचार कार्य के द्वारा अधिक से अधिक संख्या में पाठकों को ग्रन्थालय में आकृष्ट करना तो अनुलय सेवा के लिए सज्जीकरण मात्र है। इसे हम बतला ही चुके हैं। जो पाठक एक बार भी ग्रन्थालय में आ जाए उसे स्थायी ग्राहक बनाए रखने के लिए तथा उसे बार बार ग्रन्थालय में बुलाने के लिए यह अनिवार्य है कि उस पाठक का व्यक्तिगत रूप से प्रेमपूर्वक स्वागत किया जाए। लेशमात्र भी समय नष्ट किए बिना उसके द्वारा उसकी आवश्यकता प्रकाशित करा ली जाए। असाधारण पाठकों की तो बात ही और है। बड़े-बड़े विद्वान् व्यक्ति भी अपनी ग्रन्थ सम्बन्धी आवश्यकताओं को स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करना नहीं जानते। यह कदाचित् ही देखा गया

है कि विशिष्ट विषय को इस प्रकार निरूपित किया गया हो कि उसके समस्त सश्लेष प्रकट हों। साथ ही उन संश्लेषो के समस्त मुखों में विद्यमान लक्ष्यों का स्पष्ट सूचन हो।

भारतीय शासक सेवा से उसी समय अवकाश प्राप्त किए हुए एक वृद्ध व्यक्ति ने एक बार लोहे की वस्तुओं के सम्बन्ध में जिज्ञासा प्रकट की। पहले तो 'भारतीय पुरातत्त्वान्वेषण संस्मरण' (*Memoirs of the Archaeological Survey of India*) की छान बीन की गई। आधुनिक फौलाद के ग्रन्थ ढूंढे गए। लौह कला से सम्बद्ध ग्रन्थों की जांच पड़ताल की गई। तब कहीं जाकर यह मालूम पड़ा कि वह पाठक न तो प्राचीन लौह वस्तुओं से प्रेम रखता था, न उसे आधुनिक लौह वस्तुओं की कला ज्ञातव्य थी। वार्तालाप जारी रखा गया। कुछ समय के पश्चात स्थापत्य शास्त्रीय सामयिकों के विज्ञापन-पत्र उसके सामने प्रदर्शित किए गए। तब सहसा उसके चेहरे पर चमक आई। उसने एक विशिष्ट चित्र ढूंढ निकाला। उस पर लौह वातायन की एक सुन्दर परिकल्पना थी। उसने यह बताया कि उसे वस्तुतः लौह वातायन का एक सुन्दर चित्र अभीष्ट था। उसकी पत्नी उनके नये घर में एक सुन्दर लौह वातायन लगाना चाहती थी। उस कार्य के लिए उसे ठेकेदार को एक अच्छा सा नमूना दिखाना था। इसीलिए उसे उस चित्र की अपेक्षा थी। पाठक के द्वारा उसके अभीष्ट विशिष्ट विषय को प्रकट कराने के लिए यह आवश्यक है कि उससे प्रश्न पूछे जाएं। उन्हें पूछते समय अत्यधिक सहानुभूति, चतुरता तथा धीरता की आवश्यकता होती है। इस प्रकार पूछी गई प्रश्नावली ही पाठक से उसके अभीष्ट विषय को व्यक्त करा सकती है।

इतना होते हुए भी यह संभव है कि चिरकाल तक खोज-खाज करनी पड़े। परीक्षण तथा भ्रान्ति की पद्धति से प्रश्न का अनुगमन करना पड़े। और विशिष्ट विषय का वास्तविक ज्ञान तभी हो जब स्वयं अभीष्ट ग्रन्थ प्राप्त हो जाए। अन्य शब्दों में यह कह सकते हैं कि जब तक अपेक्षित ग्रन्थ ही स्वयं सामने न आ जाए तब तक इस बात का ज्ञान ही न होने पाए कि पाठक किस विशिष्ट विषय को चाहता है। यह सब बड़ा भयानक प्रतीत हो सकता है। अनुलय ग्रन्थालयी में पाठकों को सहायता पहुँचाने की सदिच्छा होनी चाहिए; सफल होने

की दृढ़ धारणा होनी चाहिए; आलस्य तथा अधीरता से अकलुषित अध्यवसाय होना चाहिए। यदि ये वस्तुएं विद्यमान रही तो अनुलय ग्रन्थालयी आवश्यक शक्ति, बुद्धि तथा अवसर अवश्य प्राप्त कर लेगा। वह यह भली भांति समझ लेगा कि पाठक किस विशिष्ट विषय को चाहता है और कौनसा विशिष्ट ग्रन्थ उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है।

२२१ आत्मसहायता की ओर नयन

अधिकतर अवसर ऐसे ही आएंगे जब पाठकों को आत्म सेवा के लिए समर्थ बनाना ही अनुलय सेवा का वास्तविक अर्थ होगा। विद्यालय तथा महाविद्यालय ग्रन्थालयों में तो यह बात निरपवाद सिद्ध होगी। किन्तु अनुलय ग्रन्थालयी जब पाठक के साथ साथ आगे बढ़े और पाठक जब अपने विशिष्ट विषय तथा ग्रन्थ को प्राप्त करने के मार्ग में तीन चौथाई भाग पार कर ले, अर्थात् जब यह प्रतीत हो जाए कि पाठक को अब उसका अभीष्ट विशिष्ट विषय अथवा ग्रन्थ मिलने ही वाला है त्योंही वह अनुलय ग्रन्थालयी उस स्थान से कुछ हट सा जाए। जिससे पाठक को यह सन्तोष हो जाए कि उसने स्वयं अपनी सहायता की है। अनुलय ग्रन्थालयी के लिए यह उचित नहीं है कि वह उस सिद्धि को प्राप्त करने का श्रेय स्वयं अपने ऊपर ले। अनुलय ग्रन्थालयी को आनन्द प्राप्त करने के लिए इस ज्ञान की आवश्यकता नहीं है कि उसने पाठक के लिए स्वयं सब कुछ कर दिया। अपितु अभीष्ट वस्तु को प्राप्ति से उत्पन्न होने वाली पाठक के मुख पर की आनन्द मुद्रा ही उसके लिए वास्तविक सुख का साधन बन सकती है। यही श्रेयस्कर है।

२२२ घोल पान सेवा

कुछ अवसर ऐसे आएंगे जब अनुलय ग्रन्थालयी को प्राप्तव्य जानकारी स्वयं प्राप्त करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। उसे पाठक तक पहुँचाना पड़ेगा; और उस कार्य में पाठक कुछ भी सहयोग न दे सकेगा। विद्यालय तथा महाविद्यालय ग्रन्थालय में ऐसे अवसर न आने देने चाहिएं। सर्वजन ग्रन्थालय में यह बात बहुधा हुआ करेगी और कार्यभार ग्रन्थालय में तो अनुलय सेवा का यही साहजिक रूप होगा।

२२३ प्रस्तुत अनुलय सेवा

कुछ अवसर ऐसे आ सकते हैं जब अनुलय सेवा का केवल इतना ही अर्थ हो कि उसके लिए उद्दिष्ट विशिष्ट प्रकार के ग्रन्थों में साधारण अवलोकन करना पड़े। वे ग्रन्थ निर्देशिका, पञ्चाङ्ग, वार्षिक ग्रन्थ, नामवृत्त, मानचित्रावली, परिगणना ग्रन्थ, विश्वकोश, शब्दकोश, तथा वाङ्मय सूचि आदि होंगे। उस प्रकार की अनुलय सेवा के लिए ये ही ग्रन्थ पर्याप्त होंगे। इस प्रकार के प्रस्तुत अनुलय ग्रन्थों के द्वारा जो जानकारी प्राप्त की जा सके उसे प्रस्तुत अनुलय सेवा कहा जाता है। भारतवर्ष में इस समय ऐसे ग्रन्थों का अभाव सा है। इस दिशा में भारत बहुत पिछड़ा हुआ है। आधुनिक प्रस्तुत अनुलय ग्रन्थ केवल गत दो सौ वर्षों में ही आविष्कृत हुए हैं। लेकिन खेद है कि इस लम्बे समय में हमारा देश घोर मोह निद्रा में डूबा हुआ था। किन्तु अब वह जाग उठा है। उसकी सन्तान भी जग उठी है। उसकी ज्ञान पिपासा उसे व्याकुल बना रही है। आज प्रस्तुत अनुलय ग्रन्थालयी भी अपने को इस प्रकार पाते हैं मानों अनावृष्टि-व्याकुल प्रदेश में जल के वितरक हों। किन्तु उन्हें निराशा की भावना को अपने पास न फटकने देना चाहिए। उन्हें चाहिए कि वे अपने निराशा के अनुभवों को एकत्रित करते जाएं और जनता तथा काशकों का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट कराते जाएं। फलतः हमारी मातृभूमि प्रस्तुत अनुलय ग्रन्थों के परिपूर्ण संग्रह से सम्पन्न बन सके।

२२४ व्याप्त अनुलय सेवा

व्याप्त अनुलय सेवा का अर्थ बड़ा व्यापक है। यह उसके नाम से ही प्रकट है। इसके लिए अत्यधिक समय अति प्रभूत ग्रन्थ तथा अति प्रचुर परिश्रम और अध्यवसाय की आवश्यकता पड़ती है। इस अनुलय सेवा की सिद्धि के लिए अनेक साधनों का उपयोग करना पड़ता है। कभी कभी ग्रन्थों की परंपराओं में जानकारी ढूंढनी पड़ती है। विभिन्न प्रकार के ग्रन्थो में बहुत समय तक डुबकियां लगाने के बाद जानकारी के स्रोतों का पता लगाना पड़ता है। दूसरे ग्रन्थालयों से भी सहायता लेनी पड़ती है। और कभी कभी तो ऐसा होता है कि जब ग्रन्थ सहायता नहीं दे पाते तो अन्य बाहरी विशेषज्ञों से भी सहायता लेनी पड़ती है।

२३ आत्मसात् करण

सेवा का प्रकार कोई भी हो, जानकारी का स्रोत कोई भी हो, उसे प्राप्त करने का मार्ग चाहे कोई भी क्यों न हो; किन्तु प्रत्येक वस्तु को मानित ५" × ३" पत्रकों में लेखबद्ध कर लेना चाहिए। पत्रक की अग्ररेखा में विशिष्ट विषय का नाम वर्ग संख्या के रूप में दिया जाना चाहिए। दूसरी पंक्ति में वही नाम ग्रन्थालय की भाषा में दिया जाना चाहिए। उसके बाद उस प्रश्न का प्रदत्त उत्तर अथवा अन्विष्ट जानकारी देनी चाहिए। अन्तिम रेखा में क्रामक संख्या, शीर्षक, आख्या तथा उत्तर अथवा जानकारी के स्रोत का सम्बद्ध पृष्ठ दिया जाना चाहिए। इन सब पत्रकों को प्रति सप्ताह सुचारु रूप से अनुयुक्त करना चाहिए, जिससे भविष्य में उनका उपयोग किया जा सके।

इसके अतिरिक्त जो अनुलय ग्रन्थालयी अपने कार्य में सुख पाता है, उससे आनन्दित होता है तथा उससे अपना तादात्म्य स्थापित कर लेता है वह जब कभी किसी श्रेष्ठ अथवा कठिन अनुलय कार्य में सफलता प्राप्त करता है तब उसे व्यापक आत्मसात् करण का सुख होता है, उसके अनुभव की वृद्धि होती है तथा उसकी जानकारी के कोष का नवीनीकरण हो जाता है।

अनुभव जितना ही अधिक दीर्घकालव्यापी होगा, आत्मसात् करण भी उतना ही गहनतर होता चला जाएगा। सेवित पाठकों के प्रकार भेद जितने ही अधिक होंगे, आत्मसात् करण का क्षेत्र भी उतना ही व्यापक होगा। वस्तुतः यदि देखा जाए तो यह मानना पड़ेगा कि अनुलय ग्रन्थालयी का ज्ञान प्रतिक्षण बढ़ता रहता है। उसे केवल ग्रन्थों से ही नहीं, प्रत्युत सेवित पाठकों से भी पर्याप्त मात्रा में आहार मिलता रहता है। अनुलय ग्रन्थालयी अपने कार्य के द्वारा केवल अपने अनुभव को ही संपन्न करता रहता हो यह बात नहीं प्रत्युत वह अपने को दूसरों का प्यारा बनाता है। अनुलय ग्रन्थालयी के व्यवसाय से बढ़ कर और कोई भी व्यवसाय नहीं हो सकता। यदि किसी ग्रन्थालयी को ग्रन्थालय के सभी कार्य स्वयं करने पड़ते हों तो उसके लिए अनलय सेवा से बढ़कर और कोई दूसरा कार्य नहीं मिल सकता जिसमें वह अनलय सेवा से उत्पन्न आनन्द का शतांश भी पा सके।

—+++++—

अध्याय ३

लेन-देन कार्य

यह हमने मान लिया कि पाठक ग्रन्थालय में आया। योग्य अनुलय सेवा के द्वारा उसका स्वागत सत्कार किया गया। उसने अपने अभीष्ट ग्रन्थ को भी प्राप्त कर लिया। अब वह उस ग्रन्थ को पढ़ने के लिए अपने घर ले जाना चाहता है। आइए, अब हम देखें कि उसे इस बात की अनुमति देने के लिए हमें किस प्रकार की परिपाटी का अवलम्बन करना पड़ता है। आरोपण कार्य की आधुनिकतम, सरलतम तथा स्वल्पार्घतम रीति 'चिटिका रीति' है। ग्रन्थ के आरोपण कार्य में जिस परिपाटी का निर्वाह करना पड़ता है उसे यह रीति यान्त्रिक बना देती है।

यह रीति पाठक तथा कर्तृगण दोनों के समय की रक्षा करती है। इसके द्वारा कतिपय नियमों के उल्लंघन की संभाव्यता दूर कर दी जाती है तथा अन्य प्रकार के नियमों के उल्लंघन का उद्घाटन साहजिक बना दिया जाता है। आरोपण की इस रीति का विस्तारपूर्वक वर्णन करने के लिए यदि हम लेन-देन कार्य को शासित करने वाले तथा सर्वजन ग्रन्थालय के उपयोग से सम्बद्ध अन्य विषयों के आदर्श नियमों का निरूपण करें तो वे अधिक लाभदायक होंगे।

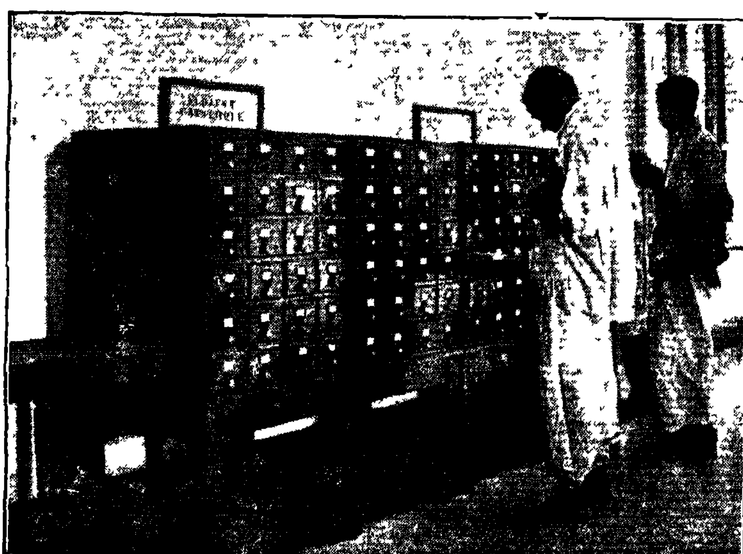
३१ आदर्श ग्रन्थालय-नियम

१ खुलने के घण्टे

११ ····ग्रन्थालय के जनता के लिए खुले रहने के घण्टे ग्रन्थालय समिति द्वारा, समय समय पर निश्चित किए जाएंगे।


PHYSICS





१२ इस समय ग्रन्थालय समिति ने निम्नलिखित निर्णय किया है।

ग्रन्थालय जनता के लिए प्रतिदिन (वर्ष के प्रत्येक दिन) प्रातः ७ से रात्रि ६ बजे तक खुला रहेगा।

विशेष :— उद्धरण स्थान ग्रन्थालय बन्द होने के आध घण्टा पहले बन्द कर दिया जाएगा।

२ ग्रन्थालय में प्रवेश

२१ जो व्यक्ति विकृतमस्तिष्क हो, विकृतदेह हो, विकृत-वेष हो अथवा अन्य किसी प्रकार से ग्रन्थालय में अप्रवेश्य हो उसे ग्रन्थालय में प्रवेश न मिल सकेगा।

विशेष :— इन विषयों में ग्रन्थालयी का अथवा उसकी अनुपस्थिति में उसके प्रतिनिधि का निर्णय अन्तिम होगा।

[नियमों में ऐसी व्यवस्था हो सकती है कि अ-करदाता तथा वैदेशिक (अजनबी) सरीखे विशिष्ट प्रकार के व्यक्तियों को विशिष्ट अनुमति के द्वारा ग्रन्थालय में प्रवेश दिया जाए।]

२२ ग्रन्थालय के उपयोग का इच्छुक व्यक्ति, इसी उद्देश्य से रखी हुई द्वार-पञ्जिका में स्पष्टाक्षरों में अपना नाम तथा पता लिखे। इस प्रकार के संलेख का अर्थ यह होगा कि वह व्यक्ति ग्रन्थालय के नियमों को पालन करने का अङ्गीकार कर चुका है।

२२१ छड़ी, छाता, सन्दूक तथा अन्य आधार-पात्र और इसी प्रकार की अन्य वस्तुएं जो लेन-देन लेखक द्वारा रोक दी जाएं, उन्हें प्रवेश द्वार पर ही छोड़ देना पड़ेगा।

२२२ कुत्ते तथा अन्य पशुओं को प्रवेश न मिलेगा।

२४१ ग्रन्थालय में पूर्ण मौन तथा शान्ति का अवलम्बन करना पड़ेगा।

२४२ थूकना और तम्बाकू पीना सर्वथा निषिद्ध है।

२४३ निद्रा करना सर्वथा वर्ज्य है।

२५१ ग्रन्थालय के किसी भी मुद्रित अथवा हस्तलिखित ग्रन्थ पर कुछ भी लिखना कोई चिह्न बनाना अथवा उसे किसी प्रकार की हानि पहुँचाना निषिद्ध है।

२५२ ग्रन्थालयी की स्पष्ट अनुमति के बिना प्रतिरेखाङ्कन अथवा यान्त्रिक प्रतिमूर्तीकरण नहीं किया जा सकता।

२५३ ग्रन्थ अथवा ग्रन्थालय की अन्य सामग्री को यदि किसी प्रकार की क्षति या हानि पहुँचाई गई तो उसके लिए पाठक उत्तरदायी ठहराए जाएंगे। उनका यह दायित्व होगा कि जिस ग्रन्थ अथवा अन्य सामग्री को क्षति या हानि पहुँचाई गई हो उसे वे बदल दें अथवा उसका मूल्य चुकाएं। यदि किसी संघात का एक ग्रन्थ क्षत या नष्ट हो जाएगा तो सारे संघात को बदलना पड़ेगा।

२५४ ग्रन्थालय से विदा होने के पूर्व पाठक का यह कर्तव्य है कि वह अवलोकनार्थ लिए हुए मुद्रित अथवा लिखित ग्रन्थ को या मानचित्र आदि को लेन-देन लेखक को लौटा दे।

२६ यदि किसी प्रकार का अशिष्ट व्यवहार किया गया जाए अथवा सेवा में किसी प्रकार की त्रुटि हो तो यह बात ग्रन्थालयी को अथवा उसकी अनुपस्थिति में उसके प्रतिनिधि को उसी क्षण सूचित कर देनी चाहिए।

३ उद्धरण सुविधा

३१ निम्नलिखितों में से कोई भी व्यक्ति ग्रन्थालय के सेव्य रूप में नाम लिखाकर उद्धरण रूप में ग्रन्थों को बाहर ले जा सकता है :—

१. ग्रन्थालय क्षेत्र का करदाता, और निवासी अथवा उस क्षेत्र का व्यापारी कोई भी व्यक्ति।

२. ग्रन्थालय क्षेत्र का निवासी और ग्रन्थालय क्षेत्र के निवासी किसी करदाता द्वारा गृहीतप्रातिभाव्य (जिसकी जामिन ली गई हो) कोई भी व्यक्ति।

३. ग्रन्थालय क्षेत्र में स्थित किसी संस्था का कार्यकर्ता

तथा संस्था के अधिष्ठाता द्वारा गृहीतप्रतिभाव्य कोई भी व्यक्ति।

३११ सेव्य के रूप में नाम लिखाने के लिए प्रार्थी को नामलेखन का पत्र भरना पड़ेगा तथा उस पर हस्ताक्षर करना पड़ेगा। वह प्रार्थनापत्र बिना किसी मूल्य के ग्रन्थालय लेन-देन स्थान पर मिलेगा। [प्रार्थी को रु० की नगद जमानत भी देनी पड़ेगी।]

विशेष :— ऊपर के नियम में कोष्ठक में दिए हुए अंश से हम सहमत नहीं हैं।

३२ पाठक चिटिका

३२ प्रत्येक सेव्य को उतनी ही पाठक चिटिकाएं दी जाएंगी, जितने ग्रन्थों को वह एक साथ ग्रन्थालय से बाहर ले जाने का अधिकारी होगा।

३२१ पाठक की चिटिकाएं एक वर्ष तक कार्यशील रहेंगी। किन्तु नामलेखन के नये प्रार्थनापत्र के भरने पर तथा साथ ही गतकाल चिटिकाओं के लौटा देने पर उनका नवीनीकरण किया जा सकता है।

३२२ सेव्य को उसकी एक चिटिका के बदले में एक ही ग्रन्थ दिया जा सकेगा। वह सेव्य जब उस ग्रन्थ को लौटा देगा तब वह चिटिका उसे लौटा दी जाएगी। यदि वह ग्रन्थ देय तिथि के बाद लौटाया गया तो उसे वह चिटिका तभी लौटाई जाएगी जब वह सेव्य अतिदेय शुल्क को चुका देगा।

३३ जमानत को प्रत्यावर्तित करने के लिए एक सप्ताह की सूचना देनी पड़ेगी। जब तक सेव्य ग्रन्थालय से लिए हुए सभी ग्रन्थों को न लौटा देगा, अपने सभी देय को न चुका देगा तथा अपनी सभी चिटिकाओं को विधिवत् न लौटा देगा तब तक उसकी जमानत वापस न दी जा सकेगी।

विशेष :— नियम ३११ में कोष्ठक में दिया हुआ अंश यदि हटा दिया गया तो यह नियम भी हटा दिया जाएगा।

३४ चिटिका का नाश

३४ जिस सेव्य की चिटिका खो जाए, उसे चाहिए कि वह इस बात की लिखित सूचना शीघ्र ही ग्रन्थालयी को दे दे।

३४१ खोई हुई चिटिका के बदले में प्रति-चिटिकाएं तीन महीने के पूर्व न दी जा सकेंगी। इस बीच सेव्य का यह कर्तव्य होगा कि वह उन चिटिकाओं के खोजने तथा प्राप्त करने का प्रयत्न करे। उस अवधि के बीत जाने के बाद एक दूसरा विवरण भेजे कि उसकी खोज का क्या परिणाम हुआ।

३४२ यदि चिटिका प्राप्त न की जा सकी हो तो उस सेव्य को उस कार्य के लिए स्वीकृत पत्र में उत्तरदायित्व प्रतिज्ञा भरनी पड़ेगी तथा आने शुल्क के रूप में प्रत्येक प्रति-चिटिका के लिए देने पड़ेंगे।

३४३ उत्तरदायित्व प्रतिज्ञा तथा शुल्क पा लेने के बाद उस सेव्य को प्रति-चिटिकाएं दे दी जाएंगी।

३५ यदि किसी सेव्य के द्वारा उसकी एक या अधिक चिटिकाएं खो दी जाती हैं और वह अपनी जमानत के द्रव्य को वापस लेने का प्रयत्न करता है तो उसके प्रार्थनापत्र पर तब तक ध्यान न दिया जाएगा जब तक चिटिका के खो जाने की सूचना देने के समय से छः मास न व्यतीत हो चुके होंगे। यदि उस अवधि के बीतने के पूर्व वह सेव्य अपनी चिटिकाओं को ढूंढ निकालने में समर्थ न हो सकेगा तो उसके लिए यह आवश्यक होगा कि वह उन खोई हुई चिटिकाओं के सम्बन्ध में स्वीकृत पत्र पर उत्तरदायित्व प्रतिज्ञा दे। उस उत्तरदायित्व प्रतिज्ञा के प्राप्त होने के बाद प्रत्यावर्तन के प्रार्थनापत्र पर सामान्य रूप से विचार किया जा सकेगा।

विशेष :— नियम ३११ में कोष्ठक में दिया हुआ अंश यदि हटा दिया गया तो यह नियम भी हटा दिया जाएगा।

४ उद्धरण की अभिसन्धियां

४१ किसी सेव्य को एक समय······से अधिक पृथक्

संपुट उद्धरण के रूप में न दिए जा सकेंगे। उसे ग्रन्थालय से ग्रन्थों को घर ले जाने की तथा अपने घर से ग्रन्थों को ग्रन्थालय में लाने की व्यवस्था स्वयं करनी पड़ेगी। अशक्त तथा महिला सेव्यों के लिए ग्रन्थ सप्ताह में एक बार उनके घर पहुँचाये जा सकेंगे। किन्तु इसके लिए उन्हें......त्रैमासिक अग्रिम चन्दा देना पड़ेगा।

४२ लेन स्थान को छोड़ने के पहले सेव्य का यह कर्तव्य है कि वह ग्रन्थ का परीक्षण कर ले और इस बात का समाधान कर ले कि उसको दिया हुआ ग्रन्थ अच्छी अवस्था में है। इसके विपरीत, यदि ग्रन्थ में किसी प्रकार का दोष हो तो उसका यह कर्तव्य है कि वह ग्रन्थालयी अथवा उसकी अनुपस्थिति में उसके प्रतिनिधि का ध्यान उस ओर आकृष्ट करे। अन्यथा ग्रन्थ के दोष के लिए वह सेव्य उत्तरदायी ठहराया जाएगा। फलतः सदोष प्रति के स्थान में उसे निर्दोष प्रति देनी पड़ेगी।

४२१ यदि किसी संघात का एक ग्रन्थ क्षत अथवा नष्ट हो जाएगा तो पूरे संघात को बदलने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। ग्रन्थ की क्षति का ज्ञान होते ही तत्क्षण उसका मूल्य जमा कर देना पड़ेगा। वह मूल्य उस समय लौटा दिया जाएगा जब ग्रन्थ और उसका संघात पुनः नवीन कर दिया जाएगा।

४३ सामयिक प्रकाशन, निर्देशिकाएं, अप्रतिमूर्ति ग्रन्थ तथा ग्रन्थालयों के द्वारा अनुलय ग्रन्थ के रूप में घोषित ग्रन्थ बाहर नहीं ले जाये जा सकेंगे।

४४ ग्रन्थालय से लिये हुए ग्रन्थों को सेव्य और किसी को उद्धरण-देन के रूप में नहीं दे सकता।

४५ उद्धरण पर लिये हुए सब ग्रन्थ आरोपण तिथि से एक पक्ष समाप्त होने के पूर्व लौटा देने पड़ेंगे।

४५१ जो ग्रन्थ अस्थायी रूप में अधिक मांग में हों वे ग्रन्थ आवश्यकतानुसार निर्दिष्ट संक्षिप्त समय के लिए बाहर

ले जाये जा सकेंगे। अथवा उन ग्रन्थों को ४३ नियम के अनुसार अस्थायी रूप में अनुलय ग्रन्थ घोषित कर दिया जाएगा।

४५२ ग्रन्थालयी के आदेश से उद्धरण किसी भी समय रोक दिया जा सकेगा।

४६ यदि कोई ग्रन्थ देय होते हुए भी यथासमय ग्रन्थालय में न लौटा दिया जाएगा तो उस अवस्था में प्रतिदिन प्रतिसंपुट १ आने के हिसाब से अतिदेय शुल्क लगाया जाएगा।

४७ उद्धरण को एक पक्ष से अधिक समय के लिए नवीकृत किया जा सकता है, यदि

(१) नवीकरण का प्रार्थनापत्र ग्रन्थालयी के पास, ग्रन्थ के देय होने की तिथि से कम से कम ३ दिन पूर्व तथा ३ दिनों से अनधिक दिनों के बीच पहुँच जाए;

(२) उस बीच किसी दूसरे सेव्य ने उस ग्रन्थ के लिए मांग न उपस्थित की हो, और

(३) किसी ग्रन्थ को परीक्षण के लिए ग्रन्थालय में उपस्थित किए बिना उसका निरन्तर तीन बार से अधिक नवीकरण अनुमत न किया जाएगा।

यदि द्वितीय अभिसन्धि पूर्ण न हो, अर्थात् उस ग्रन्थ की दूसरे पाठक द्वारा मांग उपस्थित की जाए तो ग्रन्थालयी उस उद्देश्य से एक पत्र लिखकर उस सेव्य के पास भिजवाएगा और उस अवस्था में वह ग्रन्थ उस देय तिथि पर लौटाना पड़ेगा।

४८ जिस सेव्य के नाम के आगे अतिदेय अथवा अन्य किसी प्रकार का शुल्क चढ़ा हुआ होगा उसे ग्रन्थालय से ग्रन्थों को घर ले जाने की अथवा अपनी जमानत के रुपयों को लौटा देने की अनुमति तब तक न दी जाएगी जब तक वह अपने देय द्रव्य को चुका नहीं देगा।

५ सामान्य

५१ विशेष परिस्थिति में ग्रन्थालयी को यह अधिकार

होगा कि वह बिना किसी कारण बताए हुए किसी व्यक्ति को ग्रन्थालय में प्रविष्ट होने से अथवा किसी ग्रन्थ का उपयोग किए जाने से रोक दे।

५२ विशेष परिस्थिति में ग्रन्थालय समिति को यह अधिकार होगा कि वह बिना किसी कारण बताए हुए ग्रन्थ-उद्धरण-सुविधा के प्रार्थनापत्र को अस्वीकृत कर दे।

५३ ग्रन्थालय समिति को यह अधिकार होगा कि स्व-निर्णीत अभिसन्धियों के आधार पर विशिष्ट उद्धरण की अनुमति दे।

५४ इन नियमों के उल्लंघन से ग्रन्थालय में प्रवेश करने की तथा ग्रन्थालय से ग्रन्थ बाहर ले जाने की सुविधा समाप्त की जा सकती है।

३२ आरोपण सामग्री के भाग

आरोपण सामग्री के भाग निम्नलिखित समूहों में विभक्त किए जा सकते हैं :—

(१) ग्रन्थ के द्वारा नीयमान वस्तुएं;

(२) पाठक के द्वारा नीयमान वस्तुएं; तथा

(३) लेन-देन स्थान पर अपेक्षित अन्य वस्तुएं।

३२१ ग्रन्थ द्वारा नीयमान वस्तुएं

ग्रन्थ में साधारणतः पाये जाने वाले आरोपण सामग्री के भाग निम्नलिखित हैं:—

१ तिथि पत्र ; तथा २ ग्रन्थ चिट्टिका।

३२११ तिथि पत्र

तिथि पत्र की संकेत संख्या ऑ६१ है। यह ऑक्टेवो आकार का होता है। वह ग्रन्थ में इस प्रकार चिपकाया जाए कि उसका प्रथम पत्र प्रतीत हो। यह १६ पाउण्ड, छपाई के सफेद कागज का ७½" × ४½" परिमाण का एक अंश होना चाहिए। इसके तल का १½" भाग उलट देना चाहिए। इस उलटे हुए भाग की किनारियां इस प्रकार चिपका

देनी चाहिएं कि यह खलीता बन जाए, जिसका खुला हुआ भाग (मुंह) २½" चौडा हो। जब ग्रन्थ ग्रन्थालय में रहेगा उस समय इसमें ग्रन्थ-चिटिका रखी रहेगी। अग्रिम पृष्ठ पर इसका चित्र दिया गया है। उलटा हुआ भाग मुद्रित तथा पत्र का और अंश रेखाङ्कित होना चाहिए। चित्र में यह भी दिखाया गया है।

३२१२ ग्रन्थ चिटिका

ग्रन्थ चिटिका की सङ्केत संख्या अ ६२ है। यह असाधारण रूप में छोटे आकार का होता है। इसे मनिला कागज से खलीते के रूप में बनाना चाहिये। जब ग्रन्थालय से ग्रन्थ बाहर जाएगा तो पाठक चिटिका इसी में रखी रहेगी। इसका पृष्ठभाग ३" × १¾" होगा। अग्र-भाग १½" × १¾" होगा। पृष्ठभाग के अन्तर्देश के खुले भाग में प्रथम रेखा मे ग्रन्थ की वर्ग संख्या, द्वितीय में पुस्तक संख्या तथा तृतीय में परिग्रहण संख्या लिखी जानी चाहिए। पुरोभाग में प्रथम तथा द्वितीय रेखाओं में ग्रन्थकार अथवा शीर्षक के रूप में उपयुक्त उसका प्रतिनिधि तथा तृतीय रेखा में उसकी लघु आख्या दी जानी चाहिए। अग्रिम पृष्ठ पर दिए हुए चित्र में, तिथि पत्र के खलीते से बाहर निकला हुआ ग्रन्थ चिटिका का अंश दिखाई पड़ रहा है।

३२१३ ग्रन्थ खलीता

अबतक यह रूढि प्रचलित थी कि एक पृथक् ग्रन्थ खलीता रखा जाए, जिसमें योग्य आकार की मनिला कागज की बनी हुई ग्रन्थ चिटिका प्रविष्ट कर रखी जा सके। चाल यह थी कि उसे ग्रन्थ आवरण के अन्त भाग के दक्षिण पार्श्व में तल से एक इंच की दूरी पर तथा दोनों पार्श्व किनारों के मध्य भाग में चिपका दिया जाए। ३२११ अनुच्छेद में सुझाया हुआ विकल्प स्वल्पार्घ तथा सुन्दरतर है।

तिथिपत्र

७ जन ५१			
२३ जन ५१			
६ फर ५१			
२७ फर ५१			
१७ मार्च ५१			
	२२ क्ष१ १ ३६,२४१		

	देहली सर्वजन ग्रन्थालय	
का०सं० २२ क्ष१ परि० सं०१,३६,२४१	उद्धरण सुलभता तिथि	२३ दिस ५०
यह ग्रन्थ लौटा देना चाहिए। रखा जाएगा उतने शुल्क देना पड़ेगा।	सर्वान्तिम निर्दिष्ट तिथि के अन्यथा उस तिथि के पश्चात् दिन, प्रतिदिन एक आने	पूर्व अथवा उस दिन जितने दिन वह ग्रन्थ के प्रमाण से अतिदेय

१२२ पाठक द्वारा नीयमान वस्तुएं

प्रत्येक सेव्य को उतनी पाठक चिटिकाएं दी जानी चाहिएं जितनी ग्रन्थालय के नियमों द्वारा अनुमत हों। पाठक चिटिका के लिए सङ्केत संख्या अ ६१ है। यह असाधारण रूप में छोटे आकार की होती है। इसे मोटे ब्रिस्टल बोर्ड अथवा उसी के समान किसी कड़े कागज से बनाना चाहिए, जिसकी मोटाई प्रायः १/१२" हो। पाठक चिटिका ऐसी हो कि उसे ग्रन्थ चिटिका में सरलता से प्रविष्ट किया जा सके। इसका आकार २" × १½" हो। एक पार्श्व में ग्रन्थालय का मुद्राचिह्न मध्यभाग में छपा हुआ हो। उस मुद्राचिह्न के ऊपर 'अपरिवर्तनीय' यह शब्द तथा उसके (मुद्राचिह्न के) नीचे ग्रन्थालय का नाम छपा हो। दूसरा पार्श्व रिक्त छोड़ दिया जाए। वहां प्रथम रेखा में चिटिका की संख्या, द्वितीय में सेव्य का नामान्त्यशब्द तथा तृतीय में कोष्ठक के बीच नामादिशब्द लिखे जाएंगे। उनके बाद सेव्य का सङ्केत (पता) लिखा जाएगा। आगे दिए हुए चित्र में पाठक चिटिका के दोनों पार्श्व तथा एक ऐसी ग्रन्थ चिटिका जिसमें पाठक चिटिका प्रविष्ट की हुई हो, दिखलाई गई है।

यहां एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है। मन्तव्य की स्पष्टता के लिए तथा निश्चितता के लिए यह मान लिया गया है कि एक सेव्य को तीन पाठक चिटिकाएं दी गई हैं। किसी भी समय उसके पास ग्रन्थालय के ग्रन्थों की संख्या तथा उसके पास की रिक्त चिटिकाओं की संख्या दोनों मिलाकर तीन ही होनी चाहिएं। यदि उसके पास तीन ग्रन्थ हैं तो उसकी एक भी चिटिका रिक्त न रहेगी। यदि उसके पास दो ग्रन्थ हैं तो उसकी एक चिटिका रिक्त रहेगी। यदि उसके पास एक ग्रन्थ है तो उसकी दो चिटिकाएं रिक्त रहेंगी। यदि उसके पास एक भी ग्रन्थ नहीं है तो उसकी तीनों चिटिकाएं रिक्त रहेंगी।

नीचे चिटिकाओं के लिए एक आदर्श वर्ण पद्धति दी जाती है:—

बाल चिटिका	रक्त
कथा चिटिका	पीत
साधारण चिटिका	हरित

साधारणतः पीत चिटिका के बदले में साधारण ग्रन्थ भी लिया जा सकता है। किन्तु हरित चिटिका के बदले में कोई भी ग्रन्थ नहीं लिया जा

सकता। यदि ग्रन्थालय में सामयिक उद्धरण सरीखी और भी सुविधाएं हों तो वैसी सुविधाओं के सूचक योग्य वर्ण काम में लाये जा सकते हैं।

२२
भ१
१,३६,२४१

रंगनाथन
(श्री. रा.) तथा
नागर
(मु. ला.)
ग्रन्थालय प्रक्रिया

ग्रन्थ चिटिका

२२
भ१
१ ३६,२४१

२०६ख५८.१२.३
योगेश्वर

रंगनाथन
(श्री. रा) तथा
नागर
(मु. ला.)
ग्रन्थालय प्रक्रिया

संयुक्त
चिटिका युगल

अपरिवर्तनीय

देहली
सर्वजन
ग्रन्थालय

पाठक चिटिका
अग्र

२०६ख ५८.१२.३
योगेश्वर
(त्रि. रं.)
स६ मारिस नगर
देहली. ८.

श्री. रा. रं.
६-३-५१

पाठक चिटिका
पृष्ठ

३२३ लेन-देन स्थान पर अपेक्षित वस्तुएं

लेन-देन स्थान पर निम्नलिखित वस्तुएं होनी चाहिएं :—

१ पाठक चिटिकाओं के अनुयोग के लिए पात्रक

२ रबर तिथि-अङ्कक तथा मसीदायक गद्दी

३ ग्रन्थ चिटिका के आकार प्रकार के एक सौ युग्म अभिज्ञान। वे मनिला कागज के बने हुए हों। उन पर एक से सौ तक संख्याएं प्रत्येक युग्म पर मुख भाग में मुद्रित होनी चाहिएं।

४ छड़ी, छाता, सन्दूक सरीखी वैयक्तिक वस्तुओं के रक्षार्थ अभिज्ञान।

३२३१ चिटिका पात्रक

प्रायः एक दर्जन प्राथमिक अथवा आरोपण पात्रकों की व्यवस्था होनी चाहिए। उनका आन्तर प्रमाण १२" × २" × १½" होना चाहिए। तीन अथवा उससे अधिक द्वितीयक अथवा विभाजक पात्रक अपेक्षित हैं। ये त्रिगुणित पात्रक हों। इनके प्रत्येक अवयवात्मक पात्रक का आन्तर प्रमाण १८" × २" × १½" होना चाहिए। तृतीयक, अनुयोगक अथवा आरोपित पात्रक तीन (यदि सेव्य अधिक हों तो अधिक) होने चाहिएं। इनमें से प्रत्येक नवगुणित पात्रक हों। प्रत्येक नवगुणित पात्रक के अवयवात्मक प्रत्येक पात्रक का आन्तर प्रमाण २४"×२"× १½" होना चाहिए। प्रत्येक सम्पूर्ण पात्रक प्रवणरूप होना चाहिए, आगे की ओर झुकता हुआ होना चाहिए। निकटतर किनारा (अन्त) १½" ऊंचे आधार पर स्थित होना चाहिए।

३२४ लेन-देन स्थान

लेन-देन स्थान की योजना इस प्रकार करनी चाहिए कि वहां कर्तृगण के लिए एक प्रकार का द्वीपाकार घेरा बन जाए। उसके चारों ओर की भूमि (स्थान) इस प्रकार योजित हो कि २ अथवा ३ फीट चौड़ाई का सङ्कीर्ण अन्तर्मार्ग बन जाए। इसका सुफल यह होगा कि पाठकों का क्रमिका-निर्माण स्वतः सिद्ध हो जाएगा। प्रवेश तथा निर्गम द्वार चौड़ाई में केवल १½ फीट हों। वे द्वीपाकार घेरे के आन्तर कोण पर हों। उनमें एक प्रकार का यान्त्रिक द्वार होना चाहिए, जिसे द्वीपाकार घेरे के अन्दर रहने वाले कर्तृगण नियन्त्रित कर सकें।

३२५ सत्प्रवृत्ति पेटिका

प्रवेश यान्त्रिक द्वार के निकट एक सत्प्रवृत्ति पेटिका रखी होनी चाहिए। उसके ढक्कन के बीच एक छेद हो तथा उसमें ताला लगा हुआ हो। हमारे मन्दिरों में ऐसी पेटिकाएं होती हैं। भक्तजन उसी में दान-दक्षिणा आदि चढावे का सामान डाल दिया करते हैं। जो सेव्य ग्रन्थों को देय तिथि के दिन न लौटा सके हों और उन पर अतिदेय शुल्क चढा दिया गया हो वे सेव्य अपने अतिदेय शुल्क को उस पेटिका में डाल सकते हैं। ग्रन्थालयों ने वर्षों तक अतिदेय शुल्क संग्रह की विक्टोरियन रीति का अनुपालन किया। इसमें विधिवत् प्राप्तिपत्र दिए जाते थे तथा पृथक् लेखा रखा जाता था। किन्तु अब उन ग्रन्थालयों की आंखें खुल गई हैं तथा उन्होंने यह अनुभव कर लिया है कि (१) यह सब प्रपञ्च 'टके की मुर्गी और नव टका चुँथाई" है तथा (२) इस प्रकार नागरिक सत्प्रवृत्ति के अभिवर्धन का सुन्दर अवसर हाथ से खो दिया जाता है। अमेरिका में तो आज बस शुल्क का संग्रह करने के लिए भी इस प्रकार की सत्प्रवृत्ति पेटिका की रीति का अनुसरण किया जाता है। हमारे ग्रन्थालयों को चाहिए कि बिना विचारे इस प्रकार के विश्वसन से कार्यारम्भ करें। विश्वास ही विश्वास का जनक होगा।

३३ आरोपण तथा अवरोपण

३३१ आरोपण कार्य

सेव्यों को इस बात का अभ्यास करवाना चाहिए कि वे ग्रन्थों को आरोपण के लिए अर्थात् उद्धरण के रूप में घर ले जाने के लिए सहायक रूप में लेन-स्थान पर उपस्थित करें। वे अपने उद्दिष्ट ग्रन्थ को इस प्रकार प्रस्तुत करें कि उसका मुखावरण खुला हुआ हो तथा उनकी एक पाठक चिटिका उस ग्रन्थ पर रखी हुई हो। यह इसलिए कि लेन-स्थान का कर्मचारी तिथिपत्र को सरलता से पढ़ सके। वस्तुतः उन्हें इस बात का भी अभ्यासी बनाना चाहिए कि वे क्रमिका का ध्यान रखें।

३३११ आरोपण तथा अवधान

प्रत्येक ग्रन्थ के लिए ग्रन्थ-चिटिका की क्रामक संख्या तथा

परिग्रहण संख्या का तिथि पत्र पर दी हुई उन संख्याओं के साथ मिलान कर लेना चाहिए। यदि वे ठीक हैं तो ग्रन्थ चिटिका में पाठक चिटिका को प्रविष्ट कर देना चाहिए। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि ग्रन्थ की वर्ग संख्या पाठक की सेव्य संख्या से समञ्जस है। यदि वह सन्तोष जनक है तो तिथि पत्र के सर्व प्रथम रिक्त गृह में देय तिथि मुद्रा लगा देनी चाहिए। इस कार्य को करते हुए यान्त्रिक द्वार मुक्त कर देना चाहिए। पाठक को ग्रन्थ सौंप देना चाहिए और संयुक्त चिटिका युगल को आरोपण पात्रक में प्रविष्ट कर देना चाहिए। वर्ग संख्या तथा सेव्य संख्या में यदि किसी प्रकार का असामञ्जस्य हो तो उसी क्षण उसकी निवृत्ति कर लेनी चाहिए। यदि वह जटिल हो तो वह कार्य और किसी सहयोगी को सौंप देना चाहिए। कारण यान्त्रिक द्वार को पार करने वाले सेव्यों की परंपरा को व्यर्थ ही रोक देना और किसी एक ही समस्या में उलझकर गति में रुकावट उत्पन्न कर देना सर्वथा अनुचित है। किसी को अपमानित किए बिना, अत्यन्त सावधानता के साथ, यान्त्रिक द्वार को पार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का परीक्षण करते रहना चाहिए। इस कार्य में न तो किसी और को तिरस्कृत होने देना चाहिए और न स्वयं अपना ही प्रमाद होने देना चाहिए। पार करने वाला व्यक्ति चाहे उद्धरण लेकर जा रहा हो अथवा यों ही जा रहा हो, इस बात का पूर्ण परीक्षण कर लेना चाहिए कि वह अपने साथ ग्रन्थालय के किसी ग्रन्थ अथवा अध्ययन सामग्री को अधिकार के बिना, भ्रम से या दुर्बुद्धि से, बाहर तो नहीं ले जा रहा है।

३३१२ प्रतिश्रुत ग्रन्थ निर्गम

जब कोई पाठक अपने प्रतिश्रुत ग्रन्थ को लेने के लिए ग्रन्थालय में आए तो उसके प्रतिश्रावक पत्रक को वापस ले लेना चाहिए। इस बात का समाधान कर लेना चाहिए कि यही वह यथार्थ व्यक्ति है जो उस ग्रन्थ को पाने का अधिकारी है। इसके पश्चात् साधारण रीति के अनुसार उस ग्रन्थ का निर्गम कर देना चाहिए। यदि उस ग्रन्थ की ग्रन्थ चिटिका में कोई लाल पर्चा हो और उसमें उस व्यक्ति से भिन्न अन्य किसी व्यक्ति का नाम लिखा हुआ हो तो इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह उसी में पड़ा रहे।

३३१३ विमिश्रण

जब कभी पाठकों से अवकाश मिले तब, सावकाश कार्य के रूप में, आरोपण पात्रक में एकत्रीकृत संयुक्त चिटिका युगलों को उनके वर्गीकृत क्रम के अनुसार व्यवस्थापित कर लेना चाहिए। उनके लिए उद्दिष्ट उद्धरण गणना पत्र को अङ्कित करना चाहिए। इसके लिए उचित विषय के सामने एक ऊर्ध्व रेखा खींचते जाना चाहिए। हां, यह ध्यान रहे कि पांचवीं रेखा समलम्ब हो तथा पूर्व लिखी हुई चारों रेखाओं को काट दे। इससे लाभ यह होगा कि पञ्चकों के समूह में गणना सुलभ हो जाएगी। प्रत्येक ग्रन्थ के लिए ज्यों ज्यों गणनाएं विहित होती जाएं त्यों त्यों संयुक्त चिटिका युगलों को विमिश्रण पात्रक में परिवर्तित कर देना चाहिए। वे वर्ग संख्या के क्रमानुसार व्यवस्थित रहें इसका ध्यान रखना चाहिए।

३३१४ उद्धरण की असाधारण अवधि

किन्तु असाधारण काल के लिए उद्धृत ग्रन्थ के विषय में विशेष सावधानता रखनी चाहिए। आरोपण के अनन्तर उसी क्षण संयुक्त चिटिका युगल को प्रवेश स्थान पर रखे हुए आरोपित पात्रक में उचित तिथि दर्शक के पश्चाद् भाग में अनुयुक्त कर देना चाहिए। इसके पूर्व ही गणनाओं के भरने का भी ध्यान रखना चाहिए।

३३१५ दैनिक गणनाएं

दिनान्त में गणनाओं का संकलन करना चाहिए। उद्धरण की संकलित संख्या का विमिश्रण पात्रक में रखे हुए संयुक्त चिटिका युगलों की संख्या के साथ मिलान कर लेना चाहिए। इस बात की जांच कर लेनी चाहिए कि कोई अव्यवस्था तो नहीं है। अगर कोई अव्यवस्था हो तो उसे ठीक कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् संयुक्त चिटिका युगलों को आरोपित पात्रक में उचित देय तिथि के पीछे परावर्तित कर देना चाहिए।

३३१६ समारोप परिपाटी

समारोप के पूर्व तिथि-अङ्कक को अनन्तर-कार्य-दिन-संवादी देय तिथि के लिए परिवर्तित कर लेना चाहिए। गणना-पञ्जिका पर

एक नये पत्र को रख देना चाहिए। इस बात का भी परीक्षण कर लेना चाहिए कि लेन स्थान पर किसी प्रकार की पुञ्जीभूत वस्तुएं एकत्रित तो नहीं हो गई हैं। यदि वे हों तो उन्हें हटा देना चाहिए। लेन-स्थान को साफ-सुथरा कर देना चाहिए, जिससे कि अनन्तर दिन सुन्दर रीति से कार्य आरम्भ किया जा सके।

३३१७ गणनाओं का समवायकरण

दैनिक गणना पञ्जिका में गणनाओं का लेखन तथा वर्धन करते रहना चाहिए। प्रत्येक सप्ताह, मास तथा वर्ष के पश्चात् समवेत संकलन का प्रदर्शन करना चाहिए।

३३२ अवरोपण कार्य

अवरोपण कार्य में निम्नलिखित वस्तुएं आती हैं:—(१) उद्धरण का नवीनीकरण; (२) पाठकों की वैयक्तिक वस्तुओं का निक्षेपण; (३) उद्धरणों का अवरोपण; (४) अतिदेय शुल्क का संग्रह; तथा अन्य परिपाटी। अवरोपण स्थान पर बैठा हुआ कर्मचारी ही पहला व्यक्ति होता है जिससे पाठक ग्रन्थालय में सर्व प्रथम मिलता है। अतः उसे चाहिए कि वह पाठक का प्रेमपूर्ण स्वागत करे। उसके प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दे तथा उसके हृदय में ऐसी चाह उत्पन्न करवा दे कि वह ग्रन्थालय में प्रवेश करे और ग्रन्थालय की सेवा स्वीकार करे।

प्रत्येक घण्टे के समाप्त होने पर द्वार पञ्जिका की अन्तिम पूरित रेखा के अन्त में घण्टे का संलेखन किया जाए।

३३२१ आरम्भ परिपाटी

प्रातः काल सर्व प्रथम कार्य यह करना चाहिए कि उस दिन के तिथि दर्शक के पीछे रखे हुए संयुक्त चिटिका युगलों में से उन युगलों को चुन लिया जाए जिनमें सफेद पर्चे लगे हुए हों। वे आरोपण सहायक को दे दिए जाएं जिससे वह उनका नवीकरण कर दे।

३३२२ स्वागत

जब कोई पाठक प्रवेश यन्त्र-द्वार के निकट आए तो उसका

प्रेम पूर्वक स्वागत करना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं कि उसके साथ बातचीत करने में अपने को भुला दिया जाए। उसके पास विद्यमान सभी ग्रन्थ, छड़ी, छाता, थैला, सन्दूकची तथा सभी प्रकार के वस्तु-आधारों को अपने अधिकार में कर लेना चाहिए। उसकी वस्तुओं के बदले में उसे एक अभिज्ञान दे देना चाहिए। युग्म-अभिज्ञान को उसकी वस्तुओं पर रख देना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह द्वार पञ्जिका को शुद्ध एवं पूर्ण रीति से भरता है।

३३२३ अवरोपण

यदि पाठक ग्रन्थालय के ग्रन्थ को लौटाना चाहता है तो उसे इस बात की दीक्षा देनी चाहिए कि वह उस ग्रन्थ को विशिष्ट सुविधा-जनक रीति से उपस्थित करे। वह रीति यही है कि ग्रन्थ का मुख आवरण खुला हुआ हो तथा तिथि पत्र अवरोपण लेखक के सामने हो। तिथि पत्र पर मुद्रित अन्त्य देय तिथि तथा उसी पर लिखित क्रामक संख्या की सहायता से उस ग्रन्थ के संयुक्त चिटिका युगल को ढूंढ कर निकाल लेना चाहिए। यदि ग्रन्थ चिटिका की परिग्रहण संख्या ग्रन्थ के तिथि पत्र पर लिखी हुई परिग्रहण संख्या से अभिन्न हो तो ग्रन्थ चिटिका को तिथि पत्र के खलीते में प्रविष्ट कर देना चाहिए। यदि उन दोनों में वैषम्य हो तो यह समझ लेना चाहिए कि भ्रम वश दूसरा ही संयुक्त चिटिका-युगल उठा लिया गया है। ऐसी अवस्था में उसे पुनः उसके स्थान में रख देना चाहिए। तथा फिर नये सिर से कार्यारम्भ करना चाहिए। यदि सब कुछ ठीक हो तो संयुक्त चिटिका युगल में से पाठक चिटिका को बाहर निकाल लेना चाहिए। वह पाठक अथवा उसके दूत को दे देनी चाहिए। साथ ही उससे यह भी कह देना चाहिए वह चिटिका उसी की है अथवा नहीं इसकी भी वह जांच कर ले। इन सब कार्यों के समाप्त होते ही यन्त्र द्वार को मुक्त करते हुए उस पाठक को ग्रन्थालय में प्रविष्ट होने देना चाहिए।

३३२३१ प्रत्यावर्तित ग्रन्थ

यदि ग्रन्थ चिटिका में कोई लाल पर्चा नहीं है तो ग्रन्थ को प्रत्यावर्तित ग्रन्थ फलक पर रख देना चाहिये। यदि उसमें कोई लाल

पर्चा हो तो उसका अर्थ यह होता है कि वह प्रतिश्रुत ग्रन्थ है। उसके साथ वही व्यवहार किया जाना चाहिए जो अनुच्छेद ३३३ तथा उसके उपभेदों में बताया गया है। जब कभी और ज्योंही प्रत्यावर्तित ग्रन्थ फलक भर जाए तो उसमें के ग्रन्थों को चयन प्रकोष्ठ के प्रत्यावर्तित ग्रन्थ फलक में भेज देना चाहिए। यदि प्रत्यावर्तित ग्रन्थ के तिथि पत्र के तिथि खाने भरे हुए हों तो एक नया तिथि पत्र लगा देना चाहिए और ग्रन्थ की क्रामक संख्या और परिग्रहण संख्या योग्य स्थानों में भर देनी चाहिए। यदि ग्रन्थ क्षत अवस्था में हो तो उसे क्षत ग्रन्थ फलक में एक ओर रख देना चाहिए। यदि वह प्रतिश्रुत हो तो सम्बद्ध सेव्य को सूचना दे देनी चाहिए कि उसे सुधार के लिए अलग रख दिया गया है।

३३२४ अतिदेय ग्रन्थ

यदि कोई परावर्तित ग्रन्थ अतिदेय हो तो उसका संयुक्त चिटिका-युगल किसी आणक-चिह्नित अतिदेय-दर्शक के पीछे होगा। चिटिका पाठक को लौटाई जाए उसके पूर्व ही उस (पाठक) से नम्रता पूर्वक कहना चाहिए कि वह सत्प्रवृत्ति पेटिका में मुद्राओं को डाल दे. किन्तु यह तभी जब कि उसने स्वयं पहले ही न डाल दी हों। पुरानी चाल तो यह थी कि पाठक से अतिदेय शुल्क संगृहीत किया जाए और उसे चिटिका के साथ उचित मूल्य का अपमुखीकृत अतिदेय स्टाम्प दिया जाए। इससे भी अधिक पुरानी चाल यह थी कि मिश्र प्राप्ति पुस्तिका में एक प्राप्तिपत्र बनाया जाए। मूलप्रति पाठक को दी जाए तथा प्रतिमूर्ति को कार्यालय प्रतिलिपि के रूप में रख लिया जाए। यदि पाठक के पास द्रव्य न हो तो कागज के एक टुकड़े पर प्राप्तव्य रकम लिख लेनी चाहिए। उस कागज पर हस्ताक्षर कर तिथि लिख देनी चाहिए। तब उसे पाठक की चिटिका के साथ जेम-क्लिप द्वारा संयुक्त कर उस चिटिका को पाठक-नाम वर्ण-अनुक्रम के अनुसार अप्रदत्त चिटिका पात्रक में अनुयुक्त कर लेना चाहिए। पाठक से यह कह देना चाहिए कि जब वह अपने अतिदेय शुल्क को चुका दे तब उस चिटिका को ले जाए।

३३२५ संमर्द काल

संमर्द-काल में भी यदि संयुक्त चिटिका-युगल को ढूंढ निकालने

की विधि जारी रखी गई तो प्रवेश-द्वार पर पाठकों को प्रतीक्षा करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। फल यह होगा कि वहां एक लम्बी क्रमिका लग जाएगी और पाठकों के धैर्य तथा सौमनस्य की हत्या हो जाएगी। इसी प्रकार की अवाञ्छनीय अवस्था उस अवसर पर भी आ सकती है जब कि आरोपण-पात्रक में अवस्थित संयुक्त चिटिका-युगलों के व्यवस्थापन में किसी प्रकार की आकस्मिक भूल हो गई हो और फलतः अवरोपण- लेखक को यथार्थ चिटिका के लिए भटका-भटकी करनी पड़े। पाठकों के समक्ष ही इस प्रकार की भटका-भटकी से एक प्रकार की बौखलाहट और झुंझलाहट उत्पन्न होने का भय रहता है। यदि ऐसा हुआ तो उस लेखक के हृदय में एक प्रकार की हीन भावना उत्पन्न होगी और फिर उसकी कार्य करने की समर्थता मे कमी आ जाएगी। इस प्रकार की समस्त अवाञ्छनीय आकस्मिक घटनाओं से बचने के लिए यह व्यवस्था की जाती है कि अवरोपण लेखक को पहले से ही संख्याङ्कित युग्म-अभिज्ञानों की पूर्ति से संपन्न किया जाता है। ज्योंही उसे यह प्रतीत हो कि अब गत्यवरोध प्रारम्भ होना चाहता है तो उसे चाहिए कि संख्याङ्कित युग्म अभिज्ञानों में से एक युग्म को उठा ले। उनमें के खलीते रूपी अवयव को परावर्तित ग्रन्थ के तिथि पत्र के तल भाग में लगे हुए ग्रन्थ-खलीते में प्रविष्ट कर देना चाहिए। उस युगल के अन्य सादे अवयव को पाठक द्वारा परावर्तित ग्रन्थ के बदले में उसे दे देना चाहिए।

पाठक से यह प्रार्थना कर देनी चाहिए कि जब वह ग्रन्थालय से बाहर जाने लगे तब उस चिटिका को वापस ले ले। यदि वह पाठक उसी समय ग्रन्थालय से बाहर जाना चाहता हो तो उससे प्रार्थना कर देनी चाहिए कि जब वह पुनः दूसरी बार ग्रन्थालय में आए तो उस चिटिका को ले ले। इस प्रकार के ग्रन्थ को परावर्तित ग्रन्थों के फलक पर न रखना चाहिए. अपितु अवरुद्ध ग्रन्थों के फलक पर रखना चाहिए। पाठकों के वेगवान अन्तःप्रवेश से जब कभी अवकाश मिले तब अवरुद्ध-ग्रन्थ-फलक के ग्रन्थों में से एक एक ग्रन्थ को उठाना चाहिए। तत्सम्बद्ध संयुक्त चिटिका-युगल को शान्ति एवं धैर्य के साथ ढूंढना चाहिए। जब वह

प्राप्त हो जाए तो यथार्थ ग्रन्थ-चिटिका को ग्रन्थ-खलीते में प्रविष्ट कर देना चाहिए। संख्याङ्कित खलीते रूपी अवयव को ग्रन्थ खलीते में से निकाल देना चाहिए। पाठक चिटिका उसमें प्रविष्ट कर देनी चाहिए। अब ग्रन्थ को परावर्तित ग्रन्थ फलक में रख देनी चाहिए। यदि वह ग्रन्थ प्रतिश्रुत हो तो उसे प्रतिश्रुत ग्रन्थ फलक पर रख देना चाहिए। यदि वह क्षत-विक्षत हो तो संयुक्त चिटिका-अभिज्ञान को अवरुद्ध पात्रक में अभिज्ञान की संख्या के अनुसार व्यवस्थित कर देना चाहिए। जब पाठक अपनी चिटिका को लेने के लिए आए तो उसके द्वारा परावर्तित ग्रन्थ के बदले में उसे दिए हुए युग्म अभिज्ञान के केवल अवयव को ले लेना चाहिए। संवादी संयुक्त चिटिका अभिज्ञान को अवरुद्ध चिटिका पात्रक से बाहर निकाल लेना चाहिए। पाठक को उसकी चिटिका लौटा देनी चाहिए। संख्याङ्कित अभिज्ञानों को संयुक्त कर लेना चाहिए तथा संयुक्त अभिज्ञान युगल को उसके पात्रक में अनुयुक्त कर लेना चाहिए।

३३२६ आरोपित पात्रक का शोभनीकरण

समय समय पर आरोपित पात्रक में अवस्थापित आरोपित चिटिका युगलों को इस प्रकार निकटस्थ कर देना चाहिए जिससे वे खड़े हो जाएं। इस प्रकार करते हुए प्रत्येक पात्रक को भली भांति भर देना चाहिए। इस कार्य में एक साथ पांच से अधिक संयुक्त चिटिका युगलों को नहीं उठाना चाहिए। अन्यथा संभव है कि वे खिसक कर गिर पड़ें और अव्यवस्था, विलम्ब और झुंझलाहट उत्पन्न करें।

३३२७ नवीकरण

यदि कोई सेव्य अथवा उसका प्रतिनिधि किसी उद्धरण का नवीकरण कराना चाहता है और वह ग्रन्थ उसी दिन देय है तो संयुक्त चिटिका युगल को ढूंढ निकालना चाहिए। यदि उसमें कोई लाल पर्चा न हो, जिससे कि यह सूचित हो कि वह प्रतिश्रुत ग्रन्थ है, तो उसे आरोपण कार्य के लिए आरोपण स्थान पर भेज देना चाहिए। यदि उसमें कोई लाल पर्चा हो तो उस व्यक्ति से कह देना चाहिए कि नवीकरण संभव नहीं है।

33271 विलम्बित नवीकरण

यदि वह ग्रन्थ किसी आगामी दिन को देय हो तो संयुक्त चिटिका युगल में एक सफेद पर्चा प्रविष्ट कर देना चाहिए। वह पर्चा हमें स्मरण करा देगा और हम उस ग्रन्थ को उसकी देय तिथि को नवीकृत कर देंगे। यदि वह ग्रन्थ पहले से ही अतिदेय हो चुका हो तो सेव्य को इस बात की सूचना देते हुए यह सुझा देना चाहिए कि वह अतिदेय शुल्क को सत्प्रवृत्ति पेटिका में डाल दे। यदि संयुक्त चिटिका-युगल में लाल पर्चा हो तो सेव्य को कह देना चाहिए कि *ग्रन्थ का नवीकरण संभव नहीं है। यदि सेव्य ने स्वयं न आकर पत्र लिखा* हो तो उसे पत्र द्वारा सूचित कर देना चाहिए।

3328 समारोप परिपाटी

33281 अन्तर्निवेश

दिवस के कार्यों का अन्तिम कृत्य यह है कि आरोपित-चिटिकाओं के सर्वथा अन्त भाग में तिथि-दर्शक लगाना चाहिए। वह तिथि वही होगी जिस तिथि को आरोपित ग्रन्थ देय हो जाएंगे। आरोपण-स्थान के कार्यकर्ता से विमिश्रण पात्रक मांग लेना चाहिए और सब चिटिकाओं को उस तिथि-दर्शक के पीछे परावर्तित कर देना चाहिए।

33282 अतिदेय दर्शक का परिवर्तन

यदि अनन्तर दिवस ग्रन्थालय का कार्य दिवस हो तो प्रत्येक अतिदेय-दर्शक को हटाकर उसके स्थान में उसकी अपेक्षा अनन्तर-अधिकतर द्रव्य (मूल्य) का अतिदेय दर्शक लगा देना चाहिए। इस कार्य का आरम्भ अधिकतर मूल्य से होना चाहिए। यदि वह (अनन्तर-दिवस) अवकाश दिवस हो तो परावर्त्तक द्रव्य दर्शक यथा-युक्त होने चाहिएं।

33283 अतिदेय गणना

अतिदेय-चिटिका-पञ्जिका में प्रत्येक अतिदेय दर्शक के पीछे अवस्थित संयुक्त चिटिका-युगलों की संख्या को लिख देना चाहिए।

33284 अतिदेय सूचना

दो आने से नव आने तक के अतिदेय दर्शकों के पीछे अवस्थित

प्रत्येक संयुक्त चिटिका युगल के लिए एक एक अतिदेय सूचनापत्रक लिखना चाहिए तथा भेजना चाहिए।

एक रुपये तक के अतिदेय दर्शकों के पीछे अवस्थित प्रत्येक संयुक्त चिटिका युगल के लिए पञ्जीयित (रजिस्टर्ड) सूचना भेजनी चाहिए। जो (संयुक्त चिटिका युगल) एक रुपये सात आने के अतिदेय दर्शकों के पीछे अवस्थित हों उनके विषय में सेव्यों के पास स्वयं जाना चाहिए और अन्य प्रत्येक प्रकार के संभव एवं आवश्यक उपाय काम में लाने चाहिएं। उदाहरणार्थ, प्रतिभू की सहायता ली जाए अथवा अन्य व्यक्तियों की। किसी प्रकार उन ग्रन्थों को प्राप्त करना चाहिए।

३३२८५ द्वारपञ्जिका का स्थापन

अनन्तर कार्य दिवस के लिए द्वारपञ्जिका के पत्र को रखना चाहिए।

३३२८६ क्षत ग्रन्थ

क्षत ग्रन्थ फलक के ग्रन्थों को संपुटन विभाग में भेज देना चाहिए।

३३३ प्रतिश्रुति कार्य

जब कभी कोई व्यक्ति किसी ग्रन्थ के लिए प्रतिश्रुति करवाना चाहे तब उसे एक प्रतिश्रावक पत्रक देना चाहिए। उससे कहना चाहिए कि उचित स्थानों में ग्रन्थ की क्रामक संख्या, ग्रन्थ का नाम तथा आख्या एवं अपना पता सब कुछ स्पष्ट अक्षरों में भर दे, तथा योग्य मूल्य का डाक टिकट भी योग्य स्थान पर लगा दे। उस व्यक्ति ने आवश्यक खानापूरी ठीक ठीक कर दी है तथा टिकट भी लगा दिया है, और इस वस्तु का समाधान हमें हो गया है इसकी सूचना के लिए हमें चाहिए कि उस पत्रक के वाम पार्श्व के तलकोण में अपने हस्ताक्षर कर दें। उसी के पास उस दिन की तिथि भी लिख देनी चाहिए। इसके पश्चात् उस पत्रक को अस्थायी प्रतिश्रावक मंजूषा में रख देना चाहिए। यदि उसमें पहले से ही ठीक उसी क्रामक संख्या का कोई और पत्रक पड़ा हुआ हो तो तिथि मुद्रा के आगे २ अथवा ३ इत्यादि संख्या यथा-योग्य लिख देनी चाहिए।

३३३१ अन्वेषण

सावकाश कार्य के रूप में, प्रतिश्रावक मंजूषा में से एक एक

करके पत्रक उठाने चाहिएं। आरोपित पात्रक में से उस संयुक्त चिटिका युगल को ढूंढ निकालना चाहिए जिस पर प्रतिश्रावक पत्रक पर लिखी हुई क्रामक संख्या हो। एक लाल पर्चा बना लेना चाहिए और उस पर प्रतिश्रावक सेव्य का नाम तथा प्रतिश्रुति की तिथि लिख देनी चाहिए। यदि कोई अनुक्रम संख्या हो तो उसे भी उसके बाद लिख देना चाहिए। इस लाल पर्चे को ग्रन्थ चिटिका में प्रविष्ट कर देना चाहिए। यदि ग्रन्थ चिटिका आरोपित पात्रक में न मिले, किन्तु ग्रन्थ प्रतिश्रुत कक्षा में हों तो उस लाल पर्चे को उस ग्रन्थ की ग्रन्थ चिटिका में प्रविष्ट कर देना चाहिए। यदि उस ग्रन्थ का कहीं भी पता न लगे तो उसके लिए खोज करनी चाहिए और जो कुछ आवश्यक हो वह करना चाहिए। प्रतिश्रावक पत्रक के दाहिनी ओर तल कोण पर वह तिथि लिख देनी चाहिए जिस दिन वह ग्रन्थ ग्रन्थालय में वापस आने वाला हो। प्रतिश्रावक पत्रक को प्रतिश्रावक पत्रक मंजूषा में प्रविष्ट कर देना चाहिए। इस मंजूषा के सभी पत्रक प्रतिश्रुत ग्रन्थों की वर्ग-संख्या के क्रमानुसार व्यवस्थित रहेंगे। यदि किसी एक ग्रन्थ के लिए दो या उससे अधिक प्रतिश्रावक पत्रक हों तो जिन तिथियों को प्रतिश्रावक पत्रक ग्रन्थालय में प्राप्त हुए हों उन तिथियों के क्रमानुसार आपस में व्यवस्थित कर लेना चाहिए। यदि ऐसा हो कि किसी एक विशिष्ट ग्रन्थ के लिए दो या उससे अधिक प्रतिश्रावक पत्रक हों और उन पर एक ही विशिष्ट तिथि मुद्रा लगी हो तो उनकी व्यवस्था के लिए तिथि मुद्रा के आगे लगाए हुए अंक के क्रम का सहारा लेना चाहिए। प्रत्येक पत्रक में देय तिथि के आगे उन क्रम संख्याओं को भी लिख देना चाहिए।

३३३२ प्रतिश्रुत ग्रन्थ फलक

जो प्रतिश्रुत ग्रन्थ ग्रन्थालय में लौटाए जाएं उन्हें प्रवेशद्वार के पास प्रतिश्रुत ग्रन्थ फलक में पांच कक्षाओं में व्यवस्थित करना चाहिए। वे कक्षाएं ये हैं :—

०. शून्यवीं कक्षा में वे ग्रन्थ होंगे जिनके प्रतिश्रावक पत्रक अभी तक भेजे नहीं गए हैं;

१. प्रथम कक्षा में वे ग्रन्थ होंगे जिनके प्रतिश्रावक पत्रक उस दिन भेजे गये थे;

२. द्वितीय कक्षा में वे ग्रन्थ होंगे जिनके प्रतिश्रावक पत्रक एक दिन पहले भेजे गए थे;

३. तृतीय कक्षा में वे ग्रन्थ होंगे जिनके प्रतिश्रावक पत्रक दो दिन पहले भेजे गए थे;

४. चतुर्थ कक्षा में वे ग्रन्थ होंगे जिनके प्रतिश्रावक पत्रक तीन दिन पहले भेजे गए थे।

उपरिलिखित प्रत्येक कक्षा के ग्रन्थ उनकी क्रामक संख्याओं के क्रमानुसार रखने चाहिएं। इन कक्षाओं को दर्शकों द्वारा अलग अलग रखना चाहिए। दर्शक का अर्थ यह है कि कार्ड बोर्ड की छः इंच लम्बी और दो इंच चौड़ी एक पट्टी हो, जिसके दोनों किनारों पर स्पष्ट अक्षरों में कक्षा संख्या लिखी हुई हो।

३३३३ सूचना दान

दिन समाप्त होने के समय सूचना भेजने का काम करना चाहिए। किन्तु इस बात का ध्यान रहे कि उस दिन की आखिरी डाक में पत्र निकल जाएं। शून्यवीं कक्षा के प्रत्येक ग्रन्थ के लिए प्रतिश्रावक पत्रक मंजूषा में से सम्बद्ध प्रतिश्रावक पत्रक निकाल लेना चाहिए। यदि किसी एक ही ग्रन्थ के लिए दो या उससे अधिक प्रतिश्रावक पत्रक हों तो उस पत्रक को निकालना चाहिए जो सर्वज्येष्ठ हो। इसके निर्णय के लिए बाईं ओर तलकोण में देय तिथि के आगे दी हुई क्रामक संख्या से सहायता लेनी चाहिए। प्रतिश्रावक पत्रक के संलेख से ग्रन्थ का मिलान कर लेना चाहिए तथा उस प्रतिश्रावक पत्रक को उस सेव्य के पास भेज देना चाहिए।

३३३४ कक्षादर्शकों का परिवर्तन

ज्योंही सब प्रतिश्रावक पत्रकों को भेज दिया जाए, त्योंही चार संख्याङ्कित कक्षा दर्शक के पीछे के सब ग्रन्थों को छोड़ देना चाहिए। इस बात की परीक्षा कर लेनी चाहिए कि वे दूसरों के लिए प्रतिश्रुत तो नहीं हैं, और यदि हों तो उन्हें शून्यवीं संख्या में भेज देना चाहिए। उस शून्यवीं कक्षा को इसके बाद ही बनाया जाता है। यदि वे प्रतिश्रुत न हों तो उन्हें अस्थायी परावर्तन मेज पर रख देना चाहिए। इसके बाद कक्षा दर्शकों को योग्य रीति से परिवर्तित करना चाहिए। अर्थात्, '४' संख्यक

दर्शक को '३' संख्यक के स्थान में रख देना चाहिए। '३' दर्शक को '२' दर्शक के स्थान में. '२' दर्शक को '१' दर्शक के स्थान में और '१' दर्शक को '०' दर्शक के स्थान में रख देना चाहिए और '०' दर्शक को उन ग्रन्थों के लिए रख देना चाहिए जिनके प्रतिश्रावक पत्रकों को अनन्तर दिन भेजना हो।

३३५ शाखाओं के लिए आरोपण

किसी नगर अथवा ग्राम केन्द्रीय ग्रन्थालय के सम्बन्ध में इस आरोपण की परिपाटी में विशेष परिवर्तन करना पड़ता है। उन ग्रन्थालयों से समय समय पर शाखा ग्रन्थालयों में ग्रन्थ भेजने पड़ते है। इसलिए वहां प्रत्येक ग्रन्थ के लिए एक नहीं अपितु दो चिटिकाएं बनानी चाहिएं। जब कोई ग्रन्थ शाखा ग्रन्थालय में भेजा जाए तब ग्रन्थ चिटिकाओं में से एक को उस शाखा के आरोपित पात्रक में परावर्तित कर देना चाहिए। इस पात्रक की ग्रन्थ चिटकाएं क्रामक संख्याओं के अनुसार व्यवस्थित रहेंगी। दूसरी ग्रन्थ चिटिका तिथि-पत्र के अन्त में लगे हुए ग्रन्थ खलीते में प्रविष्ट कर देनी चाहिए, और उस ग्रन्थ को शाखा में भेज देना चाहिए। इस ग्रन्थ चिटिका का उपयोग वह शाखा अपने आरोपण और अवरोपण कार्य में करेगी।

यह वाञ्छनीय है कि एक प्रेषण पञ्जिका रक्खी जाए जिसमें शाखा को भेजे हुए सभी ग्रन्थों का संलेख कर लिया जाए। उस पञ्जिका के स्तम्भ निम्नलिखित होंगे। (१) प्रेषण तिथि, (२) प्रेषित ग्रन्थ संख्या, (३) प्रेषक का हस्ताक्षर, (४) वाहक का हस्ताक्षर, (५) शाखा ग्रन्थालय में प्राप्तिकर्ता का हस्ताक्षर, (६) उसके द्वारा प्राप्त ग्रन्थ संख्या, (७) प्राप्ति तिथि।

प्रत्येक शाखा ग्रन्थालय केन्द्रीय ग्रन्थालय में ग्रन्थ वापस भेजने के लिए इसी प्रकार की प्रेषक पञ्जिका रक्खे।

३३६ समर्पण प्रतिष्ठानों के लिए आरोपण

यदि किसी ग्रन्थालय में ग्रन्थयान (जंगम ग्रन्थालय) हो, जो नियमित रूप से समर्पण प्रतिष्ठानों में आता जाता रहता हो, तो उस ग्रन्थयान के साथ जहां तक केन्द्रीय ग्रन्थालय का सम्बन्ध है एक

शाखा ग्रन्थालय के समान ही व्यवहार किया जाना चाहिए। स्वयं ग्रन्थयान में संयुक्त चिटिका युगल को रखना लाभदायक होगा। वे चिटिकाएं सर्व प्रथम समर्पण प्रतिष्ठानों के नाम के अनुसार व्यवस्थित रहेंगी। किसी एक समर्पण प्रतिष्ठान से सम्बद्ध ग्रन्थ चिटिकाओं को देय तिथि के पीछे लगा देना चाहिए। देय तिथि के पीछे ग्रन्थ चिटिकाओं को साधारण रीति से उनकी क्रमक संख्याओं के अनुसार व्यवस्थित करना चाहिए। शाखा ग्रन्थालय की रीति के अनुसार प्रत्येक ग्रन्थयान के लिए भी प्रेषण पञ्जिका रखनी चाहिये।

३४ नष्ट अथवा क्षत ग्रन्थ

बहुधा ऐसा होता है किसी पाठक द्वारा ग्रन्थालय का ग्रन्थ खो जाता है या क्षत हो जाता है। यह तो स्पष्ट है कि प्रथम पक्ष में उसे यह कहना चाहिए कि वह ग्रन्थालय में एक नयी प्रति ला दे; और द्वितीय पक्ष में क्या करना चाहिए यह तो उस क्षति की मात्रा पर निर्भर रहेगा। या तो उस ग्रन्थ को उसी स्थान पर सुधरवा लेना चाहिए अथवा यदि बहुत अधिक क्षत हो गया है तो पाठक को कहना चाहिए कि वह ग्रन्थालय में दूसरी प्रति ला दे।

३४१ विशेष जमानत

यदि यह निर्णय हो कि उपयोक्ता से नयी प्रति लेनी है तो परिग्रहण विभाग से अथवा व्यापार सूची से उस ग्रन्थ का मुद्रित मूल्य जान लेना चाहिए। यदि वह दुर्लभ हो तो यह आवश्यक हो सकता है कि पुराने ग्रन्थ विक्रेताओं की सूची से वर्तमान मूल्य का अनुमान लगा लिया जाए। यदि यह निर्णय हो कि उस ग्रन्थ का वहीं सुधार कर लिया जाएगा तो सम्पुटन विभाग से अनुमानित व्यय को जान लेना चाहिए। किसी भी अवस्था में उदार अनुमान कर लेना चाहिए, जिससे यह अवस्था न आए कि आगे चलकर उस उपयोक्ता से अधिक द्रव्य लेना अनिवार्य हो जाए। सर्वदा यह अधिक सरल होगा कि अधिक मूल्य को फिर से लेने की अपेक्षा बचे हुए द्रव्य को लौटा दिया जाए। ज्योंही अनुमानित द्रव्य का ज्ञान हो जाए, उपयोक्ता को इसकी सूचना देनी चाहिए। यदि वह ग्रन्थालय में उपस्थित हो तो साक्षात् अन्यथा पत्र द्वारा उसे उस रकम की सूचना दे देनी चाहिए।

उसे बताना चाहिए कि वह उस रकम को विशेष जमानत के रूप में शीघ्र ही जमा कर दे।

उपयोक्ता ज्यों ही विशेष जमानत को लाए उससे वह रकम ले लेनी चाहिए। उस द्रव्य के लिए प्राप्त पत्र बनाकर उसे दे देना चाहिये। उस द्रव्य को दिनान्त में अन्य मिश्र संग्रहों के साथ अर्थ-विभाग में भेज देना चाहिए।

ज्योंही विशेष जमानत को लेने का काम समाप्त हो जाए, सम्बद्ध संयुक्त चिटिका युगल को निकाल लेना चाहिए। ग्रन्थ चिटिका को नष्ट ग्रन्थ-कक्षा में रख देना चाहिए और पाठक चिटिका उस सेव्य को दे देनी चाहिए। यदि ग्रन्थ को केवल क्षति ही पहुँची हो तो उस विषय में यह भी संभव है कि वह उपयोक्ता ग्रन्थालय का सेव्य न हो। उस अवस्था में केवल ग्रन्थ चिटिका को ही नष्ट-ग्रन्थ-कक्षा में रख देना चाहिए।

३४२ अतिदेय संग्रह

नष्ट अथवा क्षत ग्रन्थों के विषय में अतिदेय शुल्क को कब तक बढ़ते रहने देना चाहिए यह भी एक प्रश्न है। उसके उत्तर में तीन विकल्प रखे जा सकते हैं :—

१. जब तक नयी प्रति न आ जाए तब तक अतिदेय बढ़ते रहने देना चाहिए।
२. अतिदेय का संग्रह उसी तिथि को बन्द कर देना चाहिए जिस दिन उपयोक्ता विशेष जमानत जमा करा दे; और
३. अतिदेय का संग्रह उस तिथि को बन्द कर देना चाहिए जिस दिन नाश की सूचना दी गई हो।

भारतीय ग्रन्थालयों में प्रथम विकल्प को अपनाने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। कारण बहुधा यह होता है कि नयी प्रति को विदेश से मंगवाना पड़ता है। नयी प्रति को आने में कम से कम छः सप्ताह लग जाते हैं। इतने लम्बे समय तक अतिदेय धन को बढ़ाते रहना वाञ्छनीय है अथवा नहीं, यह नहीं कहा जा सकता।

अधिक उदारता पूर्ण पक्ष यह है कि द्वितीय विकल्प को स्वीकृत

कर लिया जाए। किन्तु चाहे इसमें आश्चर्य हो, यह मानना ही पड़ेगा कि कुछ अविवेकी सेव्य इस विकल्प का दुरुपयोग करते हैं। इस विकल्प में दोष यह है यदि कोई सेव्य किसी ग्रन्थ को देय तिथि के बाद भी पर्याप्त समय तक अपने पास रखना चाहता है तो उसे इस बात की छूट रहेगी कि वह ग्रन्थ के नाश की सूचना दे दे, विशेष जमानत जमा करा दे और पुरानी प्रति को तब ले आए जबकि उसे उसकी आवश्यकता न रह गई हो। वह एक मन गढ़न्त कहानी सुना सकता है कि उसे वह प्रति बाद मे किसी प्रकार मिल गई है। कुछ सेव्य इस लालच में फस जाते हैं। खास कर उन ग्रन्थों के विषय में जिनका सामयिक विशेष महत्त्व हो. और उनमें भी उन पाठ्य पुस्तकों के विषय में जो परीक्षाओं के कारण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। हमारा यह विचार होता है कि इस दुरुपयोग को दूर करने के लिए यह उपाय काम में लाया जा सकता है। नियम ऐसा बनाया जा सकता है कि यदि उपयोक्ता ग्रन्थालय की पुरानी प्रति को ही लौटाए तो उसे उस लौटाने के दिन तक अतिदेय शुल्क देना पड़े। हां. यह तो निश्चित है कि इस विषय में हमें यह जानने का कोई साधन न रहेगा कि वह ग्रन्थ वस्तुतः खो गया था और फिर मिल गया है, अथवा केवल बहाना बनाया जा रहा है।

तृतीय विकल्प तो किसी भी प्रकार वाञ्छनीय नहीं है। कारण यदि अतिदेय शुल्क को विशेष जमानत पाने के दिन तक बढ़ने न दिया जाए तो विशेष जमानत को कोई जमा ही न कराए, और ग्रन्थालय को अनिश्चित लम्बे समय तक विशेष जमानत के लिए प्रतीक्षा करनी पड़े।

३४३ प्रतिनिधि दान

किसी नष्ट ग्रन्थ के सम्बन्ध में दो पक्ष हैं। या तो पाठक से कहा जाए कि ग्रन्थालय के लिए नयी प्रति खरीद कर ले आए, अथवा उससे लिखित अनुमति प्राप्त कर ली जाए कि ग्रन्थालय उसकी ओर से खरीद ले। ज्योंही नई प्रति आ जाए त्योंही नष्ट ग्रन्थ कक्षा में से उस ग्रन्थ की ग्रन्थ चिटिका को निकाल लेना चाहिए। उस नये ग्रन्थ में तिथि पत्र लगा देना चाहिए। उचित स्थानों में परिग्रहण संख्या लिख देनी चाहिए, तथा तिथि पत्र के तल भाग में लगे हुए खलीते में ग्रन्थ

चिटिका को प्रविष्ट कर देना चाहिए। अब पाठक से कह दिया जाए कि ग्रन्थ को बदल दिया गया है। उसकी विशेष जमानत के हिसाब को ठीक कर लेना चाहिए। उसके बाद वह क्षत ग्रन्थ सम्बद्ध सेव्य को लौटा दिया जा सकता है। किन्तु निम्नलिखित प्रमाणपत्र उस ग्रन्थ के आख्या पत्र पर लिख देना चाहिए।

"श्री······ ने इस प्रति के स्थान में दूसरी नयी प्रति जमा करा दी है। अतः यह प्रति श्री······को दे दी गई है। अब इस प्रति पर ग्रन्थालय का कोई अधिकार नहीं है।

ग्रन्थालयी
(ग्रन्थालय का नाम)

यदि ग्रन्थ की पुरानी प्रति भी न उपलब्ध हो सके तो ग्रन्थालय के संग्रह में से उस ग्रन्थ का नाम निकाल देना चाहिए और उस विशेष जमानत को ग्रन्थालय के कोष में समाविष्ट कर लेना चाहिए।

३४४ सुधार

क्षत ग्रन्थ के सम्बन्ध में ज्योंही सुधार कार्य पूरा हो जाए त्यों ही सम्बद्ध व्यक्ति को सूचना दे देनी चाहिए, तथा उसकी विशेष जमानत के हिसाब को ठीक कर लेना चाहिए।

३५ सेव्य

सेव्यों के सम्बन्ध में ग्रन्थालय का कार्य निम्नलिखित होगा :—

(१) सेव्यों को ग्रन्थालय की ओर आकृष्ट करना; (२) सेव्यों का प्रवेशन; (३) सेव्यता का नवीकरण; (४) नष्ट चिटिका; इत्यादि।

३५१ अनुरञ्जन सेवा

सर्वजन ग्रन्थालय का एक मुख्यतम आधार कार्य यह है कि उसके अपने क्षेत्र में रहने वाले प्रत्येक नागरिक को ग्रन्थालय का सेव्य बना दे। ग्रन्थालय इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए प्रथम अध्याय में उल्लिखित प्रचार कार्य सरीखी रीतियों का अवलम्बन करता है। उसी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए सर्वजन ग्रन्थालय विभिन्न प्रकार की अनुरञ्जन सेवाओं को भी संघटित करता है। ग्रन्थालय के कर्मचारियों

के, उस क्षेत्र के विद्वानों के अथवा उस क्षेत्र में अतिथि रूप से आए हुए विशिष्ट व्यक्तियों के सर्वजन प्रवचनों की व्यवस्था ग्रन्थालय के द्वारा की जा सकती है। किसी प्रवचन के पूर्व उससे सम्बद्ध अवलोकनीय ग्रन्थों की सूची बनाई जा सकता है तथा श्रोतृवर्ग में बांटी जा सकती है। उस प्रवचन से सम्बद्ध ग्रन्थों को किसी ऐसे विशिष्ट स्थान पर रख देना चाहिए जहां से श्रोतृवर्ग गुजरने वाले हों। ग्रन्थालय की ओर से देश की आकाशवाणी (रेडियो) सेवा से सम्बद्ध अवलोकनीय ग्रन्थों की सूची भी बनवाई जा सकती है तथा वाद चर्चाओं की भी व्यवस्था की जा सकती है। उस क्षेत्र की परिषदों को तथा ग्रन्थालय से ग्रन्थों की अपेक्षा रखने वाले अन्य नगर संघटनों को भी ग्रन्थालय में बैठकें करने की अनुमति देनी चाहिए। जब उनकी बैठकें हों तो विशिष्ट अध्ययन सूचियों से तथा प्रदर्शनों से लाभ उठाना चाहिए, तथा ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे जनता में ग्रन्थालय की ओर अभिरुचि बढ़े। अनुरञ्जन सेवा का एक दूसरा प्रकार यह भी है कि अध्ययन मंडलों की स्थापना का प्रबन्ध किया जाए तथा उन्हें ऐसी सुविधा दी जाए कि वे ग्रन्थालय भवन में मिल सकें। उनके अध्ययन की प्रक्रियाओं की चर्चा की जा सकती है. तथा सदस्यों के अन्तिम निर्णयों का भी विचार किया जा सकता है। ग्रन्थालय समस्त प्रकार के स्थानीय प्रदर्शनों में भी भाग ले सकता है। वह स्थानीय, राष्ट्रिय तथा अन्ताराष्ट्रिय उत्सवों को भी मना सकता है। ऐसे प्रत्येक उत्सव से लाभ उठाया जा सकता है। उत्सवों में भाग लेने वाले व्यक्तियों की विशिष्ट जिज्ञासा तथा अभिरुचि को नियन्त्रित किया जा सकता है. तथा ग्रन्थालय में विद्यमान सम्बद्ध ग्रन्थों का उपयोग बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार वे ग्रन्थों की ओर विशेष झुक सकते हैं। हमारा लक्ष्य यही है कि ग्रन्थों का अधिक से अधिक उपयोग हो तथा जनता में अधिक से अधिक अध्ययन की रुचि बढ़े। भारत में तो आज भयङ्कर निरक्षरता फैली हुई है। भारतीय ग्रन्थालयों का तो आज यह भी कर्तव्य है कि निरक्षरों को ग्रन्थ पढ़कर सुनाये जाए। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि ग्रन्थालय उस क्षेत्र का बौद्धिक केन्द्र बन जाए, जहां पर प्रत्येक प्रकार के प्रौढ़ शिक्षण का अभिवर्धन किया जाता हो।

३५२ प्रवेशन

जब कोई व्यक्ति ग्रन्थालय का सेव्य बनना चाहे तो उसे दो प्रार्थना पत्रक देने चाहिएं। जब वह उन्हें ठीक ठीक भर कर लौटा दे तो ध्यानपूर्वक इस बात का परीक्षण कर लेना चाहिए कि सब वस्तुओं की खाना पूरी भली भांति कर दी गई है। वक्तव्यों की यथार्थता की भी जांच कर लेनी चाहिए तथा यह भी देख लेना चाहिए कि जहां कहीं आवश्यक हों वहां हस्ताक्षर भी कर दिए गए हैं। यदि उसमें कोई गड़बड़ी हो तो उसे प्रार्थी द्वारा ठीक करा लेना चाहिए। ज्योंही हमें यह विश्वास हो जाए कि सब वस्तुएं ठीक हैं, त्योंही उसे ग्रन्थालय में भेज देना चाहिए, जिससे वह ग्रन्थालय की व्यवस्था आदि देख ले तथा ग्रन्थालय के व्यापक स्वरूप तथा साधन सम्पत्तियों से उसका परिचय हो जाए। कर्तृगण के अन्य सदस्य को, अर्थात् अनुलय कर्तृगण को यह कह देना चाहिए कि वह कार्य में उसकी सहायता करे। इस बात का स्मरण रहे कि जो व्यक्ति उस क्षेत्र का करदाता न हो उसे एक प्रार्थना पत्रक पर प्रतिभू का हस्ताक्षर कराना पड़ेगा। उस व्यक्ति से यह कह देना चाहिए।

३५२१ चिटिका

उस व्यक्ति की जब इस प्रकार देख भाल की जा रही हो तब नियमानुसार उचित रंगों की आवश्यक संख्यात्मक चिटिकाएं बनानी चाहिएं। प्रत्येक सेव्य को एक सेव्य-संख्या दी जानी चाहिए। उस संख्या में क्रमिक प्रवेश संख्या तो होगी ही, जो कि प्रार्थना पत्रकों पर लिखी जाएगी। किन्तु उसमें सेव्य संख्या भी होनी चाहिए। यदि इस सेव्य संख्या को विशिष्ट युक्ति से बनाया जाए तो वह अधिक सुविधाजनक होगा। इसमें क्रम संख्याओं के रूप में संक्षिप्त रूप से वह वर्ष और मास लिखा जाए जब कि उस पाठक की चिटिकाएं समाप्त हो जाएंगी तथा जब पाठक को वे चिटिकाएं पुनः ग्रन्थालय में नवीकरण के लिए उपस्थित करनी पड़ेंगी। उस संख्या में उसका प्रिय विषय भी निर्दिष्ट होना चाहिए। उसके निर्णय के लिए उसका व्यवसाय तथा अन्य वस्तुओं का आश्रय लेना चाहिए। अनुच्छेद २२२ में दिया हुआ उदाहरण इसे स्पष्ट कर देगा। कृपया उस अनुच्छेद में दी हुई पाठक चिटिका (अग्र) देखिए। उसमें दिखलाई हुई सेव्य संख्या २० ६१५८ है। इसमें

२०६ = जून १९५२ में समाप्त होती है।

घ५८ = विमानीय यंत्र कला (प्रिय विषय अथवा व्यवसाय)

'१२ = सेव्य अपने वर्ग में बारहवां है

'३ = सेव्य की तृतीय चिटिका

पाठक की चिटिका का कार्यकाल स्थानीय परिस्थिति के अनुसार एक, दो या तीन वर्ष रक्खा जा सकता है। इन चिटिकाओं पर ग्रन्थालयी को हस्ताक्षर करके तिथि लिखनी चाहिए। जब वह सेव्य लेन-देन स्थान पर वापस आए तो वे चिटिकाएं उसे दे दी जाएं।

३५२२ अनुयोग

दिनान्त में, उस दिन जितने भी सेव्य प्रविष्ट हुए हों उनके प्रवेश पत्रक ले लेने चाहिएं। उनमें के एक संघात को सेव्य के नामान्त्य शब्द के अनुसार अनुवर्ण क्रम में व्यवस्थित किया जाए और दूसरे संघात को सेव्य संख्या के अनुसार अनुवर्ग क्रम में। प्रथम को सेव्यों की अनुवर्ण पञ्जिका में अनुयुक्त कर देना चाहिए तथा द्वितीय को सेव्यों की अनुवर्ग पञ्जिका में।

३५३ सेव्यता का नवीकरण

आरोपण-अवरोपण स्थान के व्यक्तियों को उन पाठक चिटिकाओं की खोज करते रहना चाहिए जो एक या दो महीने में समाप्त हो जाने वाली हों। सम्बद्ध सेव्यों को इस बात की सलाह देनी चाहिए कि वे सभी चिटिकाओं को उपस्थित कर दें और उन सबको आगामी काल के लिए नवीकृत करा लें। जब चिटिकाओं का नवीकरण किया जाए तो उनके प्रार्थना पत्रकों को उनकी नयी सम्बद्ध कक्षाओं में रख दिया जाए। उनमें उस बदली की तिथि को लिख देना चाहिए और साथ ही यदि आवश्यक परिवर्तन हो तो वह भी कर देना चाहिए। अनुवर्ग कक्षा में पड़े हुए समाप्त (कार्य में अक्षम) प्रवेश पत्रकों की एक सूची बनाई जाए। सम्बद्ध सेव्यों को ढूंढ निकाला जाए और उनकी चिटिकाओं को नवीकृत कर लिया जाए। यदि अभ्यास ऐसा डाला जाएगा तो अच्छा है।

३५४ नष्ट चिटिकाएं

मद्रास विश्वविद्यालय के ग्रन्थालय में नष्ट चिटिकाओं से सम्बद्ध अनुभव बड़ा ही रोचक है। कुछ वर्षों तक निम्नलिखित रीति बरती गई थी। जब कभी कोई पाठक चिटिका के नाश की सूचना देता तब उससे यह कहा जाता कि तीन महीनों के बाद अपनी खोज के उद्योगों का क्या परिणाम हुआ इसकी सूचना दे। यदि उस अवधि के बीत जाने पर वह उन चिटिकाओं को ढूंढ निकालने में न समर्थ हुआ होता तो उसे प्रतिमूर्ति चिटिकाएं बिना किसी शुल्क के दे दी जातीं। यह देखा गया कि इस सुविधा का लोग अनेक प्रकार से बड़ा दुरुपयोग करने लगे। प्रतिमूर्ति चिटिकाओं के प्राप्त कर लेने पर पुरानी चिटिकाओं को भी प्रस्तुत किया जाता। जिन चिटिकाओं के नाश की सूचना दे दी गई होती थीं उन चिटिकाओं को सेव्यों के सम्बन्धी और कुटुम्बी उपस्थित किया करते। जब उनसे इसका रहस्य पूछा जाता तो वे सम्बन्धी उत्तर देते कि उनके सम्बन्धियों ने उन्हें वे चिटिकाएं उनके उपयोग के लिए दी थीं। कुछ सेव्य तो प्रतिवर्ष बार बार अपनी चिटिकाओं के खोने की सूचना देते थे। कुछ पाठक और ही विचित्र थे। जब कि उनकी चिटिकाएं उनसे प्राप्तव्य अतिदेय द्रव्य के कारण ग्रन्थालय में बन्द पड़ी रहा करतीं थीं तो वे महीनों बाद ग्रन्थालय में आते और मनगढ़न्त कहानी कहने लगते कि उनकी चिटिकाएं इस प्रकार खो गईं। कभी यह कारण, कभी वह कारण-चिटिका विनाश की सूचनाएं प्रति सप्ताह धड़ा धड़ आया करतीं।

तब यह अनुभव किया गया कि इस रोग का कोई उपचार करना चाहिए। कोई ऐसा उपाय ढूंढ निकालना चाहिए जिससे ग्रन्थालय-चिटिकाओं के सम्बन्ध में उत्तरदायित्व की उच्चतर भावना उद्भूत हो। आजकल जो रीति बरती जारही है वह यह है कि प्रति मूर्ति चिटिकाओं को देने के लिए कुछ शुल्क लिया जाता है और सेव्यों से उत्तरदायित्व प्रतिज्ञापत्र भी भरने को कहा जाता है। इस चाल को चलाए हुए आज एक वर्ष हो गया है। इतने छोटे समय के अनुभव से कोई विश्वसनीय निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। किन्तु हम यह विश्वास कर सकते हैं, और इसके प्रबल कारण भी हैं कि इस रीति से वाञ्छित परिणाम निकल ही रहा है।

३५४१ निरीक्षण-पत्र

जब कभी कोई सेव्य अपनी चिटिका के खो जाने की सूचना दे तो उसके पास उन उपनियमों की एक प्रति भेजनी चाहिए जो चिटिका-नाश से सम्बन्ध रखते हों तथा उस सम्बन्ध में की जाने वाली कार्यवाही आदि का विवरण भी भेजना चाहिए। इसके पश्चात् एक निरीक्षण पत्र (देखभाल पर्चा) बनाना चाहिए। उसकी प्रथम रेखा में चिटका की संख्या हो, द्वितीय रेखा में सेव्य का नाम हो तथा तृतीय रेखा में चिटिका-नाश की सूचना देने की तिथि हो। इन निरीक्षण पत्रों को निरीक्षण पत्र पेटिका में अनुवर्ग क्रम में रखना चाहिए।

३५४२ रहस्य भेद कार्य

आरोपण स्थान के व्यक्ति को, सावकाश कार्य के रूप में, आरोपित-चिटिका पात्रक की जांच करनी चाहिए और देखना चाहिए कि कोई नष्ट चिटिका आरोपित अवस्था में तो नहीं पड़ी हुई है। आरोपण स्थान के व्यक्ति के सामने भी खोयी हुई चिटिकाओं की एक सूची होनी चाहिए, जिससे कि यदि कोई नष्ट चिटिका आरोपण के लिए उपस्थित की जाए तो उसका रहस्य भेद किया जाए। जब भी कोई ऐसी चिटिका पकड़ी जाए तो उसे अवरुद्ध चिटिका पात्रक में अनुयुक्त कर दिया जाए। उसके साथ एक टिप्पण भी लगा देना चाहिए कि किन परिस्थितियों में वह चिटिका पकड़ी गई। उसके स्वामी को उसकी सूचना भी दे देनी चाहिए। यदि किसी प्रकार के दुर्व्यवहार की आशङ्का हो तो उसका उचित रीति से अनुगमन करना चाहिए।

३५४३ प्रतिचिटिकाएं

तीन महीने बीत जाने पर, अथवा नियमों में जो काल निर्दिष्ट हो उसके समाप्त हो जाने पर, सम्बद्ध सेव्य से कहना चाहिए कि खोयी हुई चिटिकाओं को पुनः प्राप्त करने के लिए उसने क्या क्या उद्योग किए तथा उनका क्या परिणाम हुआ, इसका विवरण दे। यदि तब तक भी वे न मिली हों तो उस सेव्य को उत्तरदायित्व प्रतिज्ञा पत्र दे दिया जाए और उससे कहा जाए कि योग्य स्टाम्प के कागज पर उस प्रतिज्ञा-पत्र को भर लाए। यदि प्रतिज्ञापत्र योग्य रूप में हो तो उसे कहना

चाहिए कि नियमों द्वारा निर्धारित प्रतिचिटिका शुल्क दे दे। उसके बाद उसे प्रतिचिटिका दी जा सकती है। किन्तु उस पर 'प्रतिमूर्ति' यह शब्द आड़े रूप में लिख देना चाहिए।

३६ अतिदेय तथा अन्य संग्रह

लेन-देन स्थान पर यह संभव है कि अतिदेय शुल्क, विशेष जमानत तथा प्रतिचिटिका के शुल्क के रूप में द्रव्य का संग्रह हो। लेखा-विभाग के बन्द होने के पूर्व सत्प्रवृत्ति पेटिका को खोल देना चाहिए तथा उपर्युक्त तीनों मदों में आया हुआ समस्त धन आय-व्यय लेखक को सौंप देना चाहिए। प्रेषक पञ्जिका में रकम तथा तिथि लिखनी चाहिए और उस धन को पा लेने की प्राप्ति के रूप में आय-व्यय लेखक का हस्ताक्षर भी करा लेना चाहिए।

३६१ अतिदेय स्टाम्प

यदि सत्प्रवृत्ति पेटिका की प्रणाली न चलाई जाए, किन्तु अतिदेय स्टाम्प की प्रणाली स्वीकृत की जाए तो लेन-देन स्थान को चाहिए कि आय-व्यय लेखक से पांच रुपये के मूल्य की अतिदेय स्टाम्प पञ्जिका स्थायी अग्रिम के रूप में ले ले। स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार पांच रुपये की रकम में न्यूनाधिकता भी की जा सकती है। प्रति सायंकाल उस दिन के अतिदेय संग्रह में एकत्रित रुपयों की अधिकतम पूर्ण संख्या आय व्यय लेखक को दे देनी चाहिए और उसी मूल्य का अतिदेय स्टाम्प पुस्तिका ले लेनी चाहिए।

३६२ प्राप्ति पुस्तिका

यदि अत्यन्त प्राचीन प्राप्ति पुस्तिका की प्रणाली से चिपके रहना ही श्रेयस्कर माना गया हो तो दिन का सम्पूर्ण संग्रह प्रतिदिन आय-व्यय लेखक को दे देना चाहिए। न केवल प्रेषण पञ्जिका में, अपितु रकम से व्याप्त अन्तिम प्राप्ति पत्र की प्रतिमूर्ति के पृष्ठभाग में भी उस आय-व्यय लेखक के हस्ताक्षर ले लेने चाहिए। प्रेषण पञ्जिका में भी जितनी रकम जमा कराई गई हो उन प्राप्ति संख्याओं को समावेशाङ्कन में लिख दिया जाए।

३७ प्रपत्र तथा पञ्जिका

अब जो कुछ लिखा जाएगा उसमें यदि सङ्केत संख्या का आरम्भिक अक्षर 'अ' हो तो उस प्रपत्र को असामान्य रीति से छोटे आकार का मानना चाहिए। यदि सङ्केत संख्या का प्रथम अक्षर 'प' हो तो उस प्रपत्र को पत्रक आकार का (५"×३") मानना चाहिए। यदि सङ्केत संख्या का प्रथम अक्षर 'क' हो तो प्रपत्र कार्टो (quarto) आकार का मानना चाहिए। यदि सङ्केत संख्या का प्रथम अक्षर 'स' हो तो पत्र फोलियो (folio) आकार का मानना चाहिए।

अ६६ अतिदेय पत्र (लेबल). अतिदेय स्टाम्प को डाक स्टाम्प के रूप में ही बनाना चाहिए। उस पर ग्रन्थालय का मुद्राचिह्न छपा हुआ होना चाहिए। प्रत्येक पत्र का मूल्य एक आना स्थिर करना चाहिए। उन्हें एक रुपये की पुस्तिकाओं में सम्पुटित करना चाहिए।

प६१२ प्रतिश्रावक पत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत.

एक पार्श्व क्रामक संख्या, ग्रन्थकार तथा आख्या के लिए छोड़ दिया जाता है। प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

(ग्रन्थालय का नाम) तिथि

क्रामक संख्या

ग्रन्थकार

आख्या

महाशय,

दूसरी ओर उल्लिखित ग्रन्थ अब ग्रन्थालय में उपलब्ध है। कृपया उसे ले जाने की व्यवस्था करें।

यदि इस पत्रक को प्रस्तुत न किया गया तो ग्रन्थ न दिया जा सकेगा।

ग्रन्थालयी

विशेष—१. दूसरी ओर अपना पता लिखें तथा आवश्यक पोस्टेज स्टाम्प चिपका दें।

२. इसका उपयोग केवल एक ही संपुट के प्रतिश्रवण के लिए किया जा सकता है।

दूसरे पार्श्व के वाम भाग पर निम्नलिखित शब्द छपे होने चाहिएं :—

क्रामक संख्या
ग्रन्थकार
आख्या

दक्षिण-अर्ध सङ्केत के लिए सुरक्षित है।

प६१४ अतिदेय सूचना पत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

(ग्रन्थालय का नाम) तिथि

प्रिय महाशय,

······को आपकी ओर से प्राप्तव्य ग्रन्थ अब तक प्रत्यावर्तित नहीं हुआ है / हुए हैं। कृपया उसे / उन्हें अतिदेय शुल्क के साथ सत्वर लौटा दें।

प६२ प्रार्थनापत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत. प्रपत्र के एक पार्श्व पर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

(ग्रन्थालय का नाम) तिथि

प्रवेश संख्या सेव्य संख्या

नाम, स्पष्टाक्षरों में (अन्त्य नाम का प्रथम तथा अन्य अक्षरों को उसके बाद कोष्ठक में लिखें)
गृह सङ्केत
व्यापार सङ्केत
व्यवसाय

द्वितीय तथा उसके आगे की रेखाओं को छापा जा सकता है। वह इस प्रकार हो कि अन्तिम रेखा पत्रक के तल भाग में समाप्त हो। इससे प्रथम और द्वितीय रेखाओं के बीच इतना अधिक स्थान खाली छूट जाएगा कि संशोधित प्रवेश संख्याओं तथा सेव्य संख्याओं को वर्षों तक लिखा जा सकेगा।

पत्रक के दूसरी ओर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है:—

निवेदन है कि मैं·········ग्रन्थालय का सेव्य बनना चाहता हूँ। मैं ग्रन्थालय के नियमों का अनुपालन करूंगा। मैं करदाता हूँ, और·········क्षेत्र के·········पथ पर रहता हूँ।

तिथि • हस्ताक्षर

प६४ नष्ट चिटिका संपरीक्षण पत्र. स्टेन्सिल. लेजर कागज. पङ्क्ति शीर्षक निम्नलिखित हों :—

सेव्य नाम
नष्ट चिटिका संख्या
सूचना तिथि
नष्ट चिटिका को प्राप्त करने के उद्योगों के परिणाम की सूचना देने की तिथि
प्रतिचिटिका देने की तिथि
विशेष

क६४ अतिदेय पञ्जिका. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. लेजर कागज. श्वेत. पृथक् पत्र बन्धक.

स्तम्भ शीर्षक के नीचे रेखाओं की संख्या प्रतिपार्श्व में १० होनी चाहिएं :—

सिरे पर पङ्क्ति शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

(ग्रन्थालय नाम) तिथि

सङ्केत······ नाम······

जमानत संख्या चिटिकाओं की संख्या एवं प्रकार

उसके नीचे निम्नलिखित स्तम्भ शीर्षक होने चाहिए :—

क्रामक संख्या (१½ इंच); देय तिथि (१ इंच); प्रत्यावर्तन तिथि (१ इंच); अतिदेय दिन (½ इंच); अतिदेय शुल्क रु० आ० (१ इंच); प्राप्ति तिथि (१ इंच); प्राप्ति पत्र सं. (१ इंच); विशेष (१ इंच).

क६६ मिश्र प्राप्ति पुस्तिका. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. २१ पाउण्ड मुद्रण कागज, श्वेत. पचास की पुस्तिकाओं में संपुटित. प्रत्येक

पत्र में एक प्राप्ति पत्र तथा उसका प्रतिरूप होना चाहिए। प्राप्ति पत्र तथा उसके प्रतिरूप के बीच का भाग छिद्रित होना चाहिए। प्राप्ति पत्र पर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है:—

(ग्रन्थालय का नाम) तिथि

क्रम संख्या

श्री·········से रु० आ० पा० निम्ननिर्दिष्ट विवरणानुसार प्राप्त हुए:—

विशेष जमानत

······प्रति चिटिका के लिए शुल्क

······को देय ग्रन्थ पर अतिदेय शुल्क (यदि अतिदेय स्टाम्प काम में लिए जाते हों तो इसे छोड़ दिया जाए)

तिथि

लेन-देन विभाग अध्यक्ष

लेन-देन लेखक

ग्रन्थालयी

स६१ द्वार पञ्जिका. मुद्रित. प्रदर्शन टाइप. २१ पाउण्ड. मुद्रण कागज. श्वेत. दीर्घतर पार्श्व की ओर मुड़े। प्रति पार्श्व में स्तम्भ शीर्षक के नीचे समलम्ब रेखाओं की संख्या १५ होनी चाहिए और उन पर १ से १५ तक संख्याएं लगानी चाहिएं। स्तम्भ लघुतर पार्श्व के समानान्तर पर हों।

स्तम्भ शीर्षक निम्नलिखित हो :—

क्रम सं० (१ इंच); नाम, स्पष्टाक्षरों में (३ इंच); पूर्णसङ्केत (६ इंच); योग्यता आदि (१½ इंच); अभिज्ञान सं. (½ इंच); विशेष (१½ इंच).

स्तम्भ शीर्षक के ऊपर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित होगा :—

कृपया स्पष्टाक्षरों में लिखिए— (ग्रन्थालय का नाम)

आप ग्रन्थालय के नियमों के पालन का वचन देते हैं, इसके प्रमाण स्वरूप अपना नाम तथा सङ्केत लिखें।

स६२ उद्धरण गणना पत्र.

ऊर्ध्वलम्ब स्तम्भों में उन घंटों का अथवा अन्य योग्य समय के अन्तरालों का सूचन हो सकता है जिनमें ग्रन्थालय प्रतिदिन खुला रहता हो। इसके अतिरिक्त योग्य समय के अन्तरालों पर समूहात्मक संकलन किया जाए, उसके लिए भी व्यवस्था होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, पहला संकलन प्रातः १० बजे, दूसरा अपराह्न ३ बजे, तीसरा सायं ६ बजे और चौथा रात्रि के ९ बजे। एक स्तम्भ सर्वसंकलन के लिए भी होना चाहिए। इसके अतिरिक्त, यह भी वाञ्छनीय है कि कुछ विशिष्ट महत्त्वपूर्ण क्षणों पर, ग्रन्थालय में विद्यमान पाठकों की संकलित संख्या को लिखने के लिए व्यवस्था की जाए। इसके लिए भी स्तम्भ बनाये जाएं। वे क्षण कौन कौन से होंगे इस विषय का निर्णय स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार अधिकारी कर सकते हैं। पङ्क्ति-शीर्षक के लिए विषयों के मुख्य वर्गों के तथा स्थानीय जनता की अभिरुचि के अन्य उपविषयों के द्योतक चिह्नों का उपयोग किया जा सकता है।

किसी विशिष्ट घंटे में अथवा योग्य समय की अवधि में, किसी विशिष्ट विषय में कितने ग्रन्थ बाहर गए इसकी गणना रेखाओं द्वारा करनी चाहिए। प्रथम की चार रेखाएं ऊर्ध्वलम्ब हों तथा पांचवीं रेखा इन चारों को काटती हुई समलम्ब बनाई जाए। इससे गणना में सरलता होगी। नीचे नमूने के रूप में, उद्धरण गणना पत्र का एक अंश दिखाया जा रहा है :—

<table>
<tr><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td colspan="2">३-६ सायं</td></tr>
<tr><td>ल</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|-|-|-| ||</td><td>७</td></tr>
<tr><td>व</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>||</td><td>२</td></tr>
</table>

स६३ पर्यालोचन गणना पत्र. यह उद्धरण गणना पत्र के समान ही होगा।

स ६४ लेन-देन दैनन्दिनी (दैनिक). स्तम्भों के मुख्य शीर्षकों के लिए विषयों के मुख्य वर्गों के तथा स्थानीय जनता की अभिरुचि के अन्य उपविषयों के द्योतक चिह्नों का उपयोग किया जा सकता है। *प्रत्येक शीर्षक के लिए, पर्यालोचन, उद्धरण तथा संकलन ये तीन उपशीर्षक होने चाहिएं। साथ ही निम्नलिखित अतिरिक्त शीर्षक भी होने* चाहिएं :—पर्यालोचन, उद्धरण तथा संकलन; साथ ही सर्वसंकलन पाठकों की संकलित संख्या। अन्तर्ग्रन्थालय उद्धरण का आगम; तथा अन्तर्ग्रन्थालय उद्धरण का निर्गम। पङ्क्ति शीर्षक में मास की तिथियां होंगी। उचित स्थानों पर अतिरिक्त पङ्क्तियां भी लगा देनी चाहिएं। उदाहरणार्थ, सप्ताह का संकलन ७, १४, २१, तथा २८ तिथियों के बाद होगा, तथा मास के अन्त में मास का संकलन होगा।

स६५ लेन-देन दैनन्दिनी (मासिक). मासिक लेन-देन की दैनन्दिनी में दैनिक लेन-देन दैनन्दिनी के समान ही स्तम्भ शीर्षक होंगे। इसके पङ्क्ति शीर्षक मास होंगे तथा उनका वर्धिष्णु संकलन भी होगा; अर्थात् जनवरी; फरवरी; समूह संकलन; मार्च; समूह संकलन, इत्यादि।

स६६ परिपाटी दैनन्दिनी, स्तम्भ शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

१ सामान्य पत्रव्यवहार

११ प्राप्त अधिकार-दान के पत्र; १२ स्वीकृत अधिकार-दान के पत्र; १३ प्राप्त अन्य पत्र; १४ स्वीकृत अन्य पत्र; १५ स्वयं लिखित पत्र; १६ प्रेषित स्मरणपत्र।

४ नवीकरण तथा प्रतिश्रुति

४१ प्राप्त नवीकरण की प्रार्थनाएं; ४२ विहित नवीकरण; ४३ अस्वीकृत नवीकरण; ४४ प्राप्त प्रतिश्रुति की प्रार्थनाएं; ४५ प्रेषित प्रतिश्रावक पत्र; ४६ अलब्ध प्रतिश्रावक पत्रक।

६ *अतिदेय पत्रक

६१ प्रेषित प्रथम स्मरण पत्र; ६२ प्रेषित द्वितीय स्मरण पत्र; ६३ प्रेषित तृतीय स्मरण पत्र; ६४ प्रेषित पंजीकृत स्मरण पत्र ।

४ प्रवेशन

४१ करदाता; ४२ अन्य।

५ नवीकरण

५१ करदाता; ५२ अन्य ।

६ चिटिका-नाश

६१ नष्ट चिटिकाएं; ६२ ज्ञात नष्ट चिटिकाएं; प्रदत्त प्रतिचिटिकाएं ।

७ ग्रन्थ-नाश

७१ नष्ट ग्रन्थ; ७२ ज्ञात ग्रन्थ; ७३ विशेष जमानत के विषय; ७४ बदलकर दिए हुए ग्रन्थ ।

जो केन्द्रीय ग्रन्थालय शाखा ग्रन्थालयों को तथा समर्पण प्रतिष्ठानों को ग्रन्थ भेजा करते हों वे इस कार्य के लिए स्वतन्त्र लेन-देन दैनन्दिनियां रख सकते हैं। वे दैनन्दिनियां उनसे भिन्न होंगी जो पाठकों को साक्षात् ग्रन्थ देने से सम्बन्ध रखती हैं।

३८ अनुयोग

निम्नलिखित सारिणी में लेन-देन विभाग के अनुयोगों के संख्या-अङ्कन के लिए पद्धति दी जा रही है। इन नीचे दिए हुए शब्दों के अर्थ अध्याय ४ के अनुच्छेद ४६८ में प्राप्त हो सकेंगे।

नाम	वर्ग सं०	अनुयोग भेदक
उपयोग	६१	नियम
सेव्य	६११	सेव्य
पर्यालोचक	६१२	पर्यालोचक
अध्ययन मण्डल	६१४ (इसके पश्चात् विषय की वर्गसंख्या हो)	

नाम	वर्ग सं०	अनुयोग भेदक
अनधिकारी	६१५	पत्रव्यवहर्ता
पृच्छक	६१८	पृच्छक
प्रतिश्रावक पत्रक	६२३४	शून्य
अन्तर्ग्रन्थालय लेन	६२५ (इसके पश्चात् विषय की वर्गसंख्या हो)	शीर्षक
लेन-देन करने वाले ग्रन्थालय	६५२	ग्रन्थालय

६८१ लेख संग्रह में प्रेषण

इस विभाग के सब अनुयोगों को उनके समाप्त हो जाने के एक वर्ष पश्चात् लेख संग्रह कक्षा में भेज देना चाहिए।

६८२ लेखों का नाश

काम में लाये हुए अथवा स्थायी पत्रक सेव्यों द्वारा लौटा दिए जाने पर एक वर्ष तक रखे जा सकते हैं। उसके बाद उनका नाश किया जा सकता है। अन्य सब अनुयोग ३ वर्षों तक रखे जा सकते हैं।

अध्याय ४

परोक्ष कार्य

प्रबन्ध परिपाटी के अनेक कृत्य ऐसे हैं जो ग्रन्थालय तथा अन्य कार्यालयों में एक से ही होते हैं। उदाहरणार्थ, कर्तृगण, अर्थ, आय-व्यय लेखन, पत्र व्यवहार, छपाई, स्टेशनरी. पूर्ति, तथा सेवाएं एवं भवन और संभार-सामग्री का उल्लेख किया जा सकता है। सामान्यतः यही पाया जाता है कि ग्रन्थालय एक अधीन संस्था (उपजीवक) होती है। अतः अनेक कृत्यों की परिपाटी उसी प्रकार की होगी जैसी वह उपजीव्य समष्टि होगी। सर्वजन ग्रन्थालय के सम्बन्ध में स्थानीय समष्टि ही ग्रन्थालय अधिकारिणी होगी तथा वही परिपाटी का निर्णय करेगी। इन कृत्यों का यथाविधि वर्णन हमारे ग्रन्थ 'ग्रन्थालय प्रबन्ध' (*Library administration*) के अध्याय ३ में पाया जा सकता है।

यहां हम अधिकतर उसी प्रातिस्विक (विशिष्ट) ग्रन्थालय परिपाटी तक अपनी चर्चा सीमित रखेंगे जो ग्रन्थ तथा सामयिक, उनके वरण, क्रय, संग्रह में अन्तर्वेशन अथवा परिग्रहण, मूल्य-अर्पण. उपयोग के लिए सज्जीकरण, चयन-प्रकोष्ठ में व्यवस्थापन तथा संपुटन आदि विषयों से सम्बद्ध है। इनके सम्बन्ध में ग्रन्थाकारक (तात्त्विक) ग्रन्थ तथा सामयिक के बीच कुछ अन्तर पड़ता है। सामयिकों के सम्बन्ध में तो यह बात है कि सज्जीकृत संपूर्ण संपुट एक ही बार में नहीं आ जाता। किन्तु वह क्रमशः अवदानों के रूप में आता है। वे अवदान नियमित रूप से तो कदाचित् ही प्रकाशित होते हैं। वे बहुधा अनियमित रूप से बीच बीच में प्रकाशित हुआ करते हैं। ज्योंही किसी सामयिक का कोई एक संपुट पूर्ण प्रकाशित हो जाता है तथा उसके आख्या-पत्र-मुख और निर्देशी आ जाते हैं त्योंही उन अवदानों को एकत्रित कर

उनका एक संपुट बना देना पड़ता है। इतना ही नहीं, वे अवदान ज्यों ज्यों आते जाएं त्यों त्यों उन्हें उसी समय उपयोगार्थ सुलभ कर देना पड़ता है। यह नहीं कि जब तक संपुट पूर्ण न हो जाए तथा उसका संपुटन न हो जाए तब तक उन्हें उपयोगशून्य हीन अवस्था में डाल रखा जाए।

४१ ग्रन्थ वरण

ग्रन्थालय प्रबन्ध के प्रातिस्विक विभाग में सर्व प्रथम क्रम (पाद विन्यास) ग्रन्थवरण से सम्बद्ध है। यह तीन तत्त्वों से उपहित रहता है :—

१. मांग, जो ज्ञान जगत् के विभिन्न क्षेत्रों में जनता की अभिरुचि के अनुसार निर्धारित हो;

२. पूर्त्ति अथवा विपणि में ग्रन्थों की सुलभता का विस्तार अथवा स्वरूप। उत्कृष्ट कागज पर बड़े मुद्राक्षरों में मुद्रित एवं प्रचुर चित्रों से युक्त भव्य आवृत्तियों को सदा ही पूर्ववर्त्तिता देनी चाहिए; तथा

३. उपलब्ध संपूर्ण अर्थ, तथा विभिन्न विषयों में और मानकों में पूर्व से ही विद्यमान संग्रह की समृद्धि अथवा असमृद्धि के आधार पर निर्णीत, विभिन्न विषयों तथा मानकों के लिए दिया हुआ उस अर्थ का अनुपात।

४११ मांग का अवधारण

ग्रन्थालय में जो ग्रन्थ लेन-देन के पात्र बनते हैं उनके विषय-विभाजन की ओर यदि ध्यान दिया गया तो यह विदित हो जाएगा कि किस क्षेत्र में कैसी और कौनसी मांग वर्तमान है। ग्रन्थालय का यह भी कर्तव्य है कि उस क्षेत्र की, देश की तथा संसार की घटनाओं का पर्यवेक्षण करे और वर्ष में जो भी कुछ उत्सव तथा मेले तमाशे होते हों उनका ध्यान रखे। इनके द्वारा संभाव्य मांग भी जानी जा सकती है। जब मांग का अवधारण किया जाएगा तो कुछ विवरण भी बना लिया जा सकेगा। उसी विवरण के आधार पर विभिन्न विषयों के ग्रन्थों के लिए अर्थ का विभाजन करना चाहिये। ग्रन्थालय को चाहिए कि अपने

ग्रन्थ-वरण के मानकों द्वारा, छोटी छोटी मात्राओं में, वर्तमान मानक तथा अभिरुचि को संपन्नतर करता जाए। इसके लिए यह आवश्यक नहीं कि प्रचलित मानक और अभिरुचि से अनुचित अलगाव उत्पन्न किया जाए। किन्तु क्रमशः उसमें एक प्रकार का घुमाव दिया जा सकता है।

४१२ स्रोत

अंग्रेजी भाषा के ग्रन्थों के लिए निम्नलिखित स्रोत मुख्य हैं :— ग्रेट ब्रिटेन के 'बुकसेलर' और 'पब्लिशर्स सर्कुलर' तथा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का 'पब्लिशर्स वीकली'। ये तीनों साप्ताहिक हैं। ग्रेट ब्रिटेन का 'इंग्लिश केटलॉग' तथा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का 'विलसन केटलॉग' ये दोनों वार्षिक हैं। भारतवर्ष में प्रकाशित ग्रन्थों के लिए ग्रन्थ वरण के मुख्य स्रोत, भारत के विभिन्न अवयव राज्यों के रजिस्ट्रार ऑफ बुक्स द्वारा प्रकाशित 'क्वार्टरली लिस्ट ऑफ पब्लिकेशन्स' हैं। दोनों प्रकार के ग्रन्थों के लिए अन्य स्रोत निम्नलिखित हैं:—

विभिन्न प्रकाशकों एवं ग्रन्थ विक्रेताओं के स्वतन्त्र सूचीपत्र; ग्रन्थों में दी हुई वाङ्मय सूचियां; स्वतन्त्र वाङ्मय सूचियां; सामयिकों में प्रकाशित ग्रन्थ समीक्षाएं। भारतवर्ष के 'दैनिकों' की रविवार आवृत्तियों में कुछ साहित्यिक पृष्ठ भी होते हैं, जिनमें समीक्षाएं भी प्रकाशित होती हैं। ये भी ग्रन्थ वरण के लिए स्रोत का काम कर सकती हैं।

४१२१ सुझाव पात्रक

पाठक जिन ग्रन्थों में अभिरुचि रखते हों अथवा उसकी संभावना हो ऐसे ग्रन्थों की सूचना वे स्वयं ग्रन्थालय को दे सकते हैं। जब ऐसा सुझाव ग्रन्थालय को प्राप्त हो तब एक ग्रन्थ वरण पत्रक बना लिया जाए और सुझाव-पात्रक में वर्गीकृत क्रमानुसार अनुयुक्त कर लिया जाए।

४१२२ असार निष्कासन

मुद्रित स्रोतों को विधिवत् फलकों पर अनुयुक्त रखना चाहिए। जब कभी और ज्योंही किसी स्रोत की नयी आवृत्ति आए, त्योंही प्राचीन आवृत्ति को निकाल बाहर कर देना चाहिए। किन्तु यह व्यवहार उन्हीं

के साथ किया जाए जो क्षणिक उपयोग के हों। यह भी संभव है कि यदि वे ग्रन्थालय में रखने योग्य हों तो उन्हें वाङ्मयसूच के संग्रह में भिजवा दिया जाए।

४१३ परिपाटी

जब कभी और ज्योंही ग्रन्थवरण के स्रोत उपलब्ध हों तब उनका विधिवत् परीक्षण करना चाहिए। प्रत्येक वृत वस्तु (ग्रन्थ आदि) के लिए एक ग्रन्थवरण पत्रक बना लेना चाहिए। उन पत्रकों को स्थूल रूप से वर्गीकृत क्रम में व्यवस्थापित कर लेना चाहिए। उन पर (प्राथमिक, साधारण, गम्भीर आदि) मानक चिह्न को भी परीक्षणात्मक रीति से लगा देना चाहिए। इन पत्रकों को मानक के अनुसार विभिन्न कक्षाओं में वर्गीकृत क्रम से अनुयुक्त कर लेना चाहिए। सुविधा भर अन्तराल के अवसरों पर (समझ लें कि मास में एक निश्चित दिन) सम्बद्ध विशेषज्ञों के साथ उन पत्रकों के विषय में विमर्श कर लेना चाहिए। अन्तिम रूप से वृत वस्तुओं के लिए ग्रन्थालय समिति की अनुज्ञा प्राप्त कर लेनी चाहिए। स्वीकृत सूचि को स्वीकृत अर्थन कहा जाएगा।

४१७ प्रपत्र तथा पंजिका

प१२ ग्रन्थवरण पत्रक. मुद्रित. लघुमुद्र. ब्रिस्टल बोर्ड. मुद्रित. ग्रन्थों के लिए श्वेत. दान प्राप्त ग्रन्थों के लिए हरित. सामयिकों के संपुटित संपुटों के लिए रक्त.

दोनों ओर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

अग्र

परि सं.	दान सं.	बहिष्क. सं.	
का. सं.			
शीर्षक			
आख्या	संपरीक्षण	आवृ	वर्ष
प्रकाशक		प्रका. मूल्य	
माला, इदि.			
समालोचना			
अनुसन्धान			

पृष्ठ

विक्रेता

	तिथि	हस्ताक्षर
वृत		
स्वीकृत		
आदिष्ट		
प्राप्त		
प्रदत्त मूल्य		
कर्त्तित		
वर्गीकृत		
सूचीकृत		
प्रदर्शित		
संपुटित		
बहिष्कृत		

मूल्य
भारतीय
विदेशी

आदेश सं०
प्रमाणक सं०

प१२

ऑ१२ ग्रन्थवरण संमति पत्र प्रपत्र : स्टेन्सिल. २१ पाउण्ड. मुद्रण कागज. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

विषय : ग्रन्थवरण

आपकी सेवा में इस पत्र के साथ (विषय) के (संख्या) ग्रन्थवरण पत्रक भेजे जा रहे हैं। कृपया उन्हें "स्वीकृत", "विलम्बित" और "अस्वीकृत" इन तीन विभागों में विभाजित कर दीजिए। उन तीनों विभागों को अलग अलग बांध दीजिए तथा आपकी संमति के सूचक पत्र के साथ मेरे पास लौटा दीजिए।

वर्तमान आर्थिक वर्ष में आप के विषय में ग्रन्थों के क्रयण के लिए अवशिष्ट द्रव्य रु०.........हैं।

आशा है आपका उत्तर एक सप्ताह में आ जाएगा।

स१३ अर्थन लेखन प्रपत्र. स्टेन्सिल. २१ पाउण्ड. मुद्रण कागज. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

बाह्य सं०	तिथि
अनुयोग सं०	प्राप्ति तिथि

प्रेषक

विषय : ग्रन्थ-अर्थन

ग्रन्थालयी का मन्तव्य	कार्यालय का मन्तव्य
	संमत वस्तुओं की संख्या आरम्भ से ही विद्यमान अथवा आदिष्ट वस्तुओं की संख्या प्रतिमूर्त्तीकरण के लिए संमत वस्तुओं की संख्या ग्रन्थालय में अ-विद्यमान वस्तुओं का अनुमानित मूल्य रु० संमत प्रतिमूर्त्तीकरण के लिए अनुमानित मूल्य रु० संपूर्ण अनुमानित मूल्य रु० ग्रन्थों के लिए प्रदत्त द्रव्य रु० गृहीत पूर्व द्रव्य रु० अवशिष्ट द्रव्य रु० विशेष

ग्रन्थालय समिति का निर्णय

स१५ दैनिक दैनन्दिनी. इसके शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

११ प्राप्त पत्र

१२१ उत्तरित पत्र

१२२ अनुयुक्त पत्र

१४१ लिखित पत्र

१४२ प्रेषित परिपाटी पत्र
१५ प्रेषित स्मरणपत्र
२१ अर्थित अर्थन
२२ प्राप्त अर्थन
३१ वृत पत्रक पात्रक से मेलित ग्रन्थवरण पत्रक
३२ आदिष्ट पात्रक से मेलित ग्रन्थवरण पत्रक
३४ विचाराधीन देयपत्रों से मेलित ग्रन्थवरण पत्रक
३५ सूची से मेलित ग्रन्थवरण पत्रक

स१६ साप्ताहिक दैनन्दिनी. इसमें लिखे हुए ग्रन्थवरण पत्रकों की संख्या दिखलानी चाहिए। इसके शीर्षक प्रचलित वर्गीकरण के मुख्य वर्गों के द्योतक चिह्न होंगे।

४१८ अनुयोग

नाम	विस्तारण युक्ति	अनुयोग भेदक
स्रोत	विषय युक्ति अथवा/तथा भाषा युक्ति	पत्रव्यवहर्ता
वरण	विषय युक्ति	”
अर्थन	”	”
विभाजन	”	”
बहिर्मुख पृच्छा	”	”
अन्तर्मुख पृच्छा	”	”

इन सब अनुयोगों को इनके पूर्ण हो जाने के एक वर्ष पश्चात् लेख संग्रह में भेज देना चाहिए। तीन या पांच वर्ष के पश्चात् सुविधानुसार उनका नाश किया जा सकता है।

४२ ग्रन्थ-आदेशन

भारतवर्ष में आज ग्रन्थालयों के लिए ग्रन्थ-आदेशन कार्य अन्य देशों की अपेक्षा अधिक कठिन रहता है। हमारे ग्रन्थालयों में अधिकतर अमेरिकन तथा अंग्रेजी ग्रन्थ ही दृष्टिगोचर होते हैं। इस प्रकार स्वभावतः ग्रन्थ विपणियां हजारों मील दूरस्थित न्यूयॉर्क तथा लन्दन

नगरों में हैं। फलतः भारतीय ग्रन्थालय, ग्रन्थों को न तो स्वीकृति के लिए साक्षात उपस्थापित करवा सकते हैं और न विभिन्न आवृत्तियों में से किसी विशिष्ट का चुनाव ही कर सकते हैं। हमारे ग्रन्थालय में एक ग्रन्थ आरम्भ से ही होता है। उसी की एक दूसरी आवृत्ति प्रकाशित होती है। अब वह नयी आवृत्ति प्राचीन से तत्त्वतः भिन्न है अथवा नहीं, इसका निर्णय करना सर्वथा अशक्य हो जाता है। अतः भारतीय ग्रन्थालयों के ग्रन्थ-आदेशन विभाग को अपने यूरोपीय अथवा अमेरिकन समान विभागों की अपेक्षा कहीं अधिक उत्तरदायित्व निभाना पड़ता है तथा कहीं अधिक कार्य करना पड़ता है। तभी वे सफलतापूर्वक अर्थनों का संग्रह के साथ मिलान कर सकते हैं। तथापि इतना तो आशाजनक है कि अभी अभी कतिपय उत्साही ग्रन्थ विक्रेता बम्बई कलकत्ता, देहली, लखनऊ तथा मद्रास आदि प्रान्तीय एवं केन्द्रीय राजधानियों में सामान्य ग्रन्थों का संग्रह प्रारम्भ करने लग गए हैं।

भारतीय प्रकाशनों के सम्बन्ध में तो और भी अधिक दुरवस्था है। केवल पाठ्य पुस्तकों को छोड़कर अन्य ग्रन्थों के लिए भारतवर्ष में अब तक प्रकाशन व्यवसाय भली भांति संघटित नहीं हो सका है। बहुधा स्वयं ग्रन्थकार को ही प्रकाशक तथा ग्रन्थ-विक्रेता का कार्य पूरा करना पड़ता है। संभव है कि वह देश के किसी अपरिचित, मार्गातिदूरवर्ती स्थान में रहता हो। यह स्वाभाविक ही है कि उसे व्यापार के ढंग ज्ञात न हों। बहुधा यह देखा जाता है कि वह ग्रन्थों का भेजना तो क्या पत्रों का उत्तर तक नहीं देता।

४२१ स्थायी विक्रेता

ग्रन्थालयों को अपने अभीष्ट ग्रन्थों का क्रयण साक्षात् प्रकाशकों से करने में अधिक लाभ है अथवा स्थायी विक्रेता के द्वारा परंपरया करने में, यह एक विवादास्पद विषय है। भारतीय ग्रन्थों के सम्बन्ध में तो यह प्रश्न सरलता से हल हो जाता है और उसका उत्तर प्रथम विकल्प के पक्ष में आता है। कारण यह है कि भारतवर्ष में अब तक विश्वासपात्र, परिश्रमी एवं संघटित ग्रन्थ व्यवसाय का विकास ही नहीं हो सका है। अतः सन्तोषजनक मार्ग तो एकमात्र यही है कि अवसर के अनुसार प्रकाशकों से अथवा ग्रन्थकारों से साक्षात

व्यवहार किया जाए। यूरोपीय तथा अमेरिकन ग्रन्थों के सम्बन्ध में परिस्थिति कुछ दूसरी ही है। उनके विषय में यदि एक स्थायी ग्रन्थ विक्रेता बना लिया जाए तो लाभप्रद होगा।

४२११ संविदा

स्थायी विक्रेताओं को नियुक्त करने के लिए ग्रन्थों के भौतिक शरीर आदि के सम्बन्ध में कुछ अभिसन्धियों की संविदा करा लेना आवश्यक है। विक्रेताओं को निम्नलिखित उत्तरदायित्वों को उठाने की प्रतिज्ञा करने के लिए कहना चाहिए।

१. प्रत्येक संपुटको, भेजने से पहले. संपरीक्षित कर लेना चाहिए। यदि ग्रन्थ के यहां आ जाने पर कोई दोष दिखाई पड़ा तो उन्हें सदोष प्रति वापस ले लेनी पड़ेगी और अपने ही खर्च पर अन्य निर्दोष प्रति भेजनी पड़ेगी। उस सदोष ग्रन्थ के प्रेषण का दोनों ओर का खर्च भी उन्हें ही उठाना पड़ेगा।

२. यदि कोई विशेष उल्लेख विपरीत न कहे, तो प्रत्येक दशा में प्रत्येक ग्रन्थ की नूतनतम आवृत्ति भेजनी चाहिए।

३. यदि आदेशन में यह उल्लेख हो कि अमुक ग्रन्थ की अमुक आवृत्ति ग्रन्थालय में आरम्भ से ही है, तो उन्हें यह जांच करनी पड़ेगी कि बाजार में उपलभ्य नवीन आवृत्ति ग्रन्थालय में विद्यमान आवृत्ति से वस्तुतः भिन्न है अथवा नहीं। यदि भिन्न नहीं है तो वह ग्रन्थ नहीं भेजना चाहिए। केवल इस बात की सूचना ग्रन्थालय को दे देनी चाहिए। जब कभी कोई सन्देह हो तो उन्हें वह बात स्पष्ट रूप में ग्रन्थालय को लिखनी चहिए। जब दृढ़ीकरण का आदेश आ जाए तभी वह ग्रन्थ भेजना चाहिए।

४. यदि कोई ग्रन्थ भिन्न आख्या से प्रकाशित अन्य ग्रन्थ का पुनः प्रकाशन मात्र हो तो उन्हें ग्रन्थालय को इसकी सूचना देनी चाहिए। जब दृढ़ीकरण का आदेश आ जाए तभी वह ग्रन्थ भेजना चाहिए।

५. यदि कोई ग्रन्थ किसी सामयिक अथवा अन्य ग्रन्थ का पृथक्-मुद्रण मात्र हो तो उन्हें ग्रन्थालय को इसकी सूचना देनी

चाहिए। जब दृढ़ीकरण का आदेश आ जाए तभी वह ग्रन्थ भेजना चाहिए।

६. किसी विदेशी प्रकाशक का स्थानीय प्रतिनिधि उस देश की विक्रेय ग्रन्थ तालिका में किसी विदेशी ग्रन्थ को समाविष्ट कर लेता है। किन्तु यदि वस्तुतः वह विदेशी ग्रन्थ हो, तो उन्हें ग्रन्थालय को इसकी सूचना देनी चाहिए। जब दृढ़ीकरण का आदेश आ जाए तभी वह ग्रन्थ भेजना चहिए।

७. यदि ग्रन्थकार के नाम में आख्या में, अथवा उनके लिखने में किसी प्रकार का भेद अथवा वैषम्य हो, तो उन्हें ग्रन्थालय को इसकी सूचना देनी चाहिए। जब दृढ़ीकरण का आदेश आ जाए तभी वह ग्रन्थ भेजना चाहिए।

८. यदि कोई ग्रन्थ भूल से दो आदेशनों में समाविष्ट कर लिया गया है, अथवा किसी स्थायी आदेश में अन्तर्गत है तो केवल एक ही प्रति भेजनी चाहिए और दूसरी प्रति तब तक न भेजनी चाहिए जब तक दृढ़ीकरण का आदेश न आ जाए।

इनमें से किसी विषय में यदि वे अयोग्य पूर्ति करते हैं—अवाञ्छित ग्रन्थ भेजते हैं—तो उन्हें अपने खर्च पर उसे वापस ले लेना पड़ेगा।

४२१२ कृतोपयोग ग्रन्थ

मुद्रणातिक्रान्त ग्रन्थों के विषय में सर्वोत्तम मार्ग यह है कि विभिन्न कृतोपयोग (प्राचीन) ग्रन्थ विक्रेताओं से न्यूनतम मूल्य मंगवाए जाएं और प्रत्येक विषय को उसी के आधार पर निश्चित किया जाए। यह ठीक नहीं कि उनके विषय में भी कोई स्थायी विक्रेता नियुक्त कर लिया जाए। बहुधा यह भी संभव है कि कृतोपयोग-ग्रन्थ-विक्रेताओं के सूचीपत्र ही पृच्छा की आवश्यकता को भी दूर कर दें। किन्तु यदि मूल्य अधिक हो तो इन सूचीपत्रों पर अधिक विश्वास नहीं करना चाहिए। यह सम्भव है कि प्रतियोगितात्मक न्यूनतम मूल्य मंगवाने से अधिक सुविधाजनक व्यवहार हो सके।

४२२ आदेशन

आदेशन कार्य को समान रूप से वर्ष भर व्याप्त कर लिया

जाए और प्रति सप्ताह अथवा प्रति मास निश्चित दिन नियमित रूप से आदेश भेजा जाए यह वांछनीय है। प्रत्येक आदेश के लिए परिपाटी निम्न प्रकार की होती है:—अन्तिम रूप से स्वीकृत ग्रन्थवरण पत्रकों को ग्रन्थकार नामों के वर्णक्रमानुसार व्यवस्थित कर लेना चाहिए। समस्त प्रकार के अवाञ्छित प्रतिमूर्तीकरण से बचने के लिए सावधानी के साथ उन पत्रकों का मिलान करना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए निम्नलिखितों से मिलान करना चाहिए:—(१) ग्रन्थालय सूची, (२) स्थायी आदेश पत्रक, (३) अप्राप्त ग्रन्थ आदेश पत्रक, (४) मूल्यदानापेक्षी देयपत्र तथा ग्रन्थालय की विनिमय सूची (यदि वह हो)। उन ग्रन्थों के पत्रकों को अलग कर देना चाहिए जो दान के रूप में प्राप्त हो सकते हों, तथा उनके लिए प्रार्थना-पत्र भेज देना चाहिए। अवशिष्ट पत्रकों के लिए आदेश सूची टाइप कर लेनी चाहिए तथा उसकी तीन प्रतिलिपियां करनी चाहिएं। एक को तो आदेश के साथ विक्रेता के पास भेजना चाहिए। दूसरी पाठकों को संमतिदान के लिए रख छोड़नी चाहिए। तीसरी कार्यालय प्रतिलिपि के रूप में उपयुक्त करनी चाहिए। संवादी ग्रन्थ-वरण-पत्रक अब आदेश-पत्रक का पद प्राप्त कर लेते हैं। आदेश पात्रक मे अप्राप्त ग्रन्थों के पत्रक पहले से ही होंगे। उन्हीं के बीच इन्हें इनके योग्य वर्णानुक्रमानुसारी स्थानों में अन्तर्निविष्ट कर लेना चाहिए।

४२२१ स्थायी आदेश

निम्नलिखित प्रकार के ग्रन्थों के लिए स्थायी आदेश दे देना वाञ्छनीय है :—

१ माला ग्रन्थ, अर्थात् वे ग्रन्थ जो किसी ऐसी माला में प्रकाशित होते हों जिस माला के समस्त ग्रन्थों का क्रयण करना ग्रन्थालय ने निश्चित कर लिया हो;

२ नैक-संपुटक ग्रन्थ, अर्थात् वे ग्रन्थ जो दो या उससे अधिक संपुटों में प्रकाशित हों और जिनके सभी संपुट एक ही बार में न प्रकाशित हुए हों;

३ अवदान ग्रन्थ, अर्थात् वे ग्रन्थ जो क्रमशः भागों में अथवा अवदानों में प्रकाशित होते हों; उन भागों अथवा अवदानों का संग्रह

अपेक्षित हो तथा उनका संगुटन तभी हो सकता हो जब आख्या-पत्र आ जाए;

४ प्रशुल्क ग्रन्थ (दत्तांशमूल्य); वे ग्रन्थ जिनके वास्तविक प्रकाशन के पूर्व ही अंशतः अथवा संपूर्ण मूल्य पहले से ही चुका दिया गया हो।

४२३ पूर्ति प्राप्ति

जब पूर्ति आ पहुँचे तब ग्रन्थों को उसी क्रम में व्यवस्थापित कर लेना चाहिए जिस क्रम में वे देय पत्रों में संलिखित हों। प्रत्येक ग्रन्थ के आदेश पत्रक को उठाना चाहिए तथा उसे ग्रन्थ के आख्या-पत्र मुख पर प्रविष्ट कर देना चाहिए। यदि किसी ग्रन्थ के लिए आदेश पत्रक न हो तो इसका अर्थ यह समझना चाहिए कि या तो उसका मूल्य चुका दिया है अथवा उसका कभी आदेश ही नहीं दिया गया। जब सब ग्रन्थों के लिए उनके पत्रक मिल जाएं तब सावधानता के साथ उन ग्रन्थों का संपरीक्षण करना चाहिए, उनका पर्यवलोकन करना चाहिए तथा उनका स्वीकार उसी अवस्था में करना चाहिए जब वे उन आदेश पत्रकों में दिए हुए प्रत्येक वर्णन, स्वरूप एवं अवधारण का सन्तोषजनक समाधान करते हों। इसके पश्चात् ग्रन्थों को वर्गीकरण, सूचीकरण तथा प्रदर्शन के लिए भेज देना चाहिए। इन अवस्थाओं में भी दोष दृष्टिगोचर हो सकते हैं। अतः इन कार्यों की समाप्ति तक कर्त्तन, मुद्राङ्कन, परिग्रहण तथा मूल्यदान रोक रखना चाहिए। आदेश पत्रकों को अपने ही पास रख लेना चाहिए। कारण वे एक प्रकार के नियन्त्रक हैं। उन्हीं के द्वारा यह निश्चय किया जा सकता है कि सब ग्रन्थ परिग्रहण के लिए लौट आए अथवा नहीं। इस कार्य में अनेक कठिनाइयां उपस्थित हो सकती हैं। उनका परिगणन तथा उनके समाधान के उपाय हमारे 'ग्रन्थालय प्रबन्ध' (*Library administration*) के अध्याय ४ में वर्णित हैं।

४२३१ स्थायी आदेश की पूर्ति

स्थायी आदेशों की पूर्ति की प्राप्ति तथा उनकी नियमित पूर्ति का निरीक्षण करने की रीति ठीक उसी प्रकार की होगी जैसी अनुच्छेद '४३ सामयिक प्रकाशन' में वर्णित की गई है।

४२४ अनुसरण कार्य

ज्योंही कोई ग्रन्थ आदेशन भेजा जाए, त्योंही उसका ग्रन्थ-आदेश अनुसरण पत्रक बना लिया जाए। उसे ग्रन्थ-आदेश-अनुसरण मञ्जूषा में प्राप्ति की उचित तिथि के सप्ताह दर्शक के पीछे अनुयुक्त कर लेना चाहिए। किसी सप्ताह दर्शक के पीछे पत्रकों को निम्नलिखित क्रमागत विशेषताओं के अनुसार व्यवस्थित कर लेना चाहिए : (१) विक्रेता; आदेश संख्या; तथा (३) आदेश तिथि। द्वितीय रिक्त रेखा उस समय भरनी चाहिए जब पत्रक बनाया जाए। प्राप्ति की उचित तिथि भी उसी समय भर देनी चाहिए। अन्य सब शीर्षक उस समय भरे जाने चाहिएं जब कभी पूर्ति की प्राप्ति हो अथवा उसके विषय में कोई सूचना आए। संभव है कि पूरी पूर्ति एक साथ न प्राप्त हो।

प्रत्येक सप्ताह में, जब कभी ऐसा हो कि पूरित ग्रन्थों की संपूर्ण संख्या का समूहित संकलन आदिष्ट ग्रन्थों की संख्या से कम हो जाए तब ग्रन्थ-आदेश-अनुसरण पत्रक को अनन्तर सप्ताह-दर्शक के पीछे उचित स्थान पर लगा दिया जाए। पूर्ति के समाप्त हो जाने पर उस पत्रक को नष्ट किया जा सकता है। यदि पूर्ति के आने में विलम्ब हो और स्मरण पत्रक भेजने पड़ें तो उनके लिए स१. स२ तथा स३ स्तम्भ उपयोग में लिए जाएं।

४२७ पत्रक तथा पञ्जिकाएं

प७३ ग्रन्थ-आदेश-अनुसरण-पत्रक, मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत.

द्वितीय रेखा में दिये हुए प्रत्येक शीर्षक की संवादी तिथियों को प्रथम रेखा में लिखा जाएगा। अर्थात् उनके लिए प्रथम रेखा रिक्त छोड़ दी जाए।

द्वितीय रेखा में निम्नलिखित शीर्षक होने चाहिएं :—युक्त तिथि (१ इंच); प्रथम पूर्ति (१ इंच); अन्तिम पूर्ति (१ इंच); स१ (½ इंच); स२ (½ इंच); स३ (½ इंच);

तृतीय रेखा में निम्नलिखित शीर्षक होने चाहिएं :—अर्थन संख्या (½ इंच); तिथि (१ इंच); आदेश संख्या (½ इंच); तिथि (१ इंच); विक्रेता (१½ इंच); आदिष्ट ग्रन्थों की संख्या (½ इंच).

तृतीय रेखा में दिये हुए प्रत्येक शीर्षक के संवादी सूचन को चतुर्थ रेखा में लिखा जाएगा। अतः उसे रिक्त छोड़ देना चाहिए।

पञ्चम रेखा में निम्नलिखित स्तम्भ शीर्षक होने चाहिएं :— पूर्ति संख्या (½ इंच); तिथि (½ इंच); प्राप्त संख्या (½ इंच); अ मु.; अ. सं. (½ इंच); अन्यत्र उपलभ्य (½ इंच); संकलन (½ इंच); समूहात्मक संकलन (½ इंच); विशेष। इसके बाद की प्रत्येक रेखा को विभिन्न पूर्तियों के लिए छोड़ देना चाहिए। इन रेखाओं को आवश्यकतानुसार पत्रक के दूसरी ओर भी जारी रखा जा सकता है।

शैली

युक्त तिथि	प्रथम पूर्ति	अन्तिम पूर्ति	स१	स२	स३
अर्थन सं.	तिथि	आदेश सं.	तिथि	विक्रेता	आदिष्ट ग्रन्थों की सं.

पूर्ति सं.	तिथि	प्राप्त सं.	अ. मु. अ. स.	अन्यत्र उपलभ्य	संकलन	समूहात्मक संकलन	विशेष

प२४ स्थायी आदेश पत्रक. लिखित. ब्रिस्टल बोर्ड; श्वेत. पात्रक. अग्रभाग ७ रेखाएं., पृष्ठभाग १८ रेखाएं.

अग्र भाग के सिरे पर पङ्क्ति शीर्षक :—

प्रथम रेखा माला/शीर्षक

द्वितीय रेखा स्था. आ. सं.·········तिथि·········काल

तृतीय रेखा विक्रेता टिप्पण

अग्र भाग के अवशिष्ट अंश के लिए तथा पृष्ठभाग के लिए स्तम्भ शीर्षक :—

क्रमिका/संपुट सं. (½ इंच); परिग्रहण सं. (¾ इंच); प्रमाणक सं. तथा तिथि (१ इंच); क्रामक संख्या (१¾ इंच); शीर्षक (१½ इंच); मूल्य (½ इंच).

क२३१ स्थायी विक्रेता के लिए आदेश प्रपत्र: स्टेन्सिल. २१ पाउण्ड छपाई कागज. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय यह है :—

विषय : ग्रन्थ आदेश

कृपया .... ग्रन्थालय को, सामान्य अभिसन्धियों के अनुसार, साथ भेजी हुई तालिका के ग्रन्थ भेजें; अर्थात्

आदेश सं.	तिथि	विशेष

स२५ साप्ताहिक दैनन्दिनी (परिपाटी). इसके शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

११ प्राप्त पत्र
१२१ उत्तरित पत्र
१२२ अनुयुक्त पत्र
१४१ लिखित पत्र
१४२ प्रेषित परिपाटी पत्र
१५ प्रेषित स्मरण पत्र
२१ प्राप्त अर्थन
२२ परावर्तित अर्थन
३२३ अप्राप्त आदेश पात्रक से मेलित ग्रन्थ आदेश पत्रक
३२७ स्थायी आदेश पत्रकों से मेलित ग्रन्थ आदेश पत्रक
३४ विचाराधीन देयपत्रों से मेलित ग्रन्थ आदेश पत्रक
३४६५ विनिमय सूची से मेलित ग्रन्थ आदेश पत्रक
३५ सूची से मेलित ग्रन्थ आदेश पत्रक
३८ फलक से मेलित ग्रन्थ आदेश पत्रक
४१ माला ग्रन्थों के लिए प्रेषित स्थायी आदेश
४३ अवदान ग्रन्थों के लिए प्रेषित स्थायी आदेश
४४ प्रशुल्क ग्रन्थों के लिए प्रेषित स्थायी आदेश
५ अनुयुक्त आदेश पत्रकों की संख्या
७ विक्रेता से प्राप्त सामान्य ग्रन्थों की संख्या

७१ विक्रेता से प्राप्त माला ग्रन्थों की संख्या
७२ विक्रेता से प्राप्त नैकसंपुटक ग्रन्थों की संख्या
७३ विक्रेता से प्राप्त अवदान ग्रन्थों के अवदानों की संख्या
७४ विक्रेता से प्राप्त अशुल्क ग्रन्थों की संख्या
७५४ परिग्रहण विभाग में प्रेषित संपुटों की एवं पत्रकों की संख्या

स२६ साप्ताहिक दैनन्दिनी (विषय).

इसके शीर्षक प्रचलित ग्रन्थ वर्गीकरण के मुख्य वर्गों के द्योतक चिह्न होंगे। अथवा उसका कुछ परिवर्तित रूप भी काम में लाया जा सकता है।

४२८ अनुयोग

नाम	वर्गसंख्या			अनुयोग भेदक
स्थायी विक्रेता	२१	(विषय युक्ति)		विक्रेता
स्थायी विक्रेता (कृतोपयोग ग्रन्थ)	२१८	,,	,,	,,
पूछताछ और मूल्योक्ति	२२	,,	,,	शीर्षक
साधारण ग्रन्थ आदेशन	२३	,,	,,	विक्रेता और आदेश तिथि
साधारण ग्रन्थ आदेश सन्देह निवारण	२३४	,,	,,	शीर्षक
माला आदेशन	२४१	,,	,,	माला शीर्षक
नक सम्पुटक ग्रन्थ आदेशन	२४२	,,	,,	शीर्षक
अवदान ग्रन्थ आदेशन	२४३	,,	,,	,,
प्रकाशन पूर्व आदेशन	२४४	,,	,,	,,
दान ग्रन्थ	२८	,,	,,	दाता
बहिर्मुख पृच्छा	२९१	,,	,,	पत्रव्यवहर्ता
अन्तर्मुख पृच्छा	२९२	,,	,,	,,

इन सब अनुयोगों को इनके पूर्ण हो जाने के एक वर्ष पश्चात्

लेख संग्रह में भेज देना चाहिए। तीन या पांच वर्ष के पश्चात सुविधा-नुसार उनका नाश किया जा सकता है।

४३ सामयिक प्रकाशन

सामयिकों में स्वभावतः अनेक प्रकार की अव्यवस्थाओं तथा असामंजस्यों को उपस्थित करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। उनका (सामयिक प्रकाशनों का) नियमित समय में प्रकाशन तथा पूर्ति का अभाव एक ऐसी अव्यवस्था है जो प्रबन्ध परिपाटी में सर्वाधिक प्रभाव डालती है। यदि किसी विशिष्ट अवदान का प्राप्ति का अभाव प्रकाशक को तत्परता के साथ तत्क्षण न सूचित किया गया तो यह बहुत संभव है कि ग्रन्थालय उस अवदान को कदापि पाए ही नहीं। अतः सामयिक प्रकाशनों से सम्बद्ध कार्य में महत्तम देखभाल तथा तत्परता की नितान्त आवश्यकता है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि स्मृति पर अनुचित एवं आवश्यक दबाव डाले बिना इस उद्देश्य की सिद्धि की जाए। अति सरल पत्रक प्रणाली के द्वारा इसे सर्वोत्तम रीति से सिद्ध किया जाता है। एक विशिष्ट पत्रक-प्रणाली के अनुसार दोनो पार्श्वों में रेखाङ्कित ५" × ३" आकार का एक पत्रक साप्ताहिकों के लिए ६ वर्ष तक तथा मासिकों के लिए २५ वर्षों तक काम दे सकता है। सभी प्राप्त सामयिकों का बन्धन तथा सुरक्षण युक्तियुक्त एवं लाभदायक न प्रतीत हो यह संभव है। किनका सुरक्षण करना अभीष्ट है यह अधिकारियों के निर्णय का विषय है।

४३१ नवीकरण आदेश

प्रचलित सामयिकों की सूची को वर्ष प्रति वर्ष बिना विचारे बदला न जाए यह वाञ्छनीय है। जिस सामयिक को सम्पुटन करने का और सुरक्षित रखने का निर्णय हो चुका हो उसे बिना किसी विचार के एक वर्ष बन्द कर देना और फिर दूसरे वर्ष नवीकृत कर देना उचित नहीं है। इसका अर्थ यह होता है कि अधिकतर सामयिकों के लिए स्थायी आदेश दे दिया जाए। प्रतिवर्ष निश्चित दिन नवीकरण आदेश भेजा जाए और शुल्क के लिए देय पत्रों को मंगाया जाए तो व्यापार कार्य में अधिक सुविधा होगी। कारण, अधिकतर सामयिकों के शुल्क

अग्रिम रूप में भेजने पड़ते हैं। प्रकाशक की ओर से ही इसका आग्रह होता है। कारण इसके बिना वे निर्णय नहीं कर सकते कि कितनी प्रतियाँ छपाई जाएं। अतः विदेशी सामयिकों को अक्टूबर में ही नवीकृत करना पड़ता है, जिससे कि दूसरे पक्ष को रकम वर्ष के आरम्भ होने के पूर्व ही मिल जाए। परिपाटी की सुविधा के लिए यह अधिक वाञ्छनीय होगा कि भारतीय सामयिकों को भी अक्टूबर में ही नवीकृत किया जाए।

४३२ देख भाल

यदि गृहीत सामयिकों की संख्या कम हो तो एक-पत्रक-प्रणाली से देखभाल का काम किया जा सकता है। प्रति सप्ताह अथवा प्रति मास इनका सरलता से परीक्षण किया जा सकता है। यदि दृश्य निर्देशी पत्रक का उपयोग किया जाए तो यह कार्य और भी अधिक सरल होगा; इस पत्रक का विवरण किसी भी स्टेशनरी बेचने वाले से पाया जा सकता है। रेमिंग्टन कम्पनी तथा इस प्रकार की और कम्पनियां ऐसे पत्रकों को बेचने के लिए रखती हैं। यदि सामयिकों की संख्या पचास से अधिक हो तो द्वि-पत्रक प्रणाली से देखभाल का नियंत्रण करना अधिक वाञ्छनीय है। उस अवस्था में एक-पत्रक-प्रणाली में उपयुक्त पत्रक पञ्जिका पत्रक बन जाएगा। उसका उपयोग अनुच्छेद ४२२ में वर्णित है। यह तो स्पष्ट ही है कि उसे अनुवर्ण क्रम में व्यवस्थित रखा जाएगा। दूसरा पत्रक अवधान पत्रक कहा जाएगा। अनुच्छेद ४३४ में उसके उपयोग का वर्णन है।

४३३ पंजीयन

प्रतिदिन ज्योंही डाक आए, यह जांच करनी चाहिए कि प्रत्येक पैकेट आदि ग्रन्थालय के लिए उद्दिष्ट है या नहीं। यदि हो तो आवरण को खोल देना चाहिए और उसे सामयिक के अन्दर लगा देना चाहिए। सामयिकों को आख्या के अनुवर्ण क्रम में व्यवस्थित कर लेना चाहिए। अवशिष्ट कार्य प्रत्येक सामयिक के लिए क्रमशः किया जाएगा। सामयिक का संपरीक्षण करना चाहिए और यह देखना चाहिए कि इसमें कोई गड़बड़ी तो नहीं है जिसका दूर किया जाना आवश्यक हो। इस प्रकार के सभी विषयों को विलम्बित पात्रक में अलग रख देना चाहिए।

यदि वह सामयिक साहजिक हो तो उसका पञ्जिका पत्रक निकाल लेना चाहिए। यदि वह प्रतिमूर्ति न हो तो पञ्जिका पत्रक में आवश्यक संलेख कर लेना चाहिए। पञ्जिका पत्रक पर वर्ग संख्या लिखी ही रहेगी। उसे सामयिक के अग्र आवरण के दक्षिण सिरे के कोने पर लिख देना चाहिए। यदि आया हुआ अवदान पिछली बार आए हुए अवदान से ठीक बाद का न हो अर्थात उन दोनों के बीच में कोई अन्तर हो तो संलेख को अनन्तर रिक्त समलम्ब रेखा में नहीं करना चाहिए, अपितु उस रेखा में करना चाहिए जो उसके लिए उचित हो। अर्थात् उतनी रेखाएं रिक्त छोड़ देनी चाहिएं। अप्राप्त अवदान के लिए एक स्मरण पत्र लिखना चाहिए और उसे भेजने के लिए सप्ताह की प्रचलित मंजूषा में रख देना चाहिए। यदि आख्या पत्र प्रतिपाद्य और निर्देशी अपेक्षित हैं, किन्तु आए नहीं हैं तो उनके लिए भी स्मरण पत्र लिखना चाहिए। उसे भी सप्ताह की प्रचलित मंजूषा में रख देना चाहिए। पंजीकृत सामयिक के आवरण सभी चित्र तथा प्रथम और अन्तिम पृष्ठों पर ग्रन्थालय की मुद्रा लगानी चाहिए। आवरण पर प्राप्ति की तिथि भी लगा देनी चाहिए।

४३४ अवधान

ज्योंही किसी सामयिक का पञ्जीकरण हो जाए, उसके अवधान पत्रक को उठा लेना चाहिए। वह प्रचलित सप्ताह दर्शक के पीछे रखे हुए पत्रकों के बीच मिलना चाहिए। अब उसे उस सप्ताह के दर्शक के पीछे लगा देना चाहिए जिसमें उस सामयिक के अनन्तर अवदान के आने की संभावना हो। उदाहरणार्थ यदि आजकल मार्च का प्रथम सप्ताह है, तो प्रचलित सप्ताह का दर्शक ३.१ होगा। यदि सामयिक साप्ताहिक हो तो अवधान-पत्रक को दर्शक पत्रक ३.२ के पीछे लगा देना चाहिए। यदि सामयिक मासिक हो तो अवधान पत्रक को दर्शक पत्रक ४.१ के पीछे लगा देना चाहिए। यदि सामयिक त्रैमासिक हो तो अवधान पत्रक को दर्शक-पत्रक ६.१ के पीछे लगा देना चाहिए। इसी प्रकार और भी समझ लेना चाहिए। यदि अवधान-पत्रक ३.१ दर्शक-पत्रक के पीछे न मिले तो पञ्जिका-पत्रक में वह तिथि देखनी चाहिए जिस दिन इसके पूर्व का अवदान पञ्जीकृत किया गया था। सामयिक की अवधि को उस सप्ताह में जोड़ देना चाहिए। इसके उत्तर द्वारा उस

दर्शक-पत्रक का ज्ञान हो जाएगा जिसके पीछे अवधान-पत्रक पाया जा सकेगा।

४३४१ सूचना-दान

सप्ताह के अन्तिम दिन, सप्ताह के दर्शक-पत्रक के पीछे तब तक पड़े हुए प्रत्येक अवधान-पत्रक के लिए एक एक स्मरण-पत्र लिखना चाहिए। प्रत्येक अवधान-पत्रक में स्मरण पत्र के विवरणों को भरना चाहिए। तब सब अवधान पत्रकों को आगामी सप्ताह के सप्ताह दर्शक-पत्रक के पीछे लगा देना चाहिए।

४३५ प्रदर्शन

यदि किसी सामयिक में कोई पत्र पृथक् हो तो उसे चिपका देना चाहिए। ग्रन्थालय शास्त्र के सूत्र यह चाहते हैं कि सभी सामयिक तत्परता के साथ पञ्जीकृत कर लिए जाएं और फिर जनता के उपयोग के लिए प्रदर्शित कर दिए जाएं। यदि प्रत्येक सामयिक को प्लास्टिक के बने आवरण में रख दिया जाए तो बड़ा ही अच्छा होगा। इससे स्वच्छता तथा स्थायिता अधिक रहेगी और विशेष शोभा भी कम न होगी। ये आवरण इंग्लैण्ड तथा अमेरिका में उपलब्ध हो सकते हैं। सामयिकों को अनुवर्ग क्रम में व्यवस्थित कर लिया जाए। उन्हें प्रदर्शन-स्थान पर ले जाना चाहिए। प्रत्येक सामयिक के लिए, पुराने अवदान को निकाल लेना चाहिए तथा उसके स्थान में नया लगा देना चाहिए। इस प्रकार संगृहीत सभी पुराने अवदानों को सामयिक अध्ययन-शाला में ही पृथक्-अवदान-फलक में विभक्त रखना चाहिए, जिससे वे सब यथावसर अवलोकन के लिए उपलब्ध हो सकें।

४३६ उपसंहार

४३६१ समूहन

ज्योंही किसी सामयिक के किसी संपुट के लिए आख्या पत्र तथा निर्देशी आ जाए, त्योंही उसका पञ्जीकरण कर लिया जाए। उस आख्या पत्र तथा निर्देशी से सम्बद्ध समस्त अवदानों को एकत्रित करना चाहिए, उनका संपरीक्षण करना चाहिए तथा उन्हें बांध लेना चाहिए। सप्ताह के अन्त में सभी समूहित संपुटों को परिग्रहण तथा सूचीकरण के लिए भेज देना चाहिए।

४३६२ सदोष विषय

अयोग्य पूर्ति, समूहन में ज्ञात दोष, प्रतिमूर्तीकरण आदि कारणों से उत्पन्न सभी दोषपूर्ण विषयों को तथा अन्य सभी विषयों को प्रति सप्ताह ठीक कर लेना चाहिए। इसके लिए योग्य कार्य करना चाहिए।

४३६३ शुल्क मूल्य-दान

सामयिकों के मूल्य चुकाने के लिए आये हुए देयपत्रों का प्रति सप्ताह एकत्रित कर लेना चाहिए। प्रत्येक देयपत्र के लिए पञ्जिका-पत्रक देखना चाहिए। यह देखना चाहिए कि कहीं शुल्क पहले ही तो नहीं चुका दिया गया है। यह भी देखना चाहिए कि उचित मूल्य ही मांगा जा रहा है। देयपत्र में यह प्रमाणित कर देना चाहिए कि रकम चुका दी जाए। यदि रकम लिखित प्रकार के अंबर मुद्रा बनवा ली जाए तो अच्छा होगा। उसमें लिखित पद हैं—(१) संपुट जिसका मूल्य पिछली बार चुकाया गया, (२) मूल्य चुकाने की तिथि, (३) पिछले मूल्य-दान की रकम; (४) संपुट जिसका मूल्य मांगा गया है, (५) मांगी गई रकम, (६) यदि कोई अव्यवस्था हो तो उसका निवारण। ज्योंही मूल्य-दान की स्वीकृति हो जाए त्योंही पञ्जिका-पत्रक में प्रमाणक संख्या तथा उसकी तिथि लिख देनी चाहिए।

४३६४ परिग्रहण

ज्योंही कोई समूहित संपुट परिगृहीत हो जाए, त्योंही उसकी परिग्रहण संख्या को पञ्जिका पत्रक में संपुट की संख्या के सामने लिख देना चाहिए।

४३६५ समूहक निर्देशी

जो सामयिक आते रहें उन्हें देखते रहना चाहिए कि किसी समूहक निर्देशी के प्रकाशन की तो सूचना नहीं है। यदि उनमें किसी निर्देशी की घोषणा हो तो उसके आदेशन के लिए योग्य कार्य करना चाहिए।

४३६६ पृथक्-अवदान उद्धरण

सामयिकों के अथवा समाचार पत्रों के पृथक् अवदानों को सर्वजन

ग्रन्थालयों में साधारणतः उद्धरण पर नहीं दिया जाता। तथापि हमने समुन्नत देशों के अनेक ग्रन्थालयों में यह प्रवृत्ति देखी है कि वर्तमान सामयिकों को ग्रन्थालय से बाहर अध्ययनार्थ ले जाने दिया जाए। किन्तु इसमें अभिसन्धि यही है कि साप्ताहिक कम से कम एक सप्ताह तक तथा मासिक और उससे दीर्घकालीन सामयिक कम से कम एक मास तक प्रदर्शन स्थान पर रखे जा चुके हों।

४३७ प्रपत्र तथा पञ्जिकाएं

५३७ नवीकरण आदेश पत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत. प्रपत्र के मुद्रणीय विषय निम्नलिखित हैं —

अनुसन्धान : इस कार्यालय का सं० ...... तिथि का स्थायी आदेश

[illegible] ग्रन्था[illegible] के लिए [illegible] के [illegible] पु. [illegible] के [illegible] को [illegible] में

[illegible] ब्रिस्टल बोर्ड. [illegible] तथा पृष्ठ की ओर [illegible] हों। [illegible] के लिए [illegible] हों [illegible] निम्नलिखित [illegible] पृष्ठभाग में केवल [illegible]

आख्या			मूल्य दान	
विक्रेता			संपुट या वर्ष	क्रमांक सं. तथा तिथि
वर्ग सं.	काल	आदेश सं. तथा तिथि		

वार्षिक शुल्क

संपु. तथा अव.	प्रकाशन तिथि	प्राप्ति तिथि	संपु. तथा अव.	प्रकाशन तिथि	प्राप्ति तिथि

प३३२ अवधान पत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत. प्रत्येक पार्श्व में १४ रेखाएं. दान विषयों के लिए किनारा काला हो। स्तम्भ शीर्षक निम्नलिखित हों :—

संपु. तथा क्रम.	स्मारण तिथि	प्र. का हस्ताक्षर	संपु. तथा क्रम.	स्मारण तिथि	प्र. का हस्ताक्षर	संपु. तथा क्रम.	स्मारण तिथि	प्र. का हस्ताक्षर	संपु. तथा क्रम.	स्मारण तिथि	प्र. का हस्ताक्षर

प३४ संपुटन विशेषता पत्र. लिखित. लेजर कागज. श्वेत. प्रपत्र के पङ्क्ति शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

१. आख्या
२. संपुट संख्या
३. वर्ष
४. वर्ग संख्या
५. आवरण वस्तु
६. संयोग तथा वियोग की विशेषता, यदि कोई हो
७. समाहरण की विशेषता, यदि कोई हो।

प३६१ आ. प्र. नि. स्मारण पत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

सेवा में यह सूचना है कि······ के······ संपुट के आख्या पत्र प्रतिपाद्य तथा निर्देशी अब तक यहां प्राप्त नहीं हुए हैं। कृपया उन्हें शीघ्र भेजें।

प३६२ पूर्त्ति-अभाव-पत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

सेवा में यह सूचना है कि······के······संपुट का······अवदान पिछली बार मिला था। उसके पश्चात कुछ नहीं प्राप्त हुआ। कृपया अब तक के सभी अवदान भेजें। भविष्य में भी यथासमय भेजते रहें।

प३६३ पूर्ति-विच्छेद-पत्रक. मुद्रित. ८ पॉइन्ट टाइप. ब्रिस्टल बोर्ड. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

सेवा में यह सूचना है कि······के······संपुट का······ अवदान अब तक यहां प्राप्त नहीं हुआ है, यद्यपि उसके आगे का अवदान आ चुका है। कृपया पूर्ति के विच्छेद को शीघ्र पूर्ण करें।

क३२ स्थायी आदेश पत्रक. स्टेन्सिल. २१ पाउण्ड. मुद्रण कागज. श्वेत. प्रपत्र का मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

विषय : सामयिक प्रकाशन-आदेश

कृपया निम्नलिखित सामयिक ग्रन्थालय के लिए भेजें। पूर्ति ······वर्ष के······संपुट के प्रथम अवदान से आरम्भ की जाए। प्रत्येक अवदान छपते ही तत्परता के साथ भेजा जाए। प्रत्येक पूर्ण संपुट के लिए आख्या पत्र, प्रतिपाद्य तथा निर्देशी छपते ही भेजे जाएं।

यदि कोई अवदान यथासमय न मिला तो उसकी सूचना या तो उसके अनन्तर प्रकाशित अवदान की प्राप्ति पर दी जाएगी, अथवा उसकी प्राप्य तिथि के तीन मास के बीच, जब कभी उसका ज्ञान हो तब, दी जाएगी।

प्रत्येक संपुट का मूल्य अग्रिम, संपुट के पूर्ण होने तथा आख्या पत्र, प्रतिपाद्य और निर्देशी की पूर्ति के पश्चात्, प्रतिलिपि सहित देय पत्र को भेजकर चुकवा लेना चाहिए।

इस आदेश को, जब तक कोई विरुद्ध आदेश न हो तब तक, स्थायी माना जाए।

स३२ साप्ताहिक दैनन्दिनी. इसमें निम्नलिखित शीर्षक होने चाहिएं :—

११ से २२ तक ग्रन्थ आदेश विभाग के स२५ से अभिन्न

३१ मेलित आदेश पत्रक

३२ प्रेषित आदेश

४ प्रस्तुत संपुट

४५ लिखित संपुटन पत्र

४६ लिखित परिग्रहण पत्रक
४७ प्रेषित प्रस्तुत संपुट
४८ अङ्कित परिग्रहण संख्याएं
५२ आदिष्ट समूहक निर्देशी
५३ प्राप्त समूहक निर्देशी
७ अनुमत देय-पत्र

म३३ दैनिक प्राप्ति दैनन्दिनी. इसमें प्रतिदिन प्राप्त सामयिकों की संख्या दिखलाई जाए। इसके शीर्षक प्रचलित वर्गीकरण के मुख्य भेदों के द्योतक चिह्न होंगे। अथवा उसका योग्य रूपान्तर भी काम में लाया जा सकता है।

४३८ अनुयोग

नाम	वर्ग संख्या		अनुयोग भेदक
स्थायी विक्रेता	३१	(विपत्र युक्ति)	विक्रेता
स्रोत पृच्छा			
औ[illegible]			
मूल्य उक्त	३२	..	अध्यक्ष
अर्थन	३३	.	,
वर्तमान सामयिक	३४	.	
अर्थ	३६	.	पत्रव्यवहर्ता
प्राचीन संपुट	३७	..	अध्यक्ष
बहिर्मुख पृच्छा	३९१	,	पत्रव्यवहर्ता
अन्तर्मुख पृच्छा	३९२	.	..

इन अनुयोगों को इनके पूर्ण हो जाने के एक वर्ष पश्चात लेख संग्रह में भेज देना चाहिए। ये लेख पांच वर्ष के पश्चात नष्ट किए जा सकते हैं।

४४ परिग्रहण

ग्रन्थालय के संग्रह में समाविश्य प्रत्येक संपुट पर परिग्रहण संख्या नामक एक क्रमिक संख्या अनिवार्य रूप से लगाई जाती है।

दान-प्राप्त ग्रन्थों पर परिग्रहण संख्या के साथ साथ एक दान संख्या भी लगाई जाती है। सामयिकों के समूहित संपुटों पर भी परिग्रहण संख्या लगाई जाती है। यदि कोई सामयिक दान प्राप्त हो और उसे ग्रन्थालय में संपुटित कर स्थायी रूप से रखना हो तो उस पर दान संख्या भी लगानी चाहिए।

४४१ परिग्रहण संख्या

ग्रन्थ तथा संरक्षण के योग्य सामयिकों का वर्गीकरण और सूचीकरण ज्योंही समाप्त हो जाए त्योंही क्रीत ग्रन्थों को उसी क्रम में व्यवस्थापित कर लेना चाहिए जिस क्रम में वे सम्बद्ध देय पत्रों में संलिखित हों। सामयिकों को तथा दान प्राप्त ग्रन्थों को उनकी वर्ग संख्याओं के अनुसार व्यवस्थापित कर लेना चाहिए। क्रीत ग्रन्थों के आदेशपत्रकों का उनके परिग्रहण पत्रकों के रूप में उपयोग करना चाहिए। दान प्राप्त ग्रन्थों के लिए हरित तथा सामयिक प्रकाशनों के लिए रक्त परिग्रहण पत्रक लिखने चाहिएं। सम्बद्ध फलक पंजिका पत्रकों को, परिग्रहण पत्रकों को तथा सूचीपत्रकों को भी ठीक उसी समरूप क्रम में व्यवस्थापित कर लेने चाहिए। परिग्रहण मंजूषा देख कर यह जानना चाहिए कि सर्वान्तिम प्रदत्त परिग्रहण संख्या तथा दान संख्या कौन सी है। अनन्तर संख्या से आरम्भ करते हुए, यथार्थ संख्या क्रम के अनुसार, फलक पंजिका पत्रक, परिग्रहण पत्रक तथा मुख्य सूची पत्रक इन सब पर परिग्रहण संख्या लिखनी चाहिए। यदि आवश्यक हो तो दान संख्या भी लिखनी चाहिए।

४४२ ग्रन्थों का संख्याङ्कन

इसके पश्चात प्रत्येक ग्रन्थ के आख्या पत्र पृष्ठ पर वर्ग संख्या, पुस्तक संख्या तथा परिग्रहण संख्या एक के नीचे एक कर लिखनी चाहिए। दान प्राप्त ग्रन्थों पर दान संख्या भी लिखनी चाहिए। कक्षाचिह्न भी लिखना चाहिए। आख्या पत्र पृष्ठ के मध्य की रेखा के ठीक एक इंच नीचे से वर्ग संख्या आरम्भ होनी चाहिए। यदि वह स्थान मुद्रित होने के कारण रिक्त न हो तो उसी के यथासंभव निकट से आरम्भ करना चाहिए। यदि ग्रन्थ में आख्या पत्र ही न हो तो इन संख्याओं को प्रथम पृष्ठ के सिर पर लिखना चाहिए। किन्तु ग्रन्थ के सिर के किनारे

और क्रामक संख्या के बीच कम से कम दो रेखाओं का स्थान छोड़ देना चाहिए। इन संख्याओं को ग्रन्थ में और भी किसी रूढ़ स्थान पर लिखना चाहिए। जैसे पृष्ठ ५० का तल भाग। इसके लिए कोई भी स्थान निश्चित किया जा सकता है।

४४३ देय पत्रों की स्वीकृति

क्रीत ग्रन्थों का संख्याङ्कन ज्योंही समाप्त हो जाए, त्योंही उन क्रीत ग्रन्थों के देय पत्रों में उन उन वस्तुओं के आगे परिग्रहण संख्या लिखनी चाहिए। अपूरित अथवा अस्वीकृत वस्तुओं को काटने जाना चाहिए। परिणाम स्वरूप देय पत्र के संकलित मूल्य में जो अन्तर पड़े उसे लिख देना चाहिए। तब देय पत्र को मूल्यदान के लिए अनुमति दे दी जाए और उस पर यह लिख दिया जाए कि "संग्रह पञ्जिका में समाविष्ट। देय पत्र के लिए मूल्य चुकाया जाए"।

४४४ परिग्रहण पञ्जिका

परिग्रहण संख्या प्राप्त कर लेने पर आदेश पत्रक परिग्रहण पत्रक का पद प्राप्त कर लेते हैं। सब परिग्रहण पत्रकों को परिग्रहण मंजूषा में उनकी परिग्रहण संख्या के क्रमानुसार अनुयुक्त कर लेना चाहिए। इस मञ्जूषा को सावधानी के साथ ताला कुञ्जी में रखना चाहिए। कारण इन पत्रकों को ग्रन्थालय में विद्यमान समस्त ग्रन्थों का आधारभूत लेखा माना जाता है। इनके ही द्वारा प्रत्येक ग्रन्थ का आदि से लेकर अन्त तक का इतिहास जाना जा सकता है।

इस परिपाटी का विस्तृत वर्णन तथा इसमें उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों की चर्चा हमारे 'ग्रन्थालय प्रबन्ध' (*Library administration*) के अध्याय ४ में है।

४४७ दैनन्दिनी

स८१ परिग्रहण दैनन्दिनी (साप्ताहिक). इसमें परिगृहीत संपुटों की संख्या दिखलाई जाए। निम्नलिखित स्तम्भ शीर्षक होंगे :—
परिगृहीत. दानप्राप्त. क्रीत. सामयिक. ग्रन्थ.

४५ ग्रन्थों का सज्जीकरण

परिग्रहण हो जाने के बाद, ग्रन्थों को उपयोग के लिए मुक्त करने के पूर्व ही कुछ और विशेष परिपाटी का निर्वाह करना पड़ता है।

४५१ सरलीकरण

स्वयं ग्रन्थों का भी सरलीकरण अपेक्षित है। ग्रन्थों के सरलीकरण की प्रणाली निम्नलिखित है। ग्रन्थ को प्रायः बीच से खोलकर सीधे मेज पर रख देना चाहिए। अन्दर के प्रान्त में सिर से लेकर तल तक कोमलता के साथ अंगूठा चलाना चाहिए। ग्रन्थ के मध्य भाग की ओर से दोनों आवरणों तक मार्ग बना लेना चाहिए। कुछ पृष्ठों को एक ही साथ उलटना चाहिए तथा दबाते जाना चाहिए। यह संभव है कि ग्रन्थ के पृष्ठ भाग में लगा हुआ गोंद सूख गया हो। अतः इस सरलीकरण को बड़ी सावधानी और कोमलता के साथ करना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि ग्रन्थ का पृष्ठ भाग टूट जाए।

४५११ कर्तन और उद्घाटन

ग्रन्थ के पत्रों को छुरी से काटना चाहिए। इसमें उंगली अथवा पेन्सिल का उपयोग न करना चाहिए। कारण इसमें यह भय है कि किनारे के भाग बुरी तरह कट जाएं। कम प्रान्त वाले ग्रन्थों में तो पाठ्यांश भी नष्ट हो सकता है।

४५२ मुद्रा अङ्कन

इसके पश्चात् ग्रन्थ पर ग्रन्थालय की मुद्रा लगानी चाहिए। ध्यान रहे कि इसमें मुद्रित विषय विरूप न होने पाए। मुद्रा लगाने के स्थान रूढ़ि से निर्धारित कुछ निश्चित होने चाहिएं। जैसे उपाख्या पत्र पृष्ठ का निचला आधा भाग, आख्या पत्र पृष्ठ का निचला आधा भाग, प्रथम अध्याय का सिरा, पञ्चाशत्तम पृष्ठ के अनन्तर समाप्त होने वाले अध्याय का तल भाग, अन्तिम पृष्ठ का तल भाग, प्रत्येक मानचित्र तथा अन्य चित्र, इत्यादि। इसी प्रकार के और स्थान आरम्भ से ही निर्धारित किए जा सकते हैं।

४५३ ग्रन्थ दर्शक योजन

मुद्रा अङ्कन हो जाने के बाद संपुट के पृष्ठ भाग पर एक ग्रन्थ दर्शक चिपकाना चाहिए। यदि ग्रन्थ पर पुलिन्दारक लगा हो तो उसे थोड़े समय के लिए हटा लेना चाहिए। ग्रन्थ दर्शक चिपका लेने के बाद उसे पुनः लगा देना चाहिए। ग्रन्थ दर्शक को ग्रन्थ के तल भाग के ठीक

एक इंच ऊपर लगाना चाहिए। इसके लिए सुविधाजनक रीति तो यह है कि धातु का एक टुकड़ा बना लिया जाए। वह आध इंच चौड़ा हो तथा समकोणों पर मुड़ा हुआ हो। उसकी दोनों भुजाएं ठीक एक इंच लम्बी हों। उसी धातु खण्ड द्वारा ग्रन्थ दर्शक के लिए उचित स्थान का सूचन किया जा सकता है।

यदि संपुट इतना पतला हो कि उसके पृष्ठ भाग पर ग्रन्थदर्शक न लगाया जा सके तो उसे पृष्ठ भाग के निकट मुखावरण पर लगाना चाहिए। वह उसी स्थान पर लगाया जाए जो पृष्ठ भाग के उचित स्थान के सर्वथा निकट हो।

४५४ तिथि पत्र योजन

इसके पश्चात् संपुट में तिथि पत्र लगाना चाहिए। तिथि पत्र में केवल वामपार्श्व के शिर एवं तल कोण में ही गोंद लगाना चाहिए। उसे आवरण के अव्यवहित उत्तर पृष्ठ पर लगाना चाहिए। चाहे वह पृष्ठ अन्त पत्र हो, उपाख्या पत्र हो, अथवा पाठ्य का ही प्रथम पृष्ठ हो। तिथि पत्र पर क्रामक संख्या, परिग्रहण संख्या तथा मुक्ति दिवस लिखने चाहिएं। अब ग्रन्थ अपने सर्वोच्च अन्तिम लक्ष्य पर पहुँचने के लिए प्रस्तुत है। वह लक्ष्य पाठक का कर कमल है। जब पाठक उसका उपयोग न करना चाहे उस समय फलक पर विश्राम करने के लिए भी वह प्रस्तुत है।

४५५ वर्गीकरण तथा सूचीकरण

वर्गीकरण तथा सूचीकरण कार्य ग्रन्थ के परिग्रहण से भी पूर्व किया जाता है। इस बात को हम अनुच्छेद ४२३ तथा ४४ में बता ही चुके हैं। अतः यह स्वाभाविक है कि उपर्युक्त सज्जीकरण कार्य, ग्रन्थ के वर्गीकरण तथा सूचीकरण के बाद ही किया जाएगा। इस कार्य को भी ग्रन्थालय के अन्य अनेक कार्यों की भांति साप्ताहिक आधार पर करना चाहिए। इस बात का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए कि सप्ताह का कार्य उसके अन्त होने के पूर्व समाप्त कर लिया जा सके। कोई भी काम पिछड़ा न रह जाए।

इस कार्य में ग्रन्थालय सूची की निरन्तर आवश्यकता पड़ती रहेगी। अतः यह सर्वथा आवश्यक है कि एक सूची तो पत्रकों में हो,

जो जनता के उपयोग के लिए रखी जाए। किन्तु दूसरी प्रति पर्चों में भी होनी चाहिए जिसे कार्यालय के काम में लिया जा सके।

४५५० सरणि पत्र खण्ड

प्रत्येक संपुट में एक सरणि पत्र खण्ड लगा देना चाहिए। पत्र खण्ड का अर्थ एक लघु पत्र है,* जिसका आकार ५"×३" हो। एक रद्दी पर्चा भी इसके लिए काम में लाया जा सकता है। उसका एक भाग ही कोरा हो तब भी काम चल सकता है। इस पत्र खण्ड पर उस संपुट से सम्बद्ध विभिन्न टिप्पण लिखे जाएं। वर्गीकरण के तथा सूचीकरण के कार्य में प्रतिदिन ऐसे अनेक प्रश्न उठ खड़े होंगे जिनके कारण उनके कल्पों में परिवर्तन अथवा संशोधन करना आवश्यक हो जाए। उन परिवर्तनों और संशोधनों का मासिक उद्देशपत्र बनाना पड़ेगा। उपर्युक्त पत्रखण्डों का इसी कार्य में अन्तिम उपयोग होगा। उसके पश्चात् उन्हें नष्ट किया जा सकता है।

पत्रखण्ड पर एक ऊर्ध्व रेखा खींचनी चाहिए और उसकी लम्बाई को दो समान भागों में विभक्त कर देना चाहिए। वाम पार्श्व को अन्तर्विषयी के लेखन के लिए रिक्त छोड़ देना चाहिए। दक्षिण पार्श्व को तीन रेखाओं द्वारा चार भागों में विभाजित कर लेना चाहिए। प्रथम गृह में वे वर्ग निर्देशी संलेख लिखे जाएं जिनका समूहन अपेक्षित न हो। द्वितीय गृह में नामान्तर निर्देशी संलेखों का सूचन हो। तृतीय में विषय निर्देशी संलेखों का सूचन हो। तथा चतुर्थ में वे माला निर्देशी संलेख, अथवा अन्य ग्रन्थ निर्देशी संलेख, अथवा मुख्य संलेख अथवा वर्ग निर्देशी संलेख सूचित हों जिनका समूहन अपेक्षित हो। वर्गीकरण तथा सूचीकरण करते हुए जो भी विशिष्ट वस्तुएं ध्यान में आएं तथा जो उल्लेखनीय प्रतीत हों उन सबका इस पत्रखण्ड पर सूचन होना चाहिए।

* और द्रष्टव्य, रंगनाथन (श्री. रा.) : अनुवर्ग सूची कल्प *Classified catalogue code.* (मद्रास लायब्रेरी असोसिएशन, पब्लिकेशन सीरीज, १६). १९५१. धारा १६ तथा उसके उपभेद.

४५५१ वर्गीकरण परिपाटी

प्रचलित सप्ताह में परिगृहीत किए जाने वाले संपुटों को उनके मुख्य वर्गों के आधार पर विभाजित कर लेना चाहिए। उसके पश्चात् एक एक करके वर्ग संख्या स्थिर करनी चाहिए। यदि कोई संपुट गूढ़ हो और विस्तृत मनन की अपेक्षा रखता हो, अथवा यदि उसके कारण नवीन वर्ग के जनन की आवश्यकता प्रतीत हो तो उसे अस्थायी रूप से विलम्बित संपुटों के समूह में रख देना चाहिए। साहजिक ग्रन्थों के लिए क्रामक संख्या स्थिर करनी चाहिए और उसे सरणि पत्रखण्ड की अग्र रेखा पर लिख देना चाहिए। जहां कहीं आवश्यक हो वहां कक्षा चिह्न भी लगा देना चाहिए। सूची की कार्यालय प्रति में मुख्य पत्रखण्डों को देखकर यह निश्चित कर लेना चाहिए कि जो वर्ग संख्या हम लगा रहे हैं वह पहले दी हुई वर्ग-संख्याओं से अभिन्न है। यदि सूची में कोई अन्य पत्रखण्ड उसी चरम वर्ग में हो और उसकी पुस्तक संख्या भी वही हो जो हाथ के संपुट की हो तो योग्य अङ्क पुस्तक-संख्या के परिग्रहण अंश के रूप में जोड़ दिया जाए। सन्देह के स्थलों में पुराने ग्रन्थों का नये ग्रन्थों से मिलान करना चाहिए। सरणि पत्रखण्ड पर सूचीकरण कार्य के लिए टिप्पण लिख देने चाहिएं। ज्योंही इस प्रकार प्रत्येक संपुट का कार्य होता जाए, त्योंही उन्हें एक एक करके पत्रखण्डों के साथ सूचीकरण के लिए देते रहना चाहिए।

४५५११ संशोधन लेखन

पूर्वोक्त रीति से जब सब साहजिक संपुटों का कार्य समाप्त हो जाए, तब जटिलतर संपुटों को लेना चाहिए। उनके विषय में जो कुछ अपेक्षित कार्य हो वह किया जाए। इस बीच पहले भेजे हुए ग्रन्थों के सूचीकरण पत्रक प्रस्तुत किए जा रहे होंगे। यदि वर्गीकरण के कल्प की धाराओं में अथवा तालिकाओं में किसी प्रकार अभिवर्धन, अथवा संशोधन किया जाए तो उन्हें वर्गीकरण कल्प की अन्तर्लिखितपत्रक प्रति में लिख देना चाहिए।

४५५१२ स्रोत पत्रखण्ड

यदि किसी संपुट की वर्गसंख्या को निश्चित करने के लिए

उस संपुट अथवा सामान्य अनुलय ग्रन्थ से अतिरिक्त अन्य किसी स्रोत का उपयोग किया गया हो तो उसे ५"×३" आकार के स्रोत पत्रखण्ड पर लिख लेना चाहिए। स्रोत पत्रखण्ड में, क्रमशः प्रत्येक खण्ड में वर्गीकृत संपुट की क्रामक संख्या, स्रोत का शीर्षक, उसकी लघु आख्या तथा यथार्थ पृष्ठ अनुसन्धान होने चाहिएं। इन सब स्रोत पत्रखण्डों को स्रोत पत्रखण्ड पात्रक में अनुवर्ग क्रमानुसार व्यवस्थित कर लेना चाहिए।

४५५२ सूचीकरण परिपाटी

वर्गीकृत संपुटों का उनकी सूचीकरण जटिलताओं के आधार पर विभाजित कर लेना चाहिए, निम्नलिखित समूह प्रकट हो सकते हैं :—

१. नवीन पत्रक समूह में वे संपुट होंगे जो परिचित भाषाओं में हों तथा जिनके सरणि पत्रखण्डों में पत्रकों के समूहन का कोई सूचन न हो.

२. समूहन समूह में वे संपुट होंगे जो परिचित भाषाओं में होंगे तथा जिनके सरणि पत्रखण्डों में पत्रकों का समूहन अथवा सामयिक प्रकाशन का सूचन हो.

३. भाषिक नवीन पत्रक समूह में वे संपुट होंगे जो अपरिचित भाषाओं में हों तथा जिनके सरणि पत्रखण्डों में पत्रकों के समूहन का कोई सूचन न हो.

४. भाषिक समूहन समूह में वे संपुट होंगे जो अपरिचित भाषाओं में हों तथा जिनके सूची पत्रकों का समूहन अपेक्षित हो तथा

५. जटिल समूह में वे संपुट होंगे जो सूचीकरण की असाधारण जटिलताओं को उपस्थित करते हों।

आरम्भ में प्रथम के चार समूहों का कार्य करना चाहिए जिससे अधिकतम संपुट बिना किसी विलम्ब के मुक्त किए जा सकें।

४५५२१ संशोधन लेखन

यदि सप्ताह में सूचीकरण के रूप में किसी प्रकार का संशोधन निश्चय किया जाए तो उसे सूचीकरण की अन्तर्निर्देश-पत्रक प्रति में लिख देना चाहिए.

४५५२२ स्रोत लेखन

यदि सूचीकरण कार्य में सूचीकृत ग्रन्थ से अतिरिक्त अन्य किसी स्रोत का आधार लिया गया हो तो एक स्रोत पत्रखण्ड बना लेना चाहिए और उसे ४५५१२ में निर्दिष्ट स्रोत पत्रखण्ड पात्रक में अनुयुक्त कर लेना चाहिए।

४५५३ मेलन कार्य

सभी वर्ग संख्याओं का तथा सूची संलेखों का अवधानपूर्वक मिलान कर लेना चाहिए। इस कार्य में अच्छा तो यह होगा कि कोई दूसरा व्यक्ति मिलान करे। किन्तु यदि वह सम्भव न हो तो वही व्यक्ति करे किन्तु किसी दूसरे समय।

४५५४ मुद्रलेखन

यदि सूचीपत्रक लिखित हो तो कार्यालय के उपयोग वाली सूची के लिए पत्रखण्डों की प्रतिलिपि उन पत्रकों से ही करवा लेनी चाहिए। यदि सूचीपत्रक ही स्वयं मुद्रलिखित हो तो कार्यालय के लिए उपयोग्य प्रतियां कार्बन द्वारा उतारी जा सकती है।

४५५५ अन्तर्निवेश कार्य

जब सब सपुटों का कार्य समाप्त हो जाए तथा मुख्य पत्रकों पर और फलक पत्रकों पर परिग्रहण संख्या भी लिख दी जाए तब समस्त सूची पत्रकों को उनके संलेख सज्ञानुसार विभाजित कर व्यवस्थित कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् उन्हें सर्वजन सूची के पात्रक मण्डल में अन्तर्निविष्ट कर देना चाहिए। कार्यालय की उपयोग्य सूची के पत्रखण्डों की भी इसी प्रकार व्यवस्था करनी चाहिए। फलक पत्रकों का अनुयोग अनुच्छेद ४६ में वर्णित है।

४५५५१ दर्शक पत्रक

सर्वजन सूची के पात्रक मण्डल में लगे हुए दर्शक पत्रकों को यदि वर्ष में एक बार पर्यालोचित किया जाए तो वह अच्छा अभ्यास रहेगा। संभव है कि नये दर्शक पत्रकों की आवश्यकता प्रतीत हो। अनुभव के आधार पर प्राचीन दर्शक पत्रकों में कुछ संशोधन आदि भी आवश्यक प्रतीत हो सकता है।

४५६ त्रुटिनिवारण कार्य

वर्ग संख्याओं में अथवा सूची संलेखों में त्रुटिनिवारण के लिए जो संपुट पृथक् रख दिए हों उनके साथ भी उसी प्रकार का व्यवहार किया जाना चाहिए।

४५७ प्रपत्र तथा पञ्जिका

सूचीकरण के ग्रन्थों में सूचीपत्रकों का वर्णन बहुधा दिया रहता है। यहां हम विभिन्न प्रकार के पत्रकों के लिए सङ्केत संख्या देते हैं। उन सबका परिमाण ५″ × ३″ है।

प५१ श्वेत पत्रक. मुख्य संलेख तथा ग्रन्थ निर्देशी संलेख के लिए।

प५२ पाटल (हल्का गुलाबी) पत्रक. अन्तर्विषयी संलेख तथा नामान्तर निर्देशी संलेख के लिए।

प५३ दर्शक पत्रक।

प५४ कृष्णप्रान्त श्वेत पत्रक. वर्ग निर्देशी संलेख के लिए।

प५५ सूची पत्र खण्ड।

स५२ संपुट दैनन्दिनी (साप्ताहिक). इसके स्तम्भ शीर्षक प्रचलित वर्गीकरण पद्धति के मुख्य वर्गों के द्योतक चिह्न होंगे। अथवा उनका कोई संशोधित रूप भी हो सकता है। साथ ही "संपुट की संकलित संख्या" यह स्तम्भ भी होना चाहिए।

स५३ पत्रक दैनन्दिनी (साप्ताहिक). इसके शीर्षक निम्नलिखित होंगे : (१) मुख्य पत्रक; (२) अन्तर्विषयी पत्रक (३) वर्ग निर्देशी पत्रक, (४) ग्रन्थ निर्देशी पत्रक; (५) नामान्तर निर्देशी पत्रक; (६) फलक पञ्जिका पत्रक (७) पत्रकों की संकलित संख्या; (८१) समूहित सामयिक प्रकाशन पत्रकों की संख्या; (८२) समूहित अन्य पत्रकों की संख्या; (८३) समूहित पत्रकों की संकलित संख्या।

स५४ त्रुटि निवारण दैनन्दिनी (साप्ताहिक). संपुट दैनन्दिनी के समान।

४५८ पत्रक पात्रक मण्डल के लिए निर्धारण
५″ × ३″ के पत्रकों का आधार

१. पत्रक पात्रक मण्डल के दो भाग होते हैं—(१) स्वयं पत्रक पात्रक मण्डल, तथा (२) एक मेज जिस पर वह रक्खा जाए।

२. पात्रक मण्डल में २४ पात्रक होंगे—प्रति छः पात्रकों के चार स्तम्भ।

२१. पात्रक मण्डल का बाहरी प्रमाण निम्नलिखित होगा :

चौड़ाई २ फीट ४॥ इंच
ऊंचाई २ फीट ७। इंच
गहराई १ फुट ११ इंच

२२. दोनों किनारे, सिरा तथा तल के जो तख्ते हों वे ७/८ इंच मोटे हों, तथा पीठ का तख्ता ४/८ इंच मोटा हो।

२३. पात्रक मण्डल का अग्रभाग तीन ऊर्ध्वलम्ब तख्तों द्वारा विभक्त हो। उन तख्तों की मोटाई ७/८ इंच तथा चौड़ाई ४ इंच हो। इससे छिद्रों के चार स्तम्भ बन जाएंगे। उसी अग्र भाग में पांच समलम्ब तख्ते भी लगाये जाएंगे। उनकी मोटाई ७/८ इंच तथा चौड़ाई ३ इंच होगी इससे छिद्रों की ६ पंक्ति बन जाएगी। इन्हीं में पात्रक रखे जाएंगे।

२४. प्रत्येक छिद्र के अग्रभाग को दो लम्बे डण्डों द्वारा पात्रक मण्डल के पीठ वाले तख्ते से जोड़ दिया जाए। एक डण्डा बाईं ओर हो और दूसरा दाहिनी ओर। उसकी मोटाई ७/८ इंच तथा चौड़ाई १ इंच हो।

२५. लम्बे डण्डों में दो पीतल के बेलन लगाये जाएं। उनकी दूरी ६॥ इंच हो। इन्हीं बेलनों पर पात्रक खिसका करेंगे।

३. पात्रक को रखने वाले प्रत्येक छिद्र का आन्तर प्रमाण निम्नलिखित होगा :—

चौड़ाई ६ इंच
ऊंचाई ४॥ इंच
गहराई १ फुट, १०। इंच

४. प्रत्येक पात्रक का आन्तर प्रमाण निम्नलिखित होगा :—

चौड़ाई ५ इंच तथा गहराई १ फुट ८ इंच। पात्रक के दोनों किनारे तथा पीठ के लिए जो तख्ते लगाये जाएं उनकी मोटाई केवल $\frac{1}{2}$ इंच हो तथा ऊंचाई ३$\frac{1}{2}$ इंच हो। पात्रक का अगला तख्ता चौड़ाई में ६$\frac{1}{2}$ इंच हो तथा ऊंचाई में ४$\frac{1}{2}$ इंच हो। इस प्रकार वह छिद्र को पूरा तरह ठीक ठीक ढक ले। पात्रक के तले में $\frac{1}{2}$ इंच मोटी तथा १ इंच चौड़ी दो पट्टियाँ लगाई जाएं। उन्हें ठीक बीच से कर दिया जाए। १/६ इंच व्यास वाली एक पीतल की छड़ पात्रक के ठीक केन्द्र में आगे से पीछे तक व्याप्त रहेगी। पात्रक में रखे हुए पत्रकों के लिए वह बन्धन का काम करेगी। पात्रक के अग्र तख्ते से बाहर निकली हुई उस छड़ में पेंचदार गांठ लगाई जाए। पात्रक के पिछले तख्ते से बाहर निकली हुई उस छड़ में एक पेंच लगा दिया जाए। जब पात्रक बाहर खींचा जाए तो छिद्र से बाहर गिर न पड़े इसके बचाव के लिए स्वयं बन्द होने वाला एक खटका लगा दिया जाए। उसे छिद्र में दक्षिण की ओर १॥ इंच गहराई पर लगाया जाए। पात्रक के दक्षिण पार्श्व के तख्ते में आगे की ओर एक काकपद काटा जाए। वह खटका उस काकपद पर गिरेगा और उस पात्रक को स्वतः रोक लेगा। पात्रक के अगले तख्ते पर, केन्द्र से ठीक ऊपर एक पीतल का दर्शक आधार (लेबल होल्डर) लगाया जाए। उसका प्रमाण १$\frac{3}{4}$" × १$\frac{1}{4}$" होगा। उस दर्शक आधार के ठीक नीचे एक पकड़ लगानी चाहिए। वह पात्रक को बाहर खींचने के लिए हस्तक का काम करेगी। प्रत्येक पात्रक में एक समायोज्य पत्रक आश्रय लगाया जाए। उसका प्रमाण ५" × ३" होगा। मोटाई तल में एक इंच होगी, किन्तु सिरे की ओर कम होती जाएगी। इसका अनुप्रस्थ छेद (क्रास सेक्शन) समकोण त्रिकोण होगा। कर्ण उसका अग्र भाग होगा और उसी पर पत्रक आश्रित रहेंगे। पत्रक आश्रय के केन्द्र में भी एक छिद्र होगा, जिसके बीच से होकर पात्रक की मध्यवर्ती छड़ गुजरेगी। पत्रक आश्रय में भी एक खटका लगा देना चाहिए, जिससे वह पात्रक के बाईं ओर के तख्ते में फंसा दिया जाए। वहां एक इंच के अन्तर पर कुछ छिद्र बना लिए जाएं।

५ पात्रक मण्डल में ताले की व्यवस्था :—पात्रकों के प्रथम तथा

द्वितीय और तृतीय तथा चतुर्थ स्तम्भों के बीच के ऊर्ध्वलम्ब तख्तों में U आकार की दो कड़ियां १ फुट ७॥ इंच की दूरी पर लगाई जाएं। २ इंच चौड़ी तथा २ फीट २॥ इंच लम्बी दो पीतल की पट्टियां लगाई जाएं। उनमें योग्य अन्तरों पर दो आयताकार छिद्र बने हुए हों। छिद्रों में U आकार की कड़ियां फंसेंगी। इसी रीति से उस पात्रक मण्डल में ताला लगाया जाएगा। प्रत्येक U आकार की कड़ी में एक—इस प्रकार से ४ ताले बन्द करने के लिए लगाये जाएंगे।

६. जिस मेज पर वह पात्रक मण्डल रहेगा उसका प्रमाण निम्नलिखित है :—

मेज की ऊंचाई (ऊपर के तख्ते को लेकर) १ फुट १०¼ इंच।

ऊपर के तख्ते का प्रमाण—चौड़ाई में २ फीट ५¼ इंच तथा गहराई में २ फीट (उसके पार्श्व पात्रक मण्डल की गहराई के अनुरूप होंगे)।

तख्ते की मोटाई ७/८ इंच।

मेज का ढांचा (तख्ते को छोड़कर) २ फीट ४½ इंच × १ फुट ११ इंच प्रमाण का होगा।

पाये, सिरे पर ३ × ३ इंच

पाये, तल में २॥ × २॥ इंच

७. पात्रक मण्डल के लिए काम में लाई जाने वाली लकड़ी सूपचारित सागवान हो।

८. यदि पूर्ति के एक वर्ष के बीच पात्रक मण्डल में किसी प्रकार की दरार पड़ जाए तो उसके लिए ठेकेदार उत्तरदायी होगा।

९. पात्रक मण्डल पर लकड़ी का तेल मला हुआ हो।

१०. पात्रक मण्डल ग्रन्थालय में ही पहुंचाना पड़ेगा। ग्रन्थालय की ओर से पहुंचाने का खर्च नहीं दिया जाएगा।

११. पात्रक मण्डल का धातु अंश श्रेष्ठ कोटि के पीतल का हो।

१२. पात्रकों का तथा छिद्रों का, साथ ही संपूर्ण पात्रक मण्डल का प्रमाण सर्वथा यथार्थ होना चाहिए जिससे कि पात्रक मण्डल के

पात्रक आपस में एक दूसरे से अदल-बदल किए जा सकें। इतना ही नहीं, ग्रन्थालय में जो पात्रक मण्डल पहले से ही हों उनसे भी बाद वाले पात्रक अदल-बदल किए जा सकें।

४६ प्रदर्शन कार्य

ग्रन्थों का फलकों में व्यवस्थापन किया जाए, तभी ग्रन्थालय शास्त्र के चतुर्थ सूत्र 'अध्येतृसमय बचे' इसका पालन किया जा सकेगा। विश्वकोश, अनुवर्ण कोश, प्रचलित वार्षिक ग्रन्थ, तथा निर्देशिका आदि अनुलय ग्रन्थों को तथा नवागत ग्रन्थों को किसी महत्त्वपूर्ण स्थान पर रखना चाहिए। वे प्रवेश स्थान के जितने निकट हों उतना अच्छा है। उससे लाभ यह होगा कि जो पाठक केवल प्रस्तुत अनुलय के उद्देश्य से ही ग्रन्थालय में आएं वे अपने उद्देश्य को शीघ्र ही पूर्ण कर सकें, तथा अधिक चिन्तनशील पाठकों का चित्तविक्षेप भी न करें। स्वयं चयन प्रकोष्ठ में भी, अन्य ग्रन्थों के व्यवस्थापन में बड़ी कुशलता अपेक्षित है। परिवर्तनशील ग्रन्थालय जगत में व्यवस्थापन कदापि स्थायी नहीं हो सकता। उसे न्यायपूर्वक बदलते रहना पड़ेगा, तथा समय समय पर पुनः समायोजित करना पड़ेगा। इस उद्देश्य के लिए समय समय पर अनेक वस्तुओं का परीक्षण करते रहना पड़ेगा। ग्रन्थों को तथा सामयिकों को ठीक उसी क्रम में लगाया जाए जिस क्रम में वे विषय वर्गीकरण की तालिका में व्यवस्थापित हों—इस बात को भला कौन नहीं चाहेगा? इसमें और नहीं तो कम से कम इतना तो सन्तोष होगा ही कि हमने उसे तालिका के ही यथार्थ क्रम में व्यवस्थित किया है। किन्तु वर्गीकरण की तालिकाओं में विद्यमान मानित सहायभूत क्रम कदाचित् ही उस क्रम के अनुरूप होगा जो क्रम जनता द्वारा वाञ्छित हो। मानित सहायभूत शास्त्रीय क्रम तथा लोकप्रिय क्रम में समानता नहीं रह सकती। साथ ही, लोकप्रिय क्रम स्थायी भी नहीं है। यह समय के अनुसार बदलता रहता है और इसे बदलते रहना भी चाहिए।

४६१ कक्षाओं का निर्माण

अतः वर्गीकरण तालिका के अनुसार स्थिर व्यवस्थापन यदि किया गया तो न केवल पाठक जनसमाज के, अपितु कर्तृगण के भी

समय तथा शक्ति का अपव्यय होगा। यदि इसी प्रकार का व्यवस्थापन किया गया तो अधिकांश पाठकों को अपने विषय पाने के लिए बड़ा लम्बा मार्ग पार करना पड़ेगा और उसमें उन्हें समय तथा शक्ति का पर्याप्त विनाश करना पड़ेगा। इसका बुरा परिणाम अनुलय कर्तृगण को भी भोगना पड़ेगा। कारण उनकी गतिविधि पाठकों की गतिविधि पर निर्भर है। जहां जहां पाठक जाएंगे वहां वहां उन्हें भी जाना पड़ेगा। अतः यह सर्वथा आवश्यक है कि तालिका के क्रम को तोड़ दिया जाए तथा फलकों पर मुख्य वर्गों की पुनः परिवृत्ति की जाए। उदाहरणार्थ साहित्य (ललित वाङ्मय) सर्वाधिक लोकप्रिय विषय होने के नाते पाठकों की अधिकतम संख्या को आकृष्ट करेगा। उसे प्रवेश द्वार के यथासंभव ...कटतम स्थान में लगाना चाहिए। इस बात की चिन्ता न करनी चाहिए कि वर्गीकरण की तालिका में उसका योग्य स्थान कौन सा है। ...र विषयों को प्रवेश द्वार से विशिष्ट-विशिष्ट दूरी पर रखा जा सकता ...र्गों के निर्धारण के लिए विषय की लोकप्रियता का विपरीत क्रम ...ना पड़ेगा। सबसे पहले सर्वाधिक लोकप्रिय और सबसे अन्त में ...से कम प्रिय यही क्रम रखना पड़ेगा। विद्यमान व्यवस्थापन में ... परिवर्तन किया गया तो अनावश्यक अत्यधिक श्रम उठाना पड़ेगा, केवल इसी बात को लेकर किसी भी एक विशिष्ट व्यवस्थापन का स्थायी न मान लेना चाहिए। प्रचलित व्यवस्थापन कहां तक उपयोगी है इसका निरन्तर परीक्षण करते रहना चाहिए। इसका निर्णायक अनुभव ही है। उसके लिए निगम की परिगणनाओं से सहायता ली जा सकती है। यदि विषयों में किसी भी प्रकार का पुनः परिवर्तन आवश्यक पाया जाए तो उसे अवश्यमेव करना चाहिए चाहे उसमें कितने ही अधिक अतिरिक्त श्रम तथा समय का व्यय हो। कारण पाठकों की सुविधा ही ग्रन्थालय की सुविधा है। पाठकों का सन्तोष ही ग्रन्थालय का अन्तिम लक्ष्य है।

४६२ कक्षाओं का गुणन

वर्तमान अभिरुचि के ग्रन्थों की कक्षा मुख्य कक्षा कही जा सकती है। सामयिकों की एवं निरवद्यानों की (मालिकों की) दूसरा कक्षा हो सकती है। उसे द्वितीय कक्षा कहा जा सकता है। तृतीय कक्षा में वे ग्रन्थ हो सकते हैं जिनमें लोगों की अभिरुचि कदाचित् ही पाठ

जाए, और इसीलिए जिनकी मांग नहीं के बराबर हो। उसे तृतीय कक्षा कहा जा सकता है। मुख्य कक्षा को छोड़कर अन्य सभी कक्षाओं के ग्रन्थों के लिए वर्ग संख्या के ऊपर की ओर एक चिह्न लगाना चाहिए जिससे यह प्रतीत हो कि यह ग्रन्थ निम्न कक्षा का है। यह आवश्यक नहीं कि इस प्रकार का कक्षा चिह्न सामयिक के संपुटित संपुट में हो। क्योंकि उसका रूप ही यह प्रकट कर देगा कि वह सामयिक है।

४६२१ अवरुद्ध कक्षा

इसके अतिरिक्त, कुछ ग्रन्थ ऐसे भी होते हैं जो पाठकों की दया के भरोसे नहीं छोड़े जा सकते। कारण यदि पाठकों की पहुँच उन तक स्वच्छन्द रूप से होती रही तो सम्भव है कि जनसमाज के कलङ्क रूप कुछ व्यक्ति उनके साथ बुरा व्यवहार करें। परिणाम यह होगा, वे ग्रन्थ इतने अधिक नष्ट भ्रष्ट हो जाएंगे कि जो सच्चे पाठक उन्हें वस्तुतः पढ़ना चाहते हैं, उनके भी किसी काम के न रहेंगे। इस वर्ग में हम ललित कला के ग्रन्थों का, चित्रों आदि से परिपूर्ण ग्रन्थों का तथा अश्लील अभिरुचि के वर्धक ग्रन्थों का परिगणन कर सकते हैं। इस प्रकार के ग्रन्थों को अनासन्न अथवा अवरुद्ध कक्षा में रख सकते हैं। यह आवश्यक नहीं कि उन्हें बन्द आलमारियों में रक्खा जाए। अवरुद्ध कक्षा का यही अर्थ होता है कि साधारणतः पाठकों को उनके पास जाने की अथवा उन्हें लेने की अनुमति न होगी। वे वहां सीधे रोक टोक के बिना न जा सकेंगे, किन्तु अधिकतर उन्हें वे ग्रन्थ पुस्तकालय अथवा पत्र-व्यवहार रीति से मिला करेंगे। विशिष्ट उत्तरदायी पाठकों के [illegible] वर्गों के लिए यह रुकावट हटा ली जा सकती है। इस प्रकार से अवरुद्ध कक्षा व्यवस्थापन से हम इन ग्रन्थों के उपयोग का नियन्त्रण करने में समर्थ होते हैं। यदि ललित कला के ग्रन्थों को आसन्न फलकों पर उन्मुक्त छोड़ दिया जाए तो उनके चित्र आदि लुप्त हो जाएंगे। जो ग्रन्थ यों तो शास्त्रीय विशिष्ट ग्रन्थ होते हैं किन्तु उनमें अश्लीलता के उत्तेजक पत्र होते हैं उन्हें भी विधिवत् चुरा लिया जाता है। और यह सब किया जाता है केवल कतिपय समाज कलङ्कों द्वारा नीच उत्सुकता को शान्त करने के लिए। इसका एक ज्वलन्त एवं चिरस्मरणीय उदाहरण मद्रास विश्वविद्यालय ग्रन्थालय में हैवलॉक एलिस के 'साइकालाजी आफ सेक्स' (*Psychology of sex*) द्वारा उपस्थित किया गया

था। जब तक उसे लेन-देन से न हटा लिया गया, उसके पूर्व तक उस ग्रन्थ की इतनी अधिक मांग रहती थी कि उसे अनुलय ग्रन्थ मान लेना पड़ा था और उसे निर्गम स्थान पर ही रक्खा गया था। प्रत्येक पाठक बस एलिस का ही नाम रटा करता ! इस प्रकार के ग्रन्थों को भी अवरुद्ध कक्षा में रख देना चाहिए। इस प्रकार की अवरुद्ध कक्षा को 'विशिष्ट संग्रह कक्षा' कहा जा सकता है। इनकी पुस्तक संख्या दो समानान्तर समलम्ब रेखाओं के बीच लिखी जाती है। उसके द्वारा उन ग्रन्थों का स्थान जाना जा सकता है।

४६२२ असामान्य आकार कक्षा

जब हम फलकों पर ग्रन्थों के वास्तविक व्यवस्थापन का विचार करते हैं तो यह आवश्यक प्रतीत होता है कि फलक सुन्दर एवं रमणीय प्रतीत हों। आमङ्ग ग्रन्थालय में तो यह रमणीय स्वरूप अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। कारण पाठक के मन में सर्वप्रथम जो बात श्रेष्ठ भावना को उत्पन्न करती है वह यह है कि फलक शोभन अवस्था में रखे जाएं। उनमें चयन दर्शक, फलक दर्शक आदि निर्देशक दर्शक पर्याप्त मात्रा में लगे हुए हों। यदि किसी ग्रन्थालय में फलकों पर महाकार ग्रन्थों को, वामन ग्रन्थों को तथा दुबल ग्रन्थों को एक साथ भेड़िया-धसान के रूप में रखा गया हो और उनके व्यवस्थापन में केवल उनके स्थानमान का ध्यान रखा गया हो तो वह बड़ा ही भद्दा दृश्य होगा। अतः जो संपुट अपने आकार अथवा गुरुत्व के कारण सरलतापूर्वक काम में न लाये जा सकते हों ऐसे सभी संपुटों को एक पृथक् कक्षा में रखना चाहिए। इसे महाकार कक्षा कहा जा सकता है। उन्हें इस प्रकार रखा जाए कि उनकी संभाव्य शक्ति कम से कम प्रतीत हो। उदाहरणार्थ, सभी ग्रन्थाधारों के सब से निचले फलकों को इस कक्षा के लिए काम में लाया जा सकता है। उनके स्थान के सूचन के लिए उनकी पुस्तक संख्या के ऊपर रेखा लगानी चाहिए। पुस्तकाएं तथा अतिलघु ग्रन्थ अवरुद्ध कक्षा में रखे जाने चाहिए। इसे अल्पाकार कक्षा कहा जा सकता है। उनके स्थान के सूचन के लिए भी उसी प्रकार उनकी पुस्तक संख्या के नीचे रेखा लगानी चाहिए। यदि इस कार्य को न किया गया तो वे संपुट अवश्यमेव पीस डाले जाएंगे, और

या तो दूसरे संपुटों के बीच अथवा ग्रन्थ-चोरों की जेबों में छिप जाएंगे।

४६२३ अस्थायी कक्षा

ऊपर कई कक्षाएं गिनाई गई हैं। किन्तु किसी वर्धिष्णु ग्रन्थालय में इससे भी अधिक कक्षाएं बनानी आवश्यक हो सकती हैं। परिगणित कक्षाओं से ही कक्षाओं की इतिश्री नहीं हो जाती। ये कक्षाएं एक प्रकार से स्थायी ही कही जा सकती हैं। किन्तु कभी कभी कतिपय अस्थायी कक्षाओं को भी बनाने की आवश्यकता पड़ती है।

४६२४ त्रुटिनिवारण कक्षा

यदि ग्रन्थालय समय की गति के साथ साथ प्रगति करते रहना चाहता है और इसके लिए कुछ भी प्रयत्न करता रहता है तो उसे बहुत कुछ कार्य करना पड़ेगा। जो ग्रन्थ संग्रह में आरम्भ से ही हों उन पर दी हुई वर्ग संख्याओं के संशोधन की निरन्तर आवश्यकता पड़ती रहेगी। इस आवश्यकता का ज्ञान तथा उसे पूर्ण करने का आधारभूत अनुभव एक तो पाठकों की सेवा से ही प्राप्त होगा। ग्रन्थालय में जो ग्रन्थ पाठक को दिये जाएंगे तथा पाठक जिनका उपयोग करेंगे वे ग्रन्थ स्वयं ही नये सुझाव उपस्थित करेंगे। दूसरे, विद्वत् जगत् में भी समय समय पर ज्ञान की विभिन्न शाखाओं में परिवर्तन होते ही रहते हैं। उनकी सन्तुष्टि के लिए पुनः समायोजन तथा पुनः उद्यन्मुखीकरण करते ही रहना पड़ेगा। इन सब का परिणाम ग्रन्थालय के वर्गीकरण पर भी होगा ही। सूचीकरण की नीति में भी समय समय पर परिवर्तन होना चाहिए। उसके अनुसार कतिपय ग्रन्थों के सूची संलेखों में भी संशोधन तथा सुधार करते रहना पड़ेगा। जब कभी वर्ग संख्या के अथवा सूची के त्रुटिनिवारण के लिए ग्रन्थों के समूह को पृथक् किया जाएगा तो वे चयन प्रकोष्ठ से अलग, दूर लम्बे समय तक पड़े रहना चाहेंगे। यदि त्रुटिनिवारण कक्षा नामक एक पृथक् कक्षा बना ली जाए तो बड़ा अच्छा हो। इस प्रकार उन पर निरन्तर ध्यान पड़ता रहेगा और उन्हें आगे बढ़ाया जा सकेगा।

४६२५ संपुटन कक्षा

जो ग्रन्थालय लोकप्रिय हो तथा जिसके ग्रन्थ भली भांति

उपयोग में लाये जाते हों और संघर्ष करते हों ऐसे ग्रन्थालय में एक और भी कारण होता है जिसके कारण अस्थायी कक्षा अनिवार्य रूप से बनानी पड़ती है। इस प्रकार के न्यायपूर्ण उपयोग द्वारा जब ग्रन्थ जीर्ण शीर्ण हो जाएं तो प्रदर्शन विभाग के ही सिर पर इसका भार आता है कि वे ऐसे ग्रन्थों के लिए कुटुम्ब चिकित्सक का भार उठाएं। प्रदर्शन विभाग इस प्रकार के ग्रन्थों को उचित समय पर चिकित्सार्थ अवकाश देकर चिकित्सालय में भेज दे। उन ग्रन्थों को छुट्टी दिलाने की, जब वे संपुटन विभाग में रुग्ण होकर पड़े रहें तब उनका ध्यान रखने की तथा जब उनकी चिकित्सा समाप्त हो जाए तब तत्परता के साथ उन्हें पुनः बुला लेने की सरणि का नियन्त्रण तभी श्रेष्ठ प्रकार से हो सकता है जब हम उनकी एक अस्थायी कक्षा बना दें। इस कक्षा को संपुटन कक्षा कहा जाएगा। यहां भी बहुधा यह संभव है कि एक से अधिक मासिक दल चिकित्सालय में एक साथ पड़े रहें। उन्हें संपुटन विभाग में भेजने के पहले यदि उनकी वर्ग संख्याओं का पुनः परीक्षण तथा पुनः संस्कार कर लिया जाए तो यह बुद्धिमानी का कार्य होगा। इसका कारण यह है कि जब वे ग्रन्थ संपुटन विभाग में थोड़े समय तक निवास कर, स्वस्थ सबल और रमणीय बन कर वापस लौट आएं तब यह संभव है कि उनके पृष्ठ भाग पर क्रामक संख्याएं चमकीले सुनहले अक्षरों में स्थायी रूप से छपी हुई हों। इन बातों का विचार करने से यह भली भांति सिद्ध हो जाएगा कि संपुटन कक्षा में कुछ उपकक्षाएं भी होनी चाहिएं।

४६२६ प्रकृत विषय कक्षा

अनुलय कर्तृगण के अनेक उत्तरदायित्व हैं। एक ओर तो उन्हें प्रत्येक पाठक के लिए उसका अपना ग्रन्थ दिलाना है और प्रत्येक ग्रन्थ के लिए उसका अपना पाठक ढूंढ निकालना है; तो दूसरी ओर उनका यह भी कर्तव्य है कि चतुर्थ सूत्र का अनुपालन किया जाए, अर्थात् "पाठकों का समय बचे"। कुछ अवसर ऐसे होते हैं जिनमें अनुलय विभाग अपने उद्देश्यों को तभी सफल कर सकता है जब प्रदर्शन विभाग का सहयोग पूरी तौर पर मिले। बिना उसकी सहयोग-भावना के वह कुछ भी नहीं कर सकता। प्रदर्शन विभाग

का यह अनिवार्य कर्तव्य है कि वह इस प्रकार का सहयोग करे और अवश्य करे। इसमें उसे कोई कठिनाई नहीं पड़ सकती। फलक पञ्जिका को "एक संपुट-एक पत्रक" आधार पर पत्रकों में क्यों रखा जाए, इसका एक अन्यतम मुख्य कारण यह है कि इसके द्वारा ग्रन्थों के व्यवस्थापन में अत्यधिक ऋजुता तथा गतिशीलता की सिद्धि हो जाती है। प्रदर्शन विभाग का यह कर्तव्य है कि वह पाठकों के लाभ के लिए इस गतिशीलता से लाभ उठाए। उसे चाहिए कि समय समय पर जो विशेष मांगें उत्पन्न हों उनका समाधान करने के लिए विशिष्ट अस्थायी कक्षाओं को स्वतन्त्रतापूर्वक बनाए। कतिपय वास्तविक उदाहरणों द्वारा यह विषय अधिक स्पष्ट हो सकेगा। एक समय शिक्षकों के एक महान वर्ग के लिए शिक्षा विषयक परीक्षणों के सम्बन्ध में एक विशिष्ट व्याख्यान माला का प्रबन्ध किया गया था। उस समय भाषण माला के प्रतिपाद्य का आरम्भ से ही मनन कर लिया गया। व्याख्याता से परामर्श करके उस व्याख्यान माला से सम्बद्ध, ग्रन्थालय में विद्यमान सभी ग्रन्थों को एकत्रित कर लिया गया। उन्हें एक विशिष्ट स्थान पर ग्रन्थाधार में रख दिया गया। वह एक विशिष्ट अस्थायी कक्षा बनाई गई थी और उस पर "शिक्षा विषयक परीक्षण व्याख्यान माला कक्षा" यह नाम लगा दिया गया था। प्रदर्शन विभाग समगति न्याय की सहायता से इस प्रकार की अस्थायी कक्षा को सरलतापूर्वक बना सका और साथ ही उस पर पूर्ण नियन्त्रण रख सका। इस प्रकार उसने अनुलय विभाग को पूर्ण सुविधा तथा समर्थता प्रदान की जिससे वह लेशमात्र भी समय नष्ट किए बिना व्याख्यान सुनने वाले शिक्षकों की सेवा कर सका। समय बचाने की तो बात अलग है। सब से बड़ा लाभ तो यह हुआ कि मानसिक सन्तोष रूपी परिणाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रमाणित हुआ। शिक्षकों ने इस सहायता से जिस आत्मसन्तोष का अनुभव किया वह वर्णनातीत है। प्रकृत विषय कक्षा जिस दिन तोड़ दी जाएगी उस तिथि को तिथि पत्र पर लिख दिया जाए तथा उसे रेखा द्वारा घेर दिया जाए।

जो भी ग्रन्थालय कार्यशील रहना चाहेगा उसे समय समय पर इस प्रकार की प्रकृत विषय कक्षा बनानी पड़ेगी। प्रत्येक प्रकार के

ग्रन्थालय के लिए यह अनिवार्य होता है। ग्रन्थालय के प्रकार भेद से उस पर कोई अन्तर नहीं पड़ता। अभिसन्धि केवल यही है कि वह ग्रन्थालय कार्यशील रहना चाहता हो और अपने पाठकों को सन्तुष्ट करना चाहता हो। देश की धारासभा के सामने कोई महत्त्वपूर्ण विधेयक अथवा प्रस्ताव आए तो उस सम्बन्ध में होने वाली चर्चा के कारण इस प्रकार की अस्थायी प्रकृत विषय कक्षा बनानी पड़े। वह चर्चा ही एक उचित अवसर प्रमाणित हो सकती है। ऐसे अवसरों पर धारासभा के ग्रन्थालय में पृच्छाओं की जो परंपरा आएगी तथा समय का जो दबाव आएगा उनके कारण ग्रन्थालयों का कार्य असंभव नहीं तो कम से कम अक्षम तो बन ही जाएगा। इस विपत्ति से बचने का एकमात्र उपाय यही है कि इस प्रकार की अस्थायी प्रकृत विषय कक्षाओं का आरम्भ से ही अनुमान लगा लिया जाए और उन्हें पहले से ही बना लिया जाए। इसके बिना कोई गति नहीं है। साथ ही यह भी सत्य है कि यदि ग्रन्थालय व्यवसाय ने उसके लिए पत्रकात्मक फलक पञ्जिका का आश्चर्यजनक आविष्कार न कर लिया होता तो ग्रन्थों का समय समय पर इष्ट विशिष्ट व्यवस्थापन संभव न हो सकता। यदि ग्रन्थालयों में वह शक्ति न होती तो वह अस्थायी प्रकृत कक्षाओं की आवश्यकता का अनुमान करके भी उन्हें बनाने में कदापि समर्थ न हो सकता। गतिशील पत्रकात्मक फलक पञ्जिका तथा उसी मात्रा में गतिशील समायोज्य समगति न्याय—ये ही दो साधन हैं जिनके द्वारा ग्रन्थालयी अपनी इष्ट सिद्धि करता है। इस प्रकार, इच्छानुसार, अस्थायी प्रकृत कक्षाओं को बनाने की स्वतन्त्रता का माहात्म्य संभवतः उन कार्यभार ग्रन्थालयों में अधिक माना जा सकेगा जिनके संरक्षक समय का मूल्य सबसे अधिक मानते हैं, और इतना ही नहीं समय को लक्ष्मी और लक्ष्मी को समय मानते हैं।

४६२७ समगति न्याय

प्रदर्शन विभाग तालिका क्रम में उलटफेर कर डालता है। उसके बिना कोई गति नहीं है। उसे ग्रन्थों को अनेक कक्षाओं में व्यवस्थित करना पड़ता है। अतः इस प्रकार उसके सिर पर बड़ा भारी उत्तरदायित्व आ जाता है। फलकों में यथार्थ क्रम स्थिर रहे

तथा प्रत्येक ग्रन्थ अपने योग्य स्थान में रहे इसका वह ध्यान रखे। इस उद्देश्य को सिद्ध करने के लिए ग्रन्थालय व्यवसाय ने जो यान्त्रिक साधन खोज निकाला है उसे फलक पञ्जिका कहा जाता है। वह मानित आकार अर्थात् ५" × ३" प्रमाण के पत्रकों से बनी होती है। वे पत्रक 'एक आख्या-एक पत्रक' न्याय के अनुसार लिखे जाते हैं। उनकी अग्र रेखा में क्रामक संख्या होती है। इन फलक पञ्जिका पत्रकों को सर्वथा ठीक उसी क्रम में रखना पड़ता है जिस क्रम में फलकों पर ग्रन्थ व्यवस्थित हों। इसका अर्थ यह होता है कि उन्हें उतनी ही कक्षाओं में व्यवस्थित करना पड़ेगा जितनी कक्षाओं में ग्रन्थ होंगे। उनकी भी उतनी कक्षाएं होंगी जितनी ग्रन्थों की होंगी। इसके अतिरिक्त एक विशिष्ट बात यह है। जब कभी ग्रन्थ पाठकों द्वारा उपयोग के लिए इधर उधर हटाये जाएं अथवा अपने योग्य स्थान से दूर किए जाएं तब बात दूसरी है। किन्तु इसके अतिरिक्त सभी अवसरों पर, जब कभी ग्रन्थ इधर उधर हटें तब उनकी गति का नियन्त्रण किया जाए, तथा फलक पञ्जिका पत्रकों में भी सर्वथा उसी प्रकार की समगति अनुकृत की जाए। इस समगति न्याय का आविष्कार, ग्रन्थालय में ग्रन्थों के व्यवस्थापन सम्बन्धी अनेक रोगों के लिए रामबाण औषध प्रमाणित हुआ है। साथ ही वह प्रदर्शन विभाग के अनिवार्य आविर्भाव का साधन भी बना है। फलक पञ्जिका-पात्रक मण्डल ग्रन्थालय के संग्रह का नाभिस्वरूप है और इसी के अनुसार प्रदर्शन विभाग भी ग्रन्थालय के कर्तृगण का नाभिस्वरूप है।

४६३ दर्शक

प्रदर्शन विभाग को चाहिए कि वह अध्ययन शाला, सामयिक शाला, सूचीशाला तथा चयनशाला सब स्थानों में दर्शक-पट्टिकाएं लगाए, जिससे ग्रन्थालय में पाठक स्वयं अपना मार्ग ढूंढ निकालें तथा अपने गन्तव्य स्थान पर बिना किसी बाधा के पहुँच जाएं। स्वयं चयनशाला में भी भूमि दर्शक, अन्तर्मार्ग दर्शक, खात दर्शक तथा फलक दर्शक लगाये जाएं। भूमि दर्शक यह दिखलाएंगे कि उनसे सम्बद्ध भूमियों में कौन से विषय पाये जा सकेंगे। इसी प्रकार अन्तर्मार्ग दर्शक भी बताएंगे कि वहां कौन कौन विषय मिल सकेंगे। प्रत्येक खात में खात-दर्शक होंगे जो यह प्रदर्शित करेंगे कि सम्बद्ध खात में कौन ग्रन्थ हैं।

सबसे अन्त में फलक दर्शक होंगे जो उन फलकों में स्थित ग्रन्थों का सङ्केत करेंगे। अनुभव से यह प्रमाणित हुआ है कि प्रत्येक खातदर्शक में कम से कम छः पङ्क्तियां हों। उपर्युक्त सभी दर्शक १८" × ६" प्रमाण के दृढ़ कार्ड बोर्ड के बने हुए हों। उन पर सफेद कागज चिपका हुआ हो। प्रत्येक खात की मानित चौड़ाई ३ फीट होती है। प्रत्येक खात में ऐसे दो दर्शकों की आवश्यकता पड़ेगी। उन पर वर्ग संख्या तथा उसके प्राकृतिक भाषा के पर्याय लिखे जाएंगे। यह लेख उन पट्टिकाओं पर स्टेन्सिल द्वारा लिखा जाएगा। प्रत्येक फलक के तख्ते में भी फलक दर्शक लगाये जाएंगे। फलक के तख्ते की मानित चौड़ाई ३ फीट होती है। अतः प्रत्येक तख्ते में फलक दर्शकों का माध्य तीन होना चाहिए। अनुभव से यही सहायभूत पाया गया है ये फलक दर्शक ५" लम्बी ३" चौड़ी पट्टियों के बने हुए होते हैं। उन्हें सफेद ब्रिस्टल बोर्डों से काटा जा सकता है। जो सूचा पत्रक रद्द कर दिये जाएं और जिनका केवल एक भाग कोरा हो उन्हें इस काम में लाया जा सकता है। फलक दर्शक में भी वर्ग संख्या तथा प्राकृतिक भाषा में उसका पर्याय लिखा जाना चाहिए। हम यह लिख ही चुके हैं कि माध्य रीति से फलक तख्ते के प्रत्येक अनुरेख फुट के लिए एक फलक दर्शक होगा। अतः यह स्पष्ट ही है कि जिस चयनशाला में २५,००० संपुट हों उसमें प्रायः ३,००० फलक दर्शकों की आवश्यकता पड़ेगी। इन फलक दर्शकों को यथा स्थान योग्य रीति से रखना साधारण कार्य नहीं है। ग्रन्थालय में नये ग्रन्थ आते ही रहेंगे। उनके कारण ग्रन्थ निरन्तर आगे ही बढ़ते रहेंगे। अतः इन फलक दर्शकों को भी निरन्तर आगे बढ़ाते हुए यथास्थान लगाना पड़ेगा। फलक दर्शकों को लगाए रखने के क्रम में इससे मात्रावृद्धि ही होगी। इस कार्य में सबसे बड़ी सुविधा उत्पन्न करने का मार्ग यह है कि फलकों के तख्तों में आगे के किनारों में स्फान-वत् खांचे बना लिए जाएं। इन्हीं में फलक दर्शकों को इधर उधर खिसकाया जा सकेगा।

४६३१ दर्शकों का समायोजन

प्रदर्शन विभाग के लिए यह बड़े गौरव का विषय होगा कि कोई भी दर्शक 'मिथ्या भाषण' न करे। फलक दर्शकों को समय समय पर ध्यान से देखते रहना पड़ेगा तथा उनके योग्य स्थानों में लगाते रहना

पड़ेगा। खात दर्शकों को इतनी शीघ्रता के साथ नहीं बदलना पड़ेगा। उन पर इतना अधिक ध्यान देने की आवश्यकता न पड़ेगी। किन्तु जब कभी ग्रन्थों को एक खात से दूसरे खात में परिवर्तित करना पड़े तो खात दर्शकों में उसी क्षण संशोधन कर देना चाहिए। अन्तर्मार्ग दर्शकों तथा भूमि दर्शकों का तो नवीकरण खात दर्शकों के उतना भी न होगा। उन्हें तो कदाचित् ही परिवर्तित करना पड़े।

४६३२ पुनः संमिश्रण

यदि ग्रन्थ व्यवस्थापन के प्रकार को सदा सर्वदा एक ही रूप में रहने दिया जाए तो वह एक-रूप होने के कारण अरुचिकर बन जाएगा। ऐसा न होने देना चाहिए। नवीनता के न्याय से पूरा पूरा लाभ उठाना चाहिए। ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि प्रत्येक ग्रन्थ अपना पाठक पाए। जनता की अभिरुचि में तथा विषयों की लोकप्रियता में कालवश परिवर्तन होता ही रहता है। उस परिवर्तन के साथ समगति रखनी चाहिए। इन सब उद्देश्यों की सिद्धि के लिए यह वाञ्छनीय होगा कि यथासम्भव, बीच बीच में चयनशाला के विषय-व्यवस्थापन में परिवर्तन एवं पुनः संमिश्रण किया जाए। यह सम्भव है कि पांच वर्षों में एक बार सारे ग्रन्थालय का पुनः संमिश्रण करना पड़े। प्रत्येक वर्ष किसी खंड का परिवर्तन एवं संमिश्रण करना पड़े। जब कभी इस प्रकार का समूहात्मक पुनर्व्यवस्थापन किया जाए, तब खात-दर्शकों को तथा अन्तर्मार्ग दर्शकों को अधिकतर नये सिरे से ही लिखना पड़ेगा।

४६३३ ग्रन्थ दर्शकों का नवीकरण

ग्रन्थों के पृष्ठ भाग पर लगे हुए दर्शकों को प्रतिदिन शीघ्रता के साथ देखना चाहिए। इस प्रकार कम से कम एक मास में सारी चयनशाला को देख लेना चाहिए। इस पर्यालोचन में जितने भी ग्रन्थ दर्शक जीर्ण शीर्ण अवस्था में दिखलाई पड़ें उन्हें बदल देना चाहिए तथा उनके स्थान में नये लगा देने चाहिएं। उन पर वर्ग संख्याएं लिख देनी चाहिएं। नयी लिखी हुई सब वर्ग संख्याओं को कोई दूसरा व्यक्ति जांच ले। यदि दूसरा व्यक्ति न हो तो वही व्यक्ति करे, किन्तु दूसरे दिन। इसके बाद ही उन सपुटों को फलकों पर वापस भेजा जा सकता है उसके पहले नहीं।

४६३४ दर्शकों के बिना आमङ्ग

यदि प्रभूत दर्शकों के लगाये बिना आमङ्ग प्रणाली का स्वीकार किया गया तो वह सचमुच निर्दयता होगी। इसके साथ ही, यदि दर्शक लगाये भी गए हों और सर्वदा परिवर्तनशील ग्रन्थालय में उन्हें परिवर्तित किये बिना छोड़ दिया गया हो तो वह भी क्रूरता होगी। इससे पाठकों को घोर निराशा होगा। इससे उन्हें झुंझलाहट भी उत्पन्न होगी। ग्रन्थालयी इसके कारण घृणा के पात्र बन जाएंगे। इसमें तो कोई सन्देह नहीं है कि प्रभूततर दर्शकों को उनके यथायोग्य स्थानों में रखे रहने के लिए कर्तृगण को अत्यधिक समय देना पड़ेगा। ग्रन्थालय अधिकारी जब कर्तृगणों को नियुक्त करें तब उन्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए। किन्तु कर्तृगण की ओर से भी कुछ उत्तरदायित्व निभाया जाना चाहिए। उनका भी यह अनिवार्य कर्तव्य है कि वे स्वारस्य का ज्ञान रखें। यदि उनमें वह रहा तो यह निश्चित है कि ज्योंही उन्होंने किसी दर्शक को अनुचित स्थान पर देखा अथवा किसी तख्ते को दर्शक के बिना देखा त्योंही उन्हें मर्मव्यथा होने लगेगी। और वह होनी भी चाहिए। तभी वे उस त्रुटि का परिमार्जन कर सकेंगे।

४६४ नये ग्रन्थ

सप्ताह के नव परिगृहीत ग्रन्थों को संग्रह में समाविष्ट करने का कार्य साप्ताहिक आधार पर ही करना चाहिए। सप्ताह के नये ग्रन्थों का सज्जीकरण ज्योंही समाप्त हो जाए, त्योंही उन्हें उनकी कक्षा के अनुसार विभाजित कर लिया जाए। प्रत्येक कक्षा में ग्रन्थों को उनकी वर्ग संख्या के अनुसार व्यवस्थित कर लिया जाए। उनके फलक पत्रकों को भी उसी प्रकार व्यवस्थित कर लेना चाहिए। उनका मिलान करना चाहिए। जो ग्रन्थ सहज-स्वरूप हों तथा जिन्हें नववृद्धि फलक में प्रदर्शित किया जा सकता हो उन्हें अलग कर लेना चाहिए। साथ ही उनके फलक पत्रकों को भी समरूप में अलग कर लेना चाहिए। इन पृथक्कृत पत्रकों को नववृद्धि मंजूषा में "कक्षा ०" दर्शक के पीछे लगा देना चाहिए। इस मंजूषा को तथा नवागन्तुक ग्रन्थों को नववृद्धि फलक के निकट ले जाना चाहिए। वह फलक चयन शाला में फलकों की प्रथम पंक्ति में रखा रहता है। "कक्षा ०" दर्शक के पीछे जितने पत्रक हों उनके

संवादी सभी संपुटों को बाहर निकाल लेना चाहिए। ज्यों ज्यों एक एक संपुट बाहर निकाला जाए त्यों त्यों उसके फलक पत्रक को उसी के स्थान पर समकोण रूप में घुमा देना चाहिए, जिससे वह अपने लघुतर किनारे के बल खड़ा हो जाए। यदि किसी संपुट का पता न लगे तो उसे खोज निकालना चाहिए। जब सभी ग्रन्थों का पता लग जाए तब "कक्षा १" दर्शक पत्रक को उस स्थान पर लगा देना चाहिए जहां "कक्षा ०" दर्शक हो। "कक्षा ०" दर्शक प्रचलित सप्ताह के पत्रकों के अन्त में लगा देना चाहिए। प्रदर्शन के लिए उद्दिष्ट, प्रचलित सप्ताह के ग्रन्थों को वर्गांकित क्रम में नववृद्धि फलक पर रख देना चाहिए।

४६४१ मुक्त ग्रन्थ

जो मुक्त ग्रन्थ पहले से ही प्रतिश्रुत हों वे लेन-देन स्थान पर भेज दिए जाएं। अवशिष्ट ग्रन्थों को तथा प्रचलित सप्ताह के अन्य ग्रन्थों को ले लेना चाहिए और उन्हें उनके उचित स्थानों में फलकों पर रख देना चाहिए। नव वृद्धि मञ्जूषा में से वे पत्रक उठा लेने चाहिएं जो अपने लघुतर किनारों के बल खड़े हों। सप्ताह के नये ग्रन्थों में से जो ग्रन्थ नववृद्धि फलक पर न रखे जाने वाले हों उनके पत्रकों के साथ उपर्युक्त पत्रकों को रख देना चाहिए। इन सभी पत्रकों को फलक पञ्जिका पात्रक मण्डल में उनके उचित स्थानों में अनुयुक्त कर लेना चाहिए।

४६४२ उपयुक्त ग्रन्थ

४६४२१ अवलोकित ग्रन्थ

प्रति घण्टे अध्ययनशाला में चारों ओर घूमना चाहिए तथा पाठक जिन ग्रन्थों का अवलोकन कर अपनी मेजों पर छोड़ गये हों उन ग्रन्थों को एकत्रित कर लेना चाहिए। अवलोकन गणना पत्र में गणनाओं को भर देना चाहिए। ग्रन्थों को परावर्तित ग्रन्थों के फलक पर रख देना चाहिए। उन्हें प्रायः वर्गांकित क्रम में रखना चाहिए। यह फलक चयनशाला में फलकों की प्रथम पंक्ति में होना चाहिए।

४६४२२ उद्धृत ग्रन्थ

सेव्य जिन ग्रन्थों को अवरोपण स्थान पर लौटा दें उन्हें भी

सुविधापूर्ण अन्तरालों पर परावर्तित ग्रन्थ फलक पर ले जाना चाहिए. तथा प्रायः वर्गांकित क्रम में फलकस्थ कर देना चाहिए।

४६४२३ पुनः स्थापन

पाठकों को इसकी अनुमति होगी कि वे प्रत्यावर्तित ग्रन्थ फलक में से ग्रन्थों को अवलोकन अथवा उद्धरण के लिए चयनशाला से बाहर ले जाए। यह उचित नहीं है कि जब तक वे ग्रन्थ चयनशाला में अपने स्थायी स्थान पर न पहुँच जाएं तब तक उन्हें अलग रखा जाए और पाठकों के उपयोग से वञ्चित रखा जाए। इसके अतिरिक्त. अधिक संभावित तो यह है कि पुनः स्थापित ग्रन्थ फलक में रखे हुए अनेक ग्रन्थ चयनशाला में जाएं ही नहीं। वे अधिकतर लोकप्रिय ग्रन्थ होंगे तथा पाठक उन्हें सीधे वहीं से घर ले जाएंगे। इस प्रकार दिन भर में वे ग्रन्थ स्वयं बाहर चले जाएंगे। सायंकाल ऐसे कुछ ही ग्रन्थ वहाँ अवशिष्ट रह जाएंगे जिन्हें चयनशाला में वस्तुतः पुनः स्थापित करना पड़ेगा। इस प्रकार चतुर्थ सूत्र भी सन्तुष्ट होगा, अर्थात कर्तृगण का समय बचेगा। किन्तु जो संपुट प्रत्यावर्तित ग्रन्थ फलक में पड़े रहें उन्हें दिन में एक बार, निश्चित समय पर उनके स्थानों पर पुनः रख दिया जाए। यह समय वही हो जब ग्रन्थालय में न्यूनतम संमर्द हो।

४६४३ त्रुटिशोधन

जितने भी संपुट त्रुटिशोधन कार्य के लिए लिये जाएं उनके फलक पञ्जिका पत्रकों को अलग निकाल लेना चाहिए। उन्हें त्रुटिशोधन कक्षा में उचित तिथियुक्त दर्शक पत्रकों के पीछे लगा देना चाहिए। जब ये संपुट त्रुटिशोधन के पश्चात वापस आ जाएं तब उन्हें उनके उचित स्थानों में फलकस्थ कर दिया जाए। उनके फलक पत्रकों को उसी समरूप में अनुयुक्त कर लेना चाहिए। त्रुटिशोधन कक्षा में रखे हुए पत्रकों को समय समय पर देखते रहना चाहिए। इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि अनुचित विलम्ब किए बिना पिछड़ा हुआ कार्य समाप्त कर दिया जाए।

४६५ सुव्यवस्थापन तथा प्रमाणीकरण

आसङ्ग ग्रन्थालय में पाठकों को फलकों से ग्रन्थ पुनः स्थापित

करने की अनुमति कदापि नहीं दी जाती। उन्हें केवल यही छूट होती है कि ग्रन्थों को फलकों से स्वयं बाहर निकाल सकें। इस प्रथा के होते हुए भी ग्रन्थों का आपस में मिश्रण हो ही जाता है। कारण पाठक उनके आस पास घूमते ही रहते हैं। कुछ लोग इतने नीच होते हैं कि वे जानबूझ कर ग्रन्थों को उनके योग्य स्थानों से हटा कर दूसरे स्थानों पर रख देते हैं। उनकी तो बात है ही। किन्तु बहुत बार ऐसा भी होता है कि लोग अनजान में ही उसी फलक में ग्रन्थों को अयोग्य स्थानों पर रख देते हैं। इन त्रुटियों का परिणाम आगे चल कर यह होगा कि सारे फलक में अव्यवस्था हो जाएगी। यदि समय समय पर ग्रन्थों को उनके उचित स्थानों में पुनः न रख दिया गया तो पाठकों को बड़ी ही असुविधा होगी। उन्हें बड़ा ही कष्ट होगा। साथ ही ग्रन्थालय के कर्तृगण भी ग्रन्थों को सरलता से न पा सकेंगे। ग्रन्थों को क्रम में पुनः स्थापित करने की सरणि को फलक-सुव्यवस्थापन कहा जाता है। इसके अतिरिक्त समय समय पर संग्रह प्रमाणीकरण की भी आवश्यकता होती है। साधारणतः इसे वर्ष में एक बार किया जाता है। किन्तु बहुधा इस प्रथा से ग्रन्थालय की कार्यधारा में अत्यधिक बाधा पड़ने लगती है। कुछ ग्रन्थालय के अधिकारी तो इतनी अधिक क्रूरता दिखलाते हैं कि संग्रह प्रमाणीकरण कार्य के लिए वे ग्रन्थालय को पाठकों के लिए बन्द ही कर देते हैं। यह रीति तो ग्रन्थालय शास्त्र के समस्त सूत्रों की निर्मम हत्या ही है। आवश्यक फलक सुव्यवस्थापन तथा संग्रह प्रमाणीकरण—इन दोनों को एक ही सरणि में मिलाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यदि फलक सुव्यवस्थापन को विधिवत आयोजित किया जाए और ठीक ठीक पूरा किया जाए तो संग्रह प्रमाणीकरण वर्ष में एक बार नहीं, अनेक बार सहज रूप में हो सकता है।

४६५१ फलक सुव्यवस्थापन मालाचक्र

ग्रन्थालय के सभी प्रदेश पाठकों द्वारा समान रूप से अव्यवस्थित नहीं किए जाएंगे। मुख्य कक्षा ही सबसे अधिक अव्यवस्थित हुआ करेगी। अवरुद्ध कक्षा में तो पाठक आएंगे ही कदाचित्। अतः उसकी अव्यवस्था का प्रश्न ही नहीं उठता। द्वितीय तथा तृतीय

कक्षाएं प्रथम कक्षा की अपेक्षा बहुत कम अव्यवस्थित होंगी। अतः यह वाञ्छनीय है कि मास में कम से कम एक बार मुख्य कक्षा में फलक सुव्यवस्थापन किया जाए; द्वितीय कक्षा में संभवतः छः मासों में एक बार किया जाए। अन्य कक्षाओं में यदि वर्ष में एक बार भी ध्यान दिया गया तो पर्याप्त होगा। किन्तु इन कक्षाओं की झाड़-पोंछ बीच बीच में करनी पड़ेगी। उसका पौनः पुन्य (फिर फिर किया जाना) इन चारों कक्षाओं में ठीक विपरीत क्रम से होगा। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि मुख्य कक्षा की झाड़-पोंछ कम से कम करनी पड़ेगी, और अवरुद्ध कक्षा की सबसे अधिक। इसका कारण यह है कि मुख्य कक्षा में ग्रन्थों को स्वयं पाठक इधर उधर निरन्तर अव्यवस्थित किया करेंगे। अतः वहाँ धूल एकत्रित होने का अथवा दीमक आदि लगने का भय ही नहीं रहेगा। किन्तु अन्य कक्षाओं में वह संभव है।

४६५२ दैनिक अभ्यंश

फलक सुव्यवस्थापन के लिए नित्यप्रति कितना अभ्यंश लिया जाए इसके निर्णय के लिए दो बातें देखनी पड़ेंगी। एक तो यह कि जिन फलकों का सुव्यवस्थापन करना है उनकी पूरी लम्बाई क्या है। दूसरे उसे कितने समय में पूरा करना है। प्रतिदिन दैनिक अभ्यंश के लिए फलक पञ्जिका पात्रकों को ले लेना चाहिए। जहाँ तक हो सके अभ्यंश का अन्त वहाँ हो जहाँ सुविधापूर्ण विषयों का भी अन्त होता हो। फलक सुव्यवस्थापन दो व्यक्तियों को करना चाहिए।

४६५२१ आरोपित पात्रक से मेलन

लेन-देन स्थान पर आरोपित पात्रक में वे ग्रन्थ चिटिकाएं पड़ी होंगी जिनके ग्रन्थ बाहर गये होंगे। फलक सुव्यवस्थापन करने वाले दो व्यक्तियों में से एक व्यक्ति को चाहिए कि वह उन चिटिकाओं में से उन क्रामक संख्याओं का उच्चारण करे जो उस दिन के दैनिक अभ्यंश में आती हों। एक व्यक्ति जब इस प्रकार किसी एक क्रामक संख्या को जोर से पढ़े, तब दूसरे व्यक्ति को चाहिए कि वह उस के फलक पत्रक को समकोण रूप में इस प्रकार घुमा दे कि वह अपने लघुतर किनारे के बल खड़ा हो जाए।

४६५२२ अन्य आरम्भिक मेलन

सम्बद्ध प्रदेश के सभी ग्रन्थों के लिए इस प्रकार करना चाहिए। कुछ ग्रन्थ प्रतिश्रुत कक्षा में होंगे कुछ प्रत्यावर्तित कक्षा में और कुछ पाठकों द्वारा देखे जा रहे होंगे। उन सभी का मेलन कर लेना चाहिए।

४६५२३ अन्तिम मेलन

इसके पश्चात् पात्रकों को चयनशाला के उस प्रदेश में ले जाना चाहिए जिसका मिलान करना हो। एक व्यक्ति फलक पर के ग्रन्थों की क्रामक संख्याओं को पढ़ता जाए। दूसरा व्यक्ति पात्रक के पत्रकों को देखता जाए तथा संवादी पत्रकों को अपनी ओर खिसकाता जाए। यदि बीच में कोई ऐसा पत्रक आए, जो अपने लघुतर किनारे के बल खड़ा हो तो उसे सहज रूप में घुमाकर रख देना चाहिए। अपने स्वाभाविक रूप में रखे हुए फलक पञ्जिका पत्रकों में से यदि किसी पत्रक के संवादी ग्रन्थ को फलक वाला व्यक्ति न उच्चारित करे तो उस पत्रक को घुमा देना चाहिए, जिससे वह अपने लघुतर किनारे के बल खड़ा हो जाए। परिणाम यह होगा कि किसी भी विशिष्ट क्षण में मेलित प्रदेश में जो पत्रक अपने लघुतर किनारे के बल खड़े होंगे वे उन ग्रन्थों के होंगे जिनका पता नहीं लगा होगा। इसके विपरीत, अमेलित प्रदेश में जो पत्रक अपने लघुतर किनारे के बल खड़े होंगे वे उन ग्रन्थों के होंगे जिनका पता लग चुका होगा। इस प्रकार जब मेलन कार्य चल रहा होगा तब फलक वाला व्यक्ति उन ग्रन्थों को भी पाएगा जो स्थान भ्रष्ट होंगे। वह उन ग्रन्थों की क्रामक संख्या का भी उच्चारण करेगा। यह संभव है कि ऐसे किसी स्थान भ्रष्ट ग्रन्थ का पत्रक मेलित प्रदेश में अपने लघुतर किनारे के बल खड़ा हुआ पाया जाए। उस अवस्था में उसे, उसके स्वाभाविक रूप में, दीर्घतर किनारे के बल खड़ा कर देना चाहिए। यह भी संभव है कि किसी स्थान भ्रष्ट ग्रन्थ का फलक-पत्रक पात्रक के अमेलित प्रदेश में पड़ा हुआ हो। यदि ऐसा हो तो फलक वाले व्यक्ति से कहा जाए कि वह ग्रन्थ को उसके उचित स्थान में फलकस्थ कर दे। यदि कोई पाठक किसी ग्रन्थ को उस दिन के अभ्यंश के अमेलित प्रदेश से ले जाना चाहे तो उसके उस प्रदेश से

चले जाने के पूर्व ही ग्रन्थ के फलक पत्रक को घुमा देना चाहिए, जिससे वह अपने लघुतर किनारे के बल खड़ा हो जाए। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि जब फलक सुव्यवस्थापन से संयुक्त संग्रह प्रमाणीकरण का कार्य पूरे वेग से चल रहा हो उस समय भी पाठकों को ग्रन्थोपयोग से वञ्चित न किया जाएगा। वे अपने मनचाहे ग्रन्थ को किसी भी क्षण ले जा सकेंगे। इसमें उन्हें किसी प्रकार की रुकावट न डाली जाएगी। दिन के अभ्यंश का मिलान समाप्त होते ही खोज-टिप्पण-पुस्तिका में उन पत्रकों का विवरण लिख देना चाहिए जो अपने लघुतर किनारों के बल ऊर्ध्वलम्ब रूप से खड़े हों। उसके बाद उन्हें उनके स्वाभाविक रूप में रख दिया जाए। फलक पञ्जिका पात्रक उसके योग्य स्थान में लगा देना चाहिए।

४६५२४ अलब्ध ग्रन्थ

खोज-टिप्पण-पुस्तिका की सहायता से उन संपुटों का पता लगाना चाहिए जो प्राप्त न हुए हों। ज्यों ज्यों एक एक संपुट मिलता जाए, त्यों त्यों उसे उसके उचित स्थान में रख दिया जाए, तथा खोज-टिप्पण पुस्तिका में उसका संलेख काट दिया जाए। जो संपुट वर्ष भर में भी मिले ही नहीं उन्हें नष्ट ग्रन्थ मान लेना चाहिए।

४६५२५ सुव्यवस्थापन में शीघ्रता

वर्गीकरण के लिए अनेक पद्धतियां प्रचलित हैं। किन्तु द्विबिन्दु वर्गीकरण अपनी कुछ विचित्र ही विशेषता लिए हुए है। उसमें पुस्तक संख्या भी अवयवावयविभाव सम्बन्ध से अनुस्यूत है। उसमें यह शक्ति है कि किसी भी प्रकार के ग्रन्थ का तत्त्वसाधन कर सके। यदि ग्रन्थालय के वर्गीकरण के लिए ऐसी वर्गीकरण पद्धति का उपयोग किया गया हो तो सुव्यवस्थापन कार्य अत्यन्त सरल तथा शीघ्र हो जाएगा। अनुभव से यह प्रमाणित हुआ है कि ऐसी अवस्था में वर्ग संख्या को न पढ़ कर केवल पुस्तक संख्या को ही मिला लिया जाए तो काम बन जाता है। केवल यही ध्यान रहे कि बीच बीच में सारी वर्ग संख्या भी पढ़ ली जाए। इससे अवसरों का सूचन भी स्वयं हो जाता है जब कभी कोई कठिनाई उपस्थित होती है। ऐसे अवसर बहुत कम आएंगे जब ग्रन्थों के पृष्ठ भाग पर लिखी हुई

पुस्तक संख्याएं तथा फलक पत्रकों की पुस्तक संख्याएं ही केवल समरूप हों और उनकी वर्ग संख्याएं समरूप न हों। इससे फलक सुव्यवस्थापन शीघ्र हो जाता है। एक घण्टे में प्रायः एक हजार ग्रन्थों का मिलान किया जा सकता है। इसका अर्थ यह होता है कि यदि दिन में केवल एक घण्टा ही फलक सुव्यवस्थापन का काम किया गया तो २५,००० ग्रन्थों का एक मालाचक्र एक मास में देखा जा सकता है। अधिकतर, सर्वजन ग्रन्थालयों में मुख्य कक्षा में २५,००० से अधिक संपुट नहीं होंगे।

४६५३ नीति

आज हमारे देश में सर्वजन ग्रन्थालयों की संख्या नगण्य है। संस्थाओं से सम्बद्ध ग्रन्थालय भी बहुत थोड़े हैं। जो भी ग्रन्थालय आज हैं उनमें ग्रन्थालय को एक 'कारखाना' नहीं अपितु 'खजाना' माना जाता है। जब ग्रन्थ लिखित थे अथवा दुर्लभ होने के कारण अमूल्य थे, तब कभी कभी इन्हें जंजीरों में तक जकड़ रखा जाता था। यदि जंजीर में जकड़ा हुआ कोई ग्रन्थ खो जाए तो उस कारा-ग्रन्थालया को उस हानि के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता था। अतः खोये हुए ग्रन्थों के लिए ग्रन्थालयी को उत्तरदायी ठहराने की यह प्रथा शताब्दियों पुरानी है। ग्रन्थों का दुर्लभ होने के कारण अमूल्य होना तो अभी अभी दूर हुआ है। पहले इस बात पर जोर दिया जाता था कि बिना किसी हानि के एकमात्र संरक्षण किया जाए। अब वह जोर उस पर से हटाकर इस बात पर दिया जाने लगा है कि ग्रन्थों के उपयोग की वृद्धि हो चाहे उसमें हानि ही क्यों न उठानी पड़े। चाहे संसार के किसी देश को लिया जाए, ग्रन्थालय के दृष्टिकोण में यह परिवर्तन अभी अभी होना प्रारम्भ हुआ है। इस प्रकार आज हम एक संक्रमण काल से गुजर रहे हैं। चतुर और अविवेकी व्यक्ति इस परिस्थिति से लाभ उठा रहे हैं। संग्रह प्रमाणीकरण के लिए बड़ा भारी आडम्बर रचा जाता है। ग्रन्थालयियों को नीचा दिखाने के लिए इसे एक अस्त्र बना लिया जाता है। यदि किसी को राजनीतिक वैयक्तिक अथवा और किसी वैर का बदला चुकाना हो तो यह बड़ा अच्छा सम्भव प्रमाणन हो जाता है। जब इस प्रकार सारा मामला ही राजनीतिक भद्र पुरुषों की मुट्ठी में आ जाता है तो स्वयं ग्रन्थालय

व्यवसाय के लोग भी अधः पतित हो जाते हैं और उन कपटी पुरुषों के सहायक बन जाते हैं। जो पतित व्यक्ति दूसरों के सहारे ही जीने के अभ्यासी रहते हैं वे ग्रन्थालय व्यवसाय के भरोसे ही अपना पेट चलाते हैं। वे व्यवसाय के हित के लिए नहीं जीते। ऐसे लोगों की चान्दी बन आती है। वे देश में ग्रन्थालय सेवा की वृद्धि करना तो दूर रहा उसे रोकने की चेष्टा करते हैं और उसमें सफल भी होते रहते हैं।

इन सब अनर्थों का अन्त करना ही पड़ेगा। एक नई नीति का अङ्गीकार करना ही पड़ेगा। हमारे सर्वजन ग्रन्थालय तो अभी गर्भावस्था में ही हैं। उन्हें चाहिए कि संग्रह प्रमाणीकरण के सम्बन्ध में नवीनतम, सुरुचि-पूर्ण रूढ़िका स्वीकार करें। इसमें किसी प्रकार का संशय अथवा विचार न करें। संग्रह प्रमाणीकरण ही क्या, सर्वजन ग्रन्थालय प्रणाली के स्वयं उद्देश्य एवं लक्ष्य के सम्बन्ध में भी उन्हें सर्वथा नई नीति अपनानी चाहिए। वह उद्देश्य यह नहीं है कि ग्रन्थालय में जो कोई भी रद्दी का टुकड़ा कहीं से उड़कर आ जाए उसे प्राणपण से सुरक्षित रखने की चेष्टा की जाए। प्रत्येक ग्रन्थ को, जो दो कौडी का भी न हो उसे भी, जीर्ण शीर्ण हो जाने पर भी रत्नमाला के समान गले में लगा कर रखा जाए। ग्रन्थालय का सच्चा और वास्तविक उद्देश्य तो यह है कि ग्रन्थों को अधिक से अधिक, जहां तक संभव हो सके, उपयोग में लाया जाए, चाहे इसमें कुछ हानि ही क्यों न उठानी पड़े।

४६५४ अनिवार्य हानि

ग्रन्थालय में चाहे कितनी ही सुरक्षाएं की जाएं, सर्वाधिक सर्वश्रेष्ठ, सहृदयतापूर्ण व्यवहार किया जाए, और उचित प्रकार की देख भाल रखी जाए तो भी कुछ हानि तो अवश्य ही होगी। ग्रन्थालय के अधिकारियों को इसके लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। ब्रिटिश ग्रन्थालयों में १,००० संपुटों के निर्गम के पीछे एक ग्रन्थ की हानि सह्य मानी जाती है। श्री डब्ल्यु सी. बर्विक सेयर्स वर्षों तक क्रॉयडन पब्लिक लायब्रेरीज़ के ग्रन्थालयी रह चुके हैं। उन्होंने इस प्रश्न पर हमें यह लिखा था :—

"एक हजार संपुटों के निर्गम के पीछे एक संपुट की हानि होने का जो आपने उल्लेख किया है वह ठीक है। इतनी हानि तो संभवतः सह्य होनी चाहिए। मैंने अभी अभी अपने फलकों की गणना कराई है। मैंने यह पाया कि गत साठ वर्षों में हमसे ३७,००० संपुट खोये गये हैं। इस बीच यहां ५ करोड़ ६० लाख ग्रन्थों का निर्गम हुआ है। मुझे यह कहना ही चाहिए कि यह हानि इतनी कम है जितनी किसी सुव्यवस्थित ग्रन्थालय में आशङ्कित हो सकती है। यदि किसी ग्रन्थालय में छात्र हों तो उसकी तो बात ही और है। कुछ ग्रन्थ ऐसे होते हैं जो उन्हें प्राणों से भी अधिक प्यारे होते हैं। उन्हें पाने के लिए वे सब कुछ कर सकते हैं। वैसे ग्रन्थालयों में आचार और नीति का प्रश्न भी उठाया जा सकता है। आपने वह उठाया ही है। किन्तु मैं आपके इस विचार से अत्यन्त प्रभावित हुआ हूँ कि ग्रन्थालय एक सामाजिक संस्था है और वहां हानि का भय भी उठाना ही चाहिए। अभिसन्धि केवल यही है कि आपका "प्रथम सूत्र" उसके द्वारा पूर्णतया सन्तुष्ट किया जा सके।"

इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखने योग्य है कि श्री सेयर्स ने जिस दीर्घ काल का उल्लेख किया है उसमें, अर्थात उन ६० वर्षों में, ग्रन्थालय में एक दिन के लिए भी आसङ्ग प्रणाली नहीं अपनाई गई थी। ग्रन्थालय किसी भी दिन पाठकों के लिए उन्मुक्त न छोड़ा गया था। यह सत्य है कि जिन ग्रन्थालयों में आसङ्ग न हो उनमें भी दुराचारियों द्वारा ग्रन्थों की हानि होगी, और होती ही रहती है। अमेरिकन ग्रन्थालय हानि के विषय में इससे भी अधिकतर प्रतिशत सहने के लिए तैयार रहते हैं। आधुनिक ग्रन्थालय नीति निम्नलिखित आधारों पर अवलम्बित रहती है :—

१. यदि ग्रन्थालय में आसङ्ग प्रणाली अपनाई गई तो ग्रन्थों का उपयोग अत्यन्त अधिक बढ़ जाएगा। कारण उससे उसमें पर्याप्त उत्तेजना अनिवार्य रूप से मिलती है। इस अभिवृद्धि के लिए यदि इस प्रकार की हानि भी उठानी पड़ी तो वह उचित मूल्य चुकाया गया यह मानना पड़ेगा।

२. सामाजिक तथा वैध आधारों पर भी वे यह युक्तिवाद उपस्थित करते हैं :—यदि समाज में कुछ व्यक्ति ऐसे अपराध और नीच हैं जिनका न तो पता लगाया जा सकता है और न उन्हें उनके कुकृत्यों से रोका जा सकता है तो केवल उन्हीं के भय से केवल उन्हीं के पीछे, समाज के समाज को, सत्य एवं निरपराधी व्यक्तियों को भी दण्ड देना तथा उन्हें आसङ्ग के अनन्त लाभों से वञ्चित रखना कहां तक उचित माना जा सकता है ! यह भयङ्कर अन्याय है। सर्वथा वर्ज्य है।

३. शुद्ध सामाजिक आधार पर भी उनका यह युक्तिवाद है कि ग्रन्थालय के संरक्षक तो समाज के ही एक अङ्ग हैं। वह समाज के ही एक अङ्ग का नमूना है। जब तक सारा समाज पूर्णतया पवित्र न हो जाए तब तक समाज को अपने में अपराधकुशल व्यक्तियों के रखने का दण्ड भोगना ही पड़ेगा। जीवन के सभी क्षेत्रों में उसे यह करना पड़ता है। तब वह ग्रन्थालय सेवा के सम्बन्ध में ही भिन्न प्रवृत्ति रखे यह कैसे संभव है ?

४. हमें यह ध्यान रखना चाहिए : सुरक्षित आसङ्ग प्रणाली में भी दुर्लभ, अमूल्य तथा अप्रतिमूर्ति ग्रन्थों के लिए तो आसङ्ग दिया ही नहीं जाएगा। हानि उन्हीं ग्रन्थों की संभव होगी जो सामान्य कोटि के होंगे। इन ग्रन्थों को किसी भी अर्थ में स्थायी नहीं कहा जा सकता। इनमें से कदाचित ही कोई ग्रन्थ ऐसा निकलेगा जो एक सौ बार अर्थात प्रायः दो वर्षों तक, लेन-देन में रह चुकने के बाद भौतिक दृष्टि से उपयोग के लिए समर्थ रह सके। उतने समय में अधिकतर ग्रन्थ तो प्रतिपाद्य विषय की दृष्टि से गतकाल हो जाएंगे। उन्हें कोई पूछेगा भी नहीं। यदि कोई ग्रन्थ २ या ३ वर्षों तक भली भांति सेवा कर चुका तो वह लेन-देन से बाहर निकलने के लिए तथा चिरावकाश पाने के लिए अधिकारी बन जाएगा। पुरानी विक्टोरियन विचारधारा तो यह थी कि ग्रन्थालय में जो भी कूड़ा-करकट, रद्दी का टुकड़ा आ जाए उसे परिगृहीत कर लिया जाए। एक

बार जहां उसका परिग्रहण कर लिया गया तो वह ग्रन्थालय की बहुमूल्य संपत्ति बन गया। उसे सदा-सर्वदा स्थायी रूप से सुरक्षित रखना ही पड़ेगा। इस विचारधारा का उद्गम स्थान ग्रन्थ-विषयक स्वत्व भावना है। यह मध्य युग मे उद्भूत हुई थी। उस समय 'ग्रन्थ' का बहुधा अर्थ होता था—हस्तलिखित अद्वय ग्रन्थ, जिसका आर्थिक मूल्य भी अत्यधिक होता था। अनेक दृष्टियों से वह मूल्यवान माना जाता था। किन्तु आज तो जमाना ही बदल गया है। अब तो ग्रन्थ धड़ाधड़ छपा करते हैं। उनका आर्थिक दृष्टि से भी कोई महत्त्व नहीं है। वे अद्वय भी नहीं हैं। वस्तुतः यदि देखा जाए तो, वे अपने प्रतिपाद्य विषय की दृष्टि से शीघ्र ही गतकाल हो जाते हैं, और उनके स्थान पर दूसरे नवीनतम ग्रन्थ समय समय पर आते रहते हैं। उन नये ग्रन्थों द्वारा वे स्थानच्युत कर दिए जाते हैं। पश्चिम के ग्रन्थालय-अधिकारी यह युक्तिवाद उपस्थित करते हैं कि जब कि आज सस्ती, शीघ्र और प्रभूत छपाई हो रही है, तब उन प्रवृत्तियों को रखने से क्या लाभ है जो आज से शताब्दियों पूर्व मुद्रण कला के आविष्कार से पहले प्रचलित थीं।

५. पश्चिम के सभी ग्रन्थालयों में तथा भारत के भी कतिपय ग्रन्थालयों मे आसङ्ग प्रणाली व्यवहृत की जा रही है। उसके व्यवहार के लिए उनके द्वारा एक युक्तिवाद यह भी उपस्थित किया जाता है। उनके उस व्यवहार की आधारभित्ति यह विचारधारा है कि ग्रन्थालय एक सामाजिक संस्था है। यह एक प्रकार का सामाजिक शक्ति-प्रतिष्ठान है जहां समाज के अङ्गभूत लोगों के मस्तिष्क को चेतना-शक्ति प्राप्त होती है। जो भाव-शक्ति ग्रन्थों मे संभाव्य अवस्था में निहित रहती है उसे ग्रन्थालय रूपान्तरित कर देते हैं, और गतिशील अवस्था में ला देते है। तभी वह शक्ति पाठक के मस्तिष्क को उचित उत्तेजना प्रदान कर सकती है और उसी के पश्चात् उसका मस्तिष्क सक्रिय बन सकता है। वही सक्रियता सहायक बन सकती है। तापवैगिकी का एक प्रसिद्ध सिद्धान्त है कि किसी भी शक्ति को सरलता

से उपलब्ध अवस्था में, शत प्रतिशत समर्थता के साथ रूपान्तरित नहीं किया जा सकता। अर्थात् थोड़ा बहुत क्षय तथा लोप होगा ही। प्रकृति के इस अटल सिद्धान्त से ग्रन्थालय बच नहीं सकता। यदि ग्रन्थों द्वारा समाज की सेवा करानी है, यदि उन्हें अपने कर्तव्य को पूर्ण करना है तो हमें उस विषय में होने वाली हानि के लिए भी प्रस्तुत रहना पड़ेगा। वह हानि दो प्रकार से हो सकती है। एक मुख्य हानि है उपयोग से उत्पन्न जीर्ण शीर्णता। दूसरी कुछ अंश तक होगी। वह हमारे ही कुछ भाइयों की नागरिक भावना से विरुद्ध अपराध प्रवृत्ति के कारण होगी। आसङ्ग प्रणाली को सर्वोच्च राष्ट्रिय मितव्ययिता के व्यापक प्रसङ्ग में देखना चाहिए। यदि आसङ्ग प्रणाली अपनाई गई तो जनता ज्ञान तथा विनोद की प्राप्ति अत्यन्त सरलता से कर सकेगी। इसकी सिद्धि से अत्यधिक मानव-घण्टों की बचत होगी। इस बचत के कारण राष्ट्रिय मितव्ययिता की बड़ी भारी पूर्ति होगी। यदि आसङ्ग प्रणाली को इस प्रकार व्यापक दृष्टि से देखा गया तो उसके स्वीकार से संभावित हानि सर्वथा नगण्य प्रतीत होगी।

६. आसङ्ग ग्रन्थालय में जो ग्रन्थ अनिवार्य रूप से नष्ट हो जाएं उनके मूल्य को नष्ट मानकर बाहर कर दिया जाए। यदि वार्षिक निर्गम तथा हानि का अनुपात १ ००० के पीछे १ की अपेक्षा अधिक बढ़ जाए तो उस मामले की जांच करनी चाहिए। हानि के कारण जानने चाहिएं और उनकी निवृत्ति करनी चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं होता कि कर्तृगण की ओर से प्रमाद की अनुमति मिल गई। इसका अर्थ यह भी नहीं होता कि हम ग्रन्थालयी को सब प्रकार के उत्तरदायित्वों से मुक्त करना चाहते हैं। यदि कर्तृगण की न्यायपूर्णता में सन्देह करने के प्रबल कारण उपलब्ध हों तो अवश्यमेव उन्हें निकाल बाहर करना चाहिए। यदि यह विश्वास करने के प्रबल कारण विद्यमान हों कि ग्रन्थालयी चोरी कर सकता है—उसकी सम्भावना है—तो इसमें किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती कि उसके साथ चोरों जैसा व्यवहार किया जाए।

४६५५ आसङ्ग

आज यदि अनिवार्य हानि के लिए ग्रन्थालयी को दंड दिया गया, यदि उसे मूल्य चुकाने के लिए बाध्य किया गया तो यह बड़ा भारी काल वैषम्य माना जाएगा। ठीक उसी प्रकार, यदि पाठक को कठघरे के उस ओर तब तक खड़े रहने के लिए बाध्य किया गया जब तक ग्रन्थालय का परिचारक ग्रन्थ ढूंढ न ले और उसे पाठक को पकड़ा न दे तो वह भी काल वैषम्य माना जाएगा। दोनों बातें पुराने युग की बीती कहानियां हैं। चाहे आसङ्ग दिया जाए अथवा नहीं, ग्रन्थों का नष्ट-भ्रष्ट होना अवश्यभावी है।

४६५५१ छेद-विच्छेद

पहले हम छेद-विच्छेद का ही विचार करें। कोई व्यक्ति ग्रन्थ को तभी बिगाड़ सकता है जब वह एकान्त में हो। पाठक ग्रन्थालय के ग्रन्थ को जब कभी पढ़ेगा और जहां कहीं भी पढ़ेगा— चाहे वह ग्रन्थालय हो अथवा उसका अपना घर—वह एकान्त में ही रहेगा। अध्ययनशाला में भी यह संभव नहीं है कि प्रत्येक पाठक पर निकट से अलग अलग निगरानी रखी जा सके। आसङ्ग प्रणाली के स्वीकार से ग्रन्थों के छेद-विच्छेद का अवसर अधिक मिलेगा यह कहना असङ्गत है। यदि पर्याप्त संख्या में अनुलय कर्तृगण का प्रबन्ध किया जाए और वे वैयक्तिक रूप से प्रत्येक पाठक की सहायता करें तो उससे हानि की संभावना अनेक रीति से कम हो जाएगी। पाठक भी चयनशाला में एकान्त न पा सकेंगे। कारण अनुलय कर्तृगण उनके पास ही रहेंगे। यदि पास न भी रहे तो पाठकों के मन में कम से कम यह भय तो बना ही रहेगा कि न जाने अनुलय कर्तृगण कब और कहां से आ धमकें। अनुभव द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि आसङ्ग ग्रन्थालय में छेद-विच्छेद किसी भी मात्रा में उस ग्रन्थालय से अधिक नहीं हो सकता जहां सब ग्रन्थों पर ताले पड़े हुए हों। इसका अर्थ यह होता है कि पाठकों को आसङ्ग की सुविधाओं से वञ्चित रखना किसी भी प्रकार छेद-विच्छेद को कम करने में सहायक नहीं हो सकता। इसे कम करने के लिए केवल एक ही उपाय काम में लाया जा सकता है। और वह यही है कि इस समस्या पर जनमत को जागृत किया जाए। इसके लिए सेव्यों के साथ वैयक्तिक

संपर्क स्थापित करना पड़ेगा। बीच बीच में सामूहिक संपर्क करने की भी आवश्यकता पड़ सकती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस रीति का परिणाम बहुत समय के बाद प्रकट होगा। इसके लिए सतत अध्यवसाय और लगन की आवश्यकता पड़ेगी। किन्तु इसका सुपरिणाम ध्रुव है। किसी भी अवस्था में यह तो उचित नहीं ही है कि छेद-विच्छेद को आसङ्ग के विरुद्ध युक्ति के रूप में प्रस्तुत किया जाए।

४६५५२ ग्रन्थ पक्ष से विमृष्ट हानि

जहां तक हानि का सम्बन्ध है, यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है कि आसङ्ग के साथ हानि का भी भय बढ़ जाता है। यदि बिना विचारे, अविवेक पूर्वक, सुरक्षा की व्यवस्था किए बिना ही आसङ्ग प्रणाली का स्वीकार कर लिया गया तो हानि का परिमाण भयानक हो जाए यह संभव है। किन्तु पिछले ५० वर्षों में ग्रन्थालय व्यवसाय ने सुरक्षित आसङ्ग प्रणाली का व्यवहार करना आरम्भ कर दिया है, और उसका परिणाम भी बड़ा अच्छा सिद्ध हुआ है। सुरक्षाएं निम्नलिखित हैं :—

१. ग्रन्थालय में प्रवेश तथा उससे निर्गमन केवल यान्त्रिक द्वार के द्वारा ही होंगे। वे यान्त्रिक द्वार लेन-देन कर्तृगण के नियन्त्रण में रहेंगे।

२. खिड़की, दरवाजे, रोशनदान आदि अन्य सभी खुले भाग लोहे की महीन जालियों से बन्द कर दिए जाएंगे। फल यह होगा कि किसी को ग्रन्थ बाहर उछाल फेंकने का लोभ ही न उत्पन्न होगा।

३. अलभ्य, विशिष्ट मूल्य वाले तथा अतिमुद्रण ग्रन्थ पृथक् कक्षा में रखे जाएं जहां कोई बिना विशिष्ट अनुमति के पहुँच ही न सके।

४. विशिष्ट प्रकार के पाठ्य ग्रन्थ तथा कुछ सामान्य ग्रन्थ, जो कुछ समय के लिए परीक्षा आदि की दृष्टि से असामान्य महत्त्व के हो जाते हैं, तथा जिनके लिए क्षणिक भूत सवार हो जाया करते हैं, ऐसे ग्रन्थों को भी पृथक् कर देना चाहिए तथा केवल मांग-पत्र लेकर ही देना चाहिए।

५. इसी प्रकार अल्पाकार पुस्तिकाओं को भी अलग कर देना चाहिए, अन्यथा वे सरलता से छिपा ली जाएंगी और बाहर चली जाएंगी।

इतनी चर्चा तो ग्रन्थों की ओर से हुई। अब हम मानवों की ओर से भी विचार करें।

४६५५३ मानव पक्ष से विसृष्ट हानि

पाठकों को तीन कक्षाओं में विभाजित किया जा सकता है। जो सर्वथा सच्चरित पक्के ईमानदार तथा धर्मभीरु हैं वे एक छोर पर हैं। दूसरे छोर पर वे हैं जो पक्के अपराधी, छटे हुए बदमाश और प्रसिद्ध चोर हैं। उनका किसी प्रकार सुधार ही नहीं किया जा सकता। ये तो हुए दो छोर। किन्तु उसके बीच जनता का अधिकतम अंश रहता है। वे दोनों के सन्धि भाग में रहते हैं। यदि आसङ्ग प्रणाली का स्वीकार भी किया गया तो प्रथम कोटि के लोग तो हानि में लेश मात्र भी वृद्धि नहीं कर सकते। अन्तिम कोटि के लोग तो आसङ्ग के बिना भी अपने हथकंडे दिखाने से विरत न होंगे। अतः समस्या तो केवल उन लोगों से सम्बन्ध रखती है जो अधिक संख्या में हैं और जो स्वभावतः न तो पुण्यात्मा ही हैं और न पापी ही। ग्रन्थालय व्यवसाय ने अनुभव द्वारा यह सिद्ध पाया है कि इस विशाल वर्ग को सच्चरित्रता के पक्ष में रखा जा सकता है। किन्तु इसके लिए कुछ अभिसंधियां हैं। सबसे पहली बात तो यह है कि ग्रन्थालय अवकाश दिनों में भी खुला रखा जाए, अधिक समय तक, विशेष कर कालेज बन्द रहने के समय खुला रक्खा जाए। इससे उन्हें यह विश्वास रहेगा कि जब कभी उन्हें ग्रन्थ पढ़ने की इच्छा उठेगी तभी वे ग्रन्थ पढ़ सकेंगे। दूसरी बात जो उन्हें ग्रन्थालय का मित्र बना सकती है वह यह है। वैयक्तिक एवं सहानुभूतिपूर्ण रीति से उनकी ओर ध्यान दिया जाए। तत्परता के साथ उनकी यथार्थ सेवा की जाए। तीसरी सहायक बात यह हो सकती है कि फलकों पर ग्रन्थों का सहायभूत क्रम में व्यवस्थापन किया जाए। इसके साथ ही साथ भूमि, अन्तर्मार्ग, खात तथा फलक के लिए सभी प्रकार के दर्शक प्रभूत मात्रा में लगे हुए हों। यदि पूर्वोक्त सहायताओं की व्यवस्था न की गई, यदि उनका अभाव रहा तो परिणाम यह होगा कि मन-उल्लास नष्ट हो

जाएगा। सौमनस्य की हत्या हो जाएगी। फलतः दुष्टताएं और दुराचार अपना वर्चस्व जमाने लगेंगे। इनसे बचना ही चाहिए।

इन बातों के साथ साथ यह भी आवश्यक है कि चयनशाला तथा लेन-देन स्थान दोनों जगहों पर पर्याप्त देख भाल रखी जाए। निम्नलिखित सुरक्षाएं आवश्यक हैं :—

(१) ग्रन्थों का सहायभूत वर्गीकृत व्यवस्थापन;
(२) सहायभूत दर्शक;
(३) सहायभूत अनुलय सेवा;
(४) देखभाल के लिए आवश्यक कर्तृगण;
(५) जनमत और जनस्नेह की अभिवृद्धि; तथा
(६) ग्रन्थालय के कार्य घंटों का और कार्य दिनों का विस्तारण।

४६६ संपुटन

प्रदर्शन कार्य का एक महत्त्वपूर्ण अङ्ग यह है कि ग्रन्थों को भौतिक दृष्टि से समर्थ अवस्था में रखा जाए। व्यक्तिगत उपयोग के लिए, अर्थात् कभी कभी के उपयोग के लिए, किए जाने वाले कलापूर्ण संपुटन का स्तर बहुत ही ऊंचा होता है। किन्तु जो सब प्रकार के संघर्ष को सह सके, ऐसा सबल ग्रन्थालय संपुटन अब तक भारतवर्ष में बहुत कम देखा जाता है। इसकी प्रथा ही कहीं नहीं पाई जाती। 'स्प्लिट बोर्ड' तथा 'फ्रेन्च जॉइन्ट' जैसे शब्द भी लोगों को ज्ञात नहीं हैं। श्रेष्ठ प्रकार का आवश्यक सामान भी सरलता से प्राप्त नहीं होता। अतः यह आवश्यक है कि ग्रन्थालय संपुटन के लिए अतिविस्तृत निर्धारण दिया जाए। संपुटक से ही कहा जाए कि वह ग्रन्थालयों से साक्षात वैयक्तिक सम्भाव ले ले। यही नीति अच्छी है। डगलस कॉकरेल के 'ग्रन्थ संपुटन के कुछ टिप्पण' (*Some notes on book binding*) जैसे ग्रन्थों में आवश्यक विवरण प्राप्त हो सकते हैं। हमने इस ग्रन्थ की अंग्रेजी आवृत्ति में प्रस्तुत अनुसन्धान के लिए ग्रन्थालय संपुटन के लिए निर्धारण दिया है। प्रत्येक ग्रन्थालय को चाहिए कि अपने कर्तृगण में से किसी एक को छोटे मोटे सुधार

करने की दीक्षा दिला दे। समय पर लगाया हुआ एक सीवन नव का काम करता है—यह कहावत प्रसिद्ध ही है।

४६६१ क्षत-विक्षत ग्रन्थ

लेन-देन कर्तृगण को चाहिए कि क्षत-विक्षत ग्रन्थों को सुधार आदि के लिए अलग रख दे। इसे हम ३३०३१ तथा ३३२८३ अनुच्छेदों में बता ही चुके हैं। यह भी वाञ्छनीय है कि चयनशाला में चारों ओर घूमा जाए तथा उन ग्रन्थों को बाहर निकाल लिया जाए, जिनका पुनः संपुटन आवश्यक हो। जो ग्रन्थ प्रकाशित होने के समय अच्छी तरह संपुटित न हो, उन ग्रन्थों का संपुटन साधारणतः दो अवसरों पर किया जा सकता है। एक पक्ष यह है कि ज्योंही ग्रन्थ आए, त्योंही लेन-देन के लिए मुक्त करने के पूर्व ही, ग्रन्थालय संपुटन के निर्धारण के अनुसार उसे संपुटित करवा लिया जाए। दूसरा पक्ष यह है कि जब प्रकाशक का निबल संपुटन जीर्ण-शीर्ण हो जाए, उसके पश्चात्। प्रत्येक ग्रन्थालय इस विषय में अपनी स्वतन्त्र नीति स्थिर कर सकता है। हमारा मन्तव्य तो यह है कि यदि दूसरे पक्ष को स्वीकार किया गया तो ग्रन्थ का जीवन-काल अधिक दीर्घ हो जाएगा। यदि हम प्रकाशकों से ग्रन्थों को असंपुटित पत्रों के रूप में ही प्राप्त कर सकें तो बड़ा अच्छा हो। हमने नार्वे में यह देखा है कि वहाँ कोई भी प्रकाशक ग्रन्थों को असंपुटित रूप में भेजने के लिए तैयार नहीं होता। हमने वहाँ देखा कि ज्योंही ग्रन्थालय में ग्रन्थ आते, त्योंही उनके निर्बल संपुटनों को ग्रन्थालय निर्देशक निर्दयतापूर्वक उधेड़ फेंकवाता। इस उधेड़ फेंक के लिए भी उसने अनेक कर्तृगण लगा रखे थे। किसी भी अवस्था में यह उचित नहीं है कि साधारण कागज में आबद्ध ग्रन्थों को संपुटित करने के पूर्व उपयोग के लिए मुक्त किया जाए। साथ ही यह भी ठीक है कि प्रत्येक ग्रन्थ के लिए बहुमूल्य ग्रन्थालय संपुटन की आवश्यकता न पड़े। जो ग्रन्थ क्षणिक अस्थायी अभिरुचि के हों, विशेषकर साधारण उपन्यास आदि जो रद्दी कागज पर छपे हों, उन्हें ग्रन्थालय की शैली में संपुटित करने की अपेक्षा उनकी नई प्रतियों को खरीद लेना योग्यतर सिद्ध होगा। यह सस्ता भी पड़ेगा।

४६६२ संपुटन के लिए ग्रन्थ

संभवतः संपुटन कार्य को मासिक आधार पर करना सर्वोत्तम होगा। ज्योंही मास का अभ्यंश एकत्रित कर लिया जाए, त्योंही उन ग्रन्थों को वर्गीकृत क्रम में व्यवस्थापित कर लिया जाए। उनके फलक पञ्जिका पत्रकों को पृथक् कर उनकी एक संपुटन कक्षा बना लेनी चाहिए। संपुटन की विशेषताओं का ध्यान रखते हुए उनका परीक्षण करना चाहिए, और उन्हें सजातीय वर्गों में रखना चाहिए। प्रत्येक वर्ग में ग्रन्थ अनुवर्ग क्रम में ही रहने चाहिएं। प्रत्येक ग्रन्थ के लिए संपुटन पत्रखंड लिखना चाहिए। इन पत्रखंडों की सहायता से उनके संपुटन के लिए एक एक आदेश-पत्र बना लेना चाहिए। संपुटक को ग्रन्थालय में बुला लेना चाहिए और उसे संपुटों का संपरीक्षण करने के लिए कहना चाहिए। यदि किसी संपुट में दोष हो तो यह विचारना चाहिए कि वह संपुटन के योग्य है भी अथवा नहीं। यदि वह योग्य है तो उसके दोष को संपुटन पत्रखंड में लिख देना चाहिए। संपुटक को संपुट दे देने चाहिएं। पत्रखंडों को संपुटन मञ्जूषा में रख देना चाहिए।

४६६३ संपुटित संपुट

संपुटन कार्य का सीवन कर्म ज्योंही समाप्त हो त्योंही संपुटन विभाग में जाकर ग्रन्थों को देखना चाहिए। इस बात का समाधान कर लेना चाहिए कि सारे निर्धारणों का पूर्णतया पालन किया गया है। जब ग्रन्थ संपुटित होकर ग्रन्थालय में आ जाएं तब संपुटन पत्रखंडों से उनका मिलान करना चाहिए। यह भी देख लेना चाहिए कि पृष्ठ मुद्रण ठीक है। ग्रन्थों को उनके उचित स्थानों में अन्तर्निविष्ट कर देना चाहिए। संवादी फलक पत्रकों को भी उनके उचित स्थानों में लगा देना चाहिए। संपुटक के देयपत्र का मिलान कर लेना चाहिए और यह देखना चाहिए कि संपुटन की शैली तथा मांगा हुआ मूल्य उचित एवं अनुरूप है। जब सब वस्तुएं संगत प्रतीत हों तो देय-पत्र को मूल्य चुकाने के लिए स्वीकृत कर देना चाहिए।

४७ अर्थ तथा आय-व्यय लेखा

सर्वजन ग्रन्थालयों के सम्बन्ध में अर्थ की व्यवस्था करना, उसे लगाना, कोष रखना, स्थावर संपत्ति का प्रबन्ध करना, आय-व्यय के लिए अनुमति पाना आदि सभी आर्थिक समस्याओं को हल करने का उत्तरदायित्व साधारणतः स्थानीय समष्टि पर ही होता है। कारण वही स्थानीय ग्रन्थालय अधिकारिणी होती है। तथापि अर्थ से सम्बद्ध कुछ कार्य तो ऐसे होते ही हैं जो ग्रन्थालय के ही हिस्से में आते हैं। ग्रन्थालय को ही उन्हें करना पड़ता है। ग्रन्थालय को आय-व्ययक के निर्माण में आरम्भिक कार्य तो करना ही पड़ता है। इसे स्थानीय समष्टि के स्थायी आदेशों के अनुसार ही करना पड़ेगा। आय-व्यय लेखे के सम्बन्ध में भी यही बात है। हम यहाँ उन्हीं विषयों की चर्चा करेंगे जो प्राथमिक आय-व्यय लेखे से सम्बन्ध रखते हैं तथा जो ग्रन्थालय कर्तृगण द्वारा ही किए जा सकते है। उनमें भी हमारी चर्चा केवल उन्हीं विषयों तक सीमित रहेगी जो स्पष्टतया ग्रन्थालय के ही स्वभावसिद्ध माने जा सकें। वेतन देय-पत्र, स्थायी अग्रिम (पेशगी), मिश्र प्राप्ति आदि से सम्बद्ध वस्तुओं का नियन्त्रण स्थानीय समष्टि द्वारा स्वीकृत एवं सूचित स्थायी आदेशों के द्वारा ही किया जाएगा।

४७१ दोहरा मूल्य चुकाना

इस सम्बन्ध में अनेक भयस्थान हैं। उनसे बचना चाहिए। उनमें एक प्रधान यह भी है कि दोहरा मूल्य चुकाने को रोका जाए। ग्रन्थ और सामयिक तो वर्ष भर आते रहेंगे। अतः दोहरा मूल्य चुकाने से बचने के लिए कुछ विशेष प्रयत्न करने ही पड़ेंगे। किसी एक स्वयंजात रोक का आविष्कार करना ही पड़ेगा, जो स्मृतिमात्र पर अवलम्बित न हो। ग्रन्थों के सम्बन्ध में तो ग्रन्थ आदेश-पत्रक ही रोक के प्रबल साधन प्रमाणित हो सकेंगे। इस विषय का वर्णन अनुच्छेद ४२३ में किया ही जा चुका है। यदि कोई ग्रन्थ ग्रन्थालय में आए और उसका आदेश पत्रक वहाँ न मिले तो हमें उस ग्रन्थ का स्वीकार करने के लिए बिना विचारे, एक नया पत्रक न बना लेना चाहिए। हमें अपने पत्रक अनुयोग में पर्याप्त विश्वास रखना चाहिए। इस प्रकार की प्रणाली

तभी सफलतापूर्वक चल सकती है जब प्रत्येक परिपाटी को प्रत्येक अवस्था में पूर्णतया और ईमानदारी के साथ पूरा किया जाए। यदि आदेश पात्रक में पत्रक न हो तो यह मान लेना चाहिए कि वह ग्रन्थ पहले ही आ चुका था और उसका आदेश पत्रक उसी समय बाहर निकाल दिया जा चुका था। यह संभव है कि या तो वह प्रचलित सप्ताह के आगमों की संवादी कक्षा में पड़ा हुआ हो, अथवा उसे पहले ही परिगृहीत पत्रक बना दिया जा चुका हो और अब वह अपने उचित स्थान में अनुयुक्त हो। यदि दूसरी बात सच हो तो पत्रक स्वयं बता देगा कि उसका मूल्य कब चुकाया गया था तथा उस मूल्य चुकाने के प्रमाणक की संख्या क्या है। सामयिकों के सम्बन्ध में, यदि अनुच्छेद ४३६३ में बताई हुई परिपाटी का सत्यतापूर्वक पूर्णतया परिपालन किया गया तो दोहरा मूल्य चुकाना रोका जा सकेगा।

४७२ देयपत्र पञ्जिका

जो पूर्तियाँ दिन प्रतिदिन पृथक् पृथक् रूप में आया करती है, उनके विषय में एक भयस्थान यह भी है। कुछ पूर्तियाँ ध्यान से उतर जाती हैं और उनका मूल्य कभी चुकाया ही नहीं जाता। अथवा यदि चुकाया भी जाता है तो बड़े विलम्ब के पश्चात्। इस दोष को दूर करने के लिए सर्वश्रेष्ठ मार्ग यह है कि एक सुपरिकल्पित देयपत्र पञ्जिका रखी जाए। ज्योंही देय-पत्र प्राप्त हों प्रत्येक देय-पत्र के साथ उसकी प्रतिलिपि, यदि हो तो जोड़ देनी चाहिए। देय पत्रों को उन व्यापारियों के अनुसार व्यवस्थित कर लेना चाहिए, जिन्हें मूल्य चुकाया जाने वाला हो। प्रत्येक व्यापारी के समूह में देयपत्रों को उन आदेशों की संख्या के अनुसार लगा देना चाहिए जिनसे वे (देयपत्र) सम्बद्ध हों। इस कार्य को सरल बनाने के लिए व्यापारियों से कह देना चाहिए कि वे किसी एक देय पत्र में एक से अधिक आदेशों से सम्बद्ध पूर्तियों को न समाविष्ट करें। अब देयपत्रों का जो क्रम बन जाए उसी के अनुसार उनका पञ्जीयन कर दिया जाए। देयपत्र तथा उसकी प्रतिलिपि के दक्षिण सिरे के किनारे पर पञ्जिका संख्या लिख देनी चाहिए। इसके पश्चात् मूल्य चुकाने का कार्य किया जाता है। यह कार्य ग्रन्थों के लिए आदेश पत्रकों के तथा सामयिकों के लिए पञ्जिका पत्रकों के अनुसन्धान

से किया जाता है। अनुच्छेद ४७३ तथा ४३६३ में इनका वर्णन किया गया है।

४७३ देयपत्रों का व्यवस्थापन

एक व्यापारी को चुकाये जाने वाले सभी देयपत्रों को एक साथ बांध देना चाहिए। प्रत्येक देयपत्र के संकलन की जांच कर लेनी चाहिए। देयपत्रों के गुच्छक के अन्तिम पत्र की पीठ पर प्रत्येक पत्र के सङ्कलन को क्रमशः लिखना चाहिए। सारी संख्याओं की जोड लगा देना चाहिए। अङ्कों का लेखन तथा सर्वसङ्कलन दूसरे व्यक्ति द्वारा परीक्षित करा लेना चाहिए। यदि दूसरा व्यक्ति न हो तो स्वयं ही करना चाहिए, किन्तु किसी दूसरे समय। यह कार्य देयपत्रों की मूल प्रति तथा प्रतिलिपि दोनों के लिए करना चाहिए। यदि किसी देयपत्र की प्रतिलिपि न हो तो उसे बना लेना चाहिए। देयपत्रों के गुच्छक के अन्तिम पत्र पर सुविधापूर्ण स्थान में आदेश मुद्रा लगा देनी चाहिए। गुच्छक के प्रत्येक पत्र के तलभाग में "प्रमाणक संख्या · · · · में समाविशित" यह मुद्रा भी लगा देनी चाहिए। मूल्यदान आदेश मुद्रा में लेखनीय स्थान पर रकम को शब्दों में भी लिख देना चाहिए। देयपत्र की कार्यालय प्रतिलिपि के अन्त में मूल्यदान आदेश लिख देना चाहिए। यदि रकम के भेजने का कोई व्यय हो तो उसे भी समाविष्ट कर लेना चाहिए। मूल्य-दान के प्रकारभेद तथा रकम के अनुसार किसी सुविधापूर्ण क्रम में सभी गुच्छकों को व्यवस्थित कर लेना चाहिए।

४७४ प्रमाणक

मूल्यदान पञ्जिका में पृथक् पृथक् रेखाओं में क्रमानुसार प्रत्येक गुच्छक लिख देना चाहिए। उस मूल्यदान पञ्जिका में जो क्रम-संख्या प्रत्येक गुच्छक को मिलती है वह उसकी प्रमाणक संख्या कही जाती है। देयपत्रों के प्रत्येक गुच्छक की मूल प्रति तथा कार्यालय प्रति दोनों पर, तथा प्रत्येक गुच्छक के प्रत्येक पत्र के तल भाग में उस प्रमाणक संख्या को लिख देना चाहिए। इसके पश्चात् उस प्रमाणक का मूल्य दान किया जा सकता है। प्रमाणक संख्या प्रत्येक आर्थिक वर्ष के आरम्भ में '१' से प्रारम्भ होती है।

४७५ प्रमाणक संख्या का अन्यत्र लेखन

यही अवसर है जब कि ग्रन्थों के समस्त परिग्रहण पत्रकों पर तथा सामयिकों के पञ्जिका पत्रकों पर यथायोग्य रीति से प्रमाणक संख्या लिख देनी चाहिए।

४७६ भागहरण पञ्जिका

यह आवश्यक है कि ग्रन्थों एवं सामयिकों के लिए जो मूल्य चुकाया जाए, उसकी प्रगति पर पूर्ण ध्यान रखा जाए। अन्यथा यह सम्भव है कि प्रत्येक विषय के लिए दी हुई रकम से अधिक व्यय हो जाए। इसके नियन्त्रण के लिए यह व्यवस्था की जाती है कि एक विशिष्ट भागहरण पञ्जिका रखी जाए। उसमें विभिन्न विषयों के के लिए जो प्रमाणक हों, उनकी रकमों को ग्रन्थ तथा सामयिक इन दो मदों में लिखते जाना चाहिए।

४७७ प्रपत्र तथा पञ्जिकाएं

स९७७१ देयपत्र पञ्जिका मुद्रित. १० पॉइन्ट टाइप. ५१ पाउण्ड छपाई कागज. श्वेत. संपुटित पुस्तक. फोलियो (खुले दो पृष्ठ) पृष्ठाङ्कन. प्रति पृष्ठ ३० रेखाएं. स्तम्भ शीर्षक तथा उसके ऊपर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

(ग्रन्थालय का नाम)······ में प्राप्त देयपत्रों की पञ्जिका

देयपत्र की पञ्जिका सं. (½"); देयपत्र की प्राप्ति तिथि ½"); बाह्य तिथि (½"); बाह्य संख्या (½"); प्राप्तिस्रोत (२") उद्देश्य—ग्रन्थ अथवा सामयिक तथा मुख्य वर्ग चिह्न (१½"); रकम (१"); हस्ताक्षर (½"); रकम (१"); विकर्ष (ड्राफ्ट) मांग तिथि; हस्ताक्षर (½"); विकर्ष इत्यादि सं. तथा तिथि (½"); विकर्ष प्राप्ति तिथि; हस्ताक्षर (½"); पो. ऑ.. म. ऑ.. सं. (½"); प्रेषण तिथि; हस्ताक्षर (½"); स्वीकृति स्मारक तिथि; हस्ताक्षर (½"); स्वीकृति प्राप्ति तिथि; हस्ताक्षर (½"); स्वीकृति अनुयोग, हस्ताक्षर (½"); विशेष.

स९७७२ मूल्यदान पञ्जिका. (ग्रन्थ तथा सामयिक). मुद्रित. १० पॉइन्ट टाइप. लेजर कागज. श्वेत. संपुटित पुस्तक. फोलियो (खुले

दो पृष्ठ) पृष्ठाङ्कन. प्रति पृष्ठ २० रेखाएं। स्तम्भ शीर्षक तथा उसके ऊपर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित है :—

(ग्रन्थालय का नाम) मूल्यदान पञ्जिका—ग्रन्थ तथा सामयिक (वर्ष)

तिथि (½"); प्रमाणक सं. (½"); देयपत्र सं. (½"); देयपत्र तिथि (½"); व्यापारी तथा स्थान (३½"); ग्रन्थ (२"); सामयिक (२"); विषय चिह्न (३"); विशेष.

स९७७६. भागहरण पञ्जिका. मुद्रित. १० पॉइन्ट टाइप. २१ पाउण्ड छपाई कागज; श्वेत. संपुटित पुस्तक. फोलियो (खुले दो पृष्ठ) पृष्ठाङ्कन. प्रतिपृष्ठ ३० रेखाएं. स्तम्भ शीर्षक तथा उसके ऊपर मुद्रणीय विषय निम्नलिखित हैं :—

(ग्रन्थालय का नाम) भागहरण पञ्जिका (वर्ष) मास तथा सप्ताह (½"); प्रमाणक सं. (½"); विभिन्न चलार्थ (Currency), जिनमें मूल्यदान मांगा गया है (प्रत्येक चलार्थ के लिए १"), विभिन्न चलार्थ, जिनमें सामयिकों के लिए मूल्यदान मांगा गया है (प्रत्येक सामयिक के लिए (१"); संकलन (प्रत्येक चलार्थ के लिए १"); विशेष.

प्रत्येक विषय के लिए एक फोलियो पृष्ठ दिया जाना चाहिए। विषय नाम के अनन्तर ही पृष्ठभागहरण लिखा जाना चाहिए।

४८ अनुयोग

विभिन्न प्रकार के अनुयोगों के लिए वर्ग संख्याएं अध्याय ३ के अनुच्छेद ३८ में दी गई हैं; तथा अध्याय ४ में उन अनुच्छेदों के अन्त में दी गई हैं जिनकी संख्याओं के अन्त में ८ अङ्क है। ये संख्याएं वे ही हैं. जो हमारे 'ग्रन्थालय प्रबन्ध' में (*Library administration*) दी हुई हैं। जहाँ कहीं अनुयोग संख्या के आगे 'विषय युक्ति' यह जोड़ा गया है, वहाँ उसका अर्थ यह मानना चाहिए कि उस संख्या को सम्बद्ध विषय की वर्ग संख्या से विस्तारित कर दिया जाए। उदाहरणार्थ, आदेश अनुयोगों की संख्या २३ है। २३फ का अर्थ होगा—

दर्शन के ग्रन्थों से सम्बद्ध आदेश अनुयोग। इसी प्रकार वर्तमान सामयिकों से सम्बद्ध अनुयोगों की संख्या ३४ है। अतः दर्शन के वर्तमान सामयिकों से सम्बद्ध अनुयोगों की वर्ग संख्या ३४फ होगी। स्थायी विक्रेताओं से सम्बद्ध अनुयोगों की संख्या २१ है। अतः संस्कृत ग्रन्थों के स्थायी विक्रेताओं से सम्बद्ध अनुयोगों की संख्या २३न१५ होगी। अनुयोग के सिद्धान्तों का संपूर्ण वर्णन हमारे 'ग्रन्थालय प्रबन्ध' के (*Library administration*) अनुच्छेद ०८ में पाया जा सकेगा।

अध्याय ५

वर्गीकरण

अनुच्छेद ५१ में द्विबिन्दु पद्धति के अनुसार वर्ग संख्याएं दी गई हैं। इसमें केवल वे ही विषय दिये गए हैं जो साधारण हिन्दी ग्रन्थालयों में पाये जा सकते हैं। अन्य विषयों के वर्गीकरण के लिए प्रस्तुत ग्रन्थ की अंग्रेजी आवृत्ति अथवा 'द्विबिन्दु वर्गीकरण' (*Colon classification, edn 3, 1950, Rs. 12*) का उपयोग किया जा सकता है।

अनुच्छेद ५२ मे सामान्य उपभेदों की तालिकाएं दी गई हैं।

अनुच्छेद ५३ से ५५ तक में प्रादेशिक क्षेत्रों की. भाषाओं की तथा काल भेदों की तालिकाओं में से भागोद्ग्रह किये गए हैं।

अनुच्छेद ५६ में पुस्तक संख्या (चिह्न) की चर्चा की गई है।

अनुच्छेद ५७ में उपर्युक्त तालिकाओं का उपयोग दिखाया गया है।

वर्गसंख्या ५१

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
	सर्व		
१	वाङ्मय सूचि	२:५१	वर्गीकरण
२	ग्रन्थालय शास्त्र	२:५५	सूचीकरण
२:४	सञ्चालन	२:६	लेन-देन कार्य

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
२:७	अनुलय सेवा	ऊ६२२	शांकव गणित
२११	राष्ट्रिय ग्रन्थालय	ऊ६२२:२	वैश्लेषिक
२२	सर्वजन ग्रन्थालय	ऊ७	वैगिकी
२२१	ग्रामीण ग्रन्थालय	ऊ७१	घन
२२५	नगर ग्रन्थालय	ऊ७१:२	गति
२५१	बाल ग्रन्थालय	ऊ७१:३	स्थिति
२५४	चिकित्सालय	ऊ७५	तरल
	ग्रन्थालय	ऊ७५:२	जल गति
३	विश्व कोष	ऊ७५:३	जल स्थिति
४	संस्था	ऊ९	ग्रहगणित
५	सामयिक	ऊ९:१	कालमान
६३	प्रदर्शनी	ऊ९:१७	पञ्चाङ्ग
६४	अद्भुतालय	ऊ९:१८	युग
७	चरित	ऊ९:८	विश्वोत्पत्ति
८	वार्षिक ग्रन्थ	ऊ९१	पृथ्वी
९	कृति	ऊ९२	चन्द्र
इ	**शास्त्र (सामान्य)**	ऊ९३	सूर्य
ऊ	**गणित**	ऊ९४	ग्रह
ऊ१	अङ्कगणित	ऊ९५	केतु तथा धूमकेतु
ऊ२	बीज गणित	ऊ९६	नक्षत्र
ऊ३	विश्लेषण	**क**	**वस्तु शास्त्र**
ऊ३२	कलन	कसं८	व्यावहारिक
ऊ३२१	चलन कलन	क२	द्रव्य गुण
ऊ३२५	चलराशिकलन	क२१	घन
ऊ५	त्रिकोण मिति	क२१६	मणिभ
ऊ६	रेखागणित	क२५	तरल
ऊ६:ऊ१	मापिकी	क३	ध्वनि
ऊ६२	समतल	क४	ताप
ऊ६२:६	वैश्लेषिक	क५	विकिरण

वर्गसंख्या	विषय
क५१	तेजस्
क५२	नीललोहितोत्तर किरण
क५३	क्ष-किरण
क५६	उपरक्त किरण
क६	विद्युत्
क६२	धारा
क६३	स्थितीय
क७	चुम्बकत्व
कथ०	सापेक्षवाद
ख	**यन्त्र कला**
ख१	निर्माण
ख२	सेचन
ख३	खनि
ख४	यान (मार्ग)
ख४११	राजपथ
ख४१५	रेलमार्ग
ख४२:८	बन्दरगाह
ख५	यान (रथ)
ख५२५	जल-पोत
ख५२५४	अन्तर्जल पोत
ख५३	आकाश यान
ख५३१	संचाल्य
ख५३५	वायुयान
ख६	मशीन यन्त्रकला
ख६:६	मशीनरी
ख६:७	साधारण मशीनरी
ख६४	ताप यन्त्र
ख६४१	वाष्प यन्त्र
ख६४५	वरीवर्त
ख६४६	अन्तर्दाह यन्त्र
ख६६	विद्युत् यन्त्रकला
ख६६:५	प्रकाशन
ख६६३	ऋजुवाह
ख६६४	एकान्तरवाह
ख६६५	मन्दवाह
ख६६५:४७	दूरलेखन
ख६६५:४८	दूरभाषण
ख६६६	बेतार
ख६६६:४५	दूरवीक्षण
ख६६६:४८५	आकाशवाणी
ख७	अणुशक्ति
ख८	नगर एवं स्वास्थ्य यन्त्रकला
ख८५	जल पूर्ति
ख८५१४	अन्तर्भूमि
ख८५१४१	कूप
ख८५१४४	नलकूप
ख८५१७	नदी
ख८५१८	जलाधार, तालाब, झील
ख८५४	दूषण
ख८५५	शोधन
ख८५६४	प्रणाल
ख८५६४१	प्रधान प्रणाल
ख८५६४५	गृहसम्बन्ध
ख८५६६८	अपव्यय की रोक
ख८६	मलप्रवाह

वर्गसंख्या	विषय
खट६१	गृह सम्बन्ध
खट६४	मल प्रणाल
खट६५	उदञ्चन प्रतिष्ठान
खट६६	मलप्रवाह समापन
खट६६२	सेचन मलप्रवाह क्षेत्र
खट६६५	शोधन
खट६६६	विषाक्त तालाब
खट८	नगर का कूड़ा करकट
खट८२	गृह संग्रह
खट८५	पथ शोधन
खट८६	अवकर समापन
ग	**रसायन शास्त्र**
ग:१	सामान्य
ग:२	पार्थिव
ग:२२	विलयन
ग:२३२	श्लेषाभ
ग:२४	ताप रसायन
ग:२५	प्रकाश रसायन
ग:२६	विद्युत रसायन
ग:२७	चुम्ब रसायन
ग:२८	आकाशीय रसायन
ग:३	विश्लेष रसायन
ग:४	संश्लेष
ग:५	निष्कर्षण
ग:७	देह रसायन
ग:८	निर्वाहण

वर्गसंख्या	विषय
ग१	अप्रांगार रसायन
ग३	अम्ल
ग४	लवण
ग५	प्रांगार रसायन
ग६८	प्रांगादीय (कार्बो-हाइड्रेट)
ग६८६२	माड़
ग७	सुरभि द्रव्य
ग९	देहतत्त्व
ग९२	क्षारोद
ग९२ह	प्रोटीन
ग९४	वसा, चर्बी
ग९५	रंगा
ग९७	जीवतत्त्व (विटामिन)
घ	**रसायन कला**
घ१८२	लोह
घ१९१	धातु कला
घ४४१६	आकाच (एनामेल)
घ१२७	सेल्युलाइड
घ१३	खाद्य
घ५१	सुषव
घ५४७	मदिरा
घ५४८	यवसुरा
घ५५	इन्धन
घ५५१	इंगालक
घ५५५	मृत्तैल
घ५५५२	मार्तैल (पट्रोल)
घ५५६१	दियासलाई
घ५५९४	उत्स्फोट

वर्ग.संख्या	विषय
घ५६	भेषज
घ५७३	कृत्रिम कौशेय
घ५८	रंजक
घ५८६५	रंगलेप
घ५६४	विष
घ६४६१	मोमबत्ती
घ६४६६	साबुन
च	**जीवशास्त्र**
च:१६	अणुवीक्ष
च:२	अंग विन्यास
च:३	शरीर क्रिया
च:३३	चयापचय
च:३४६	उपवास
च:३६४	श्रान्ति
च:५	पारिस्थिकी
च:५६३	परजीवन
च:५८	देशान्तरगमन
च:६	जनन
च:६१	पैत्रकता
च:६४	प्रसंकरण
च:६६	विकास
च:६७	प्रजनन
च:७	व्यक्ति चरित (ऑन्टोजेनि)
च१	जीवन
च११	कोशा
छ	**भूगर्भ शास्त्र**
छ१	खनिज शास्त्र
छ१६	रत्न
छ२	स्तर शास्त्र

वर्गसंख्या	विषय
छ३	रचनात्मक भूगर्भ शास्त्र
छ३६	पर्वतनिर्माण
छ४	गत्यात्मक भूगर्भ शास्त्र
छ४११	ज्वालामुखी
छ४१३२	भूकम्प
छ६	पुरासात्विकी
छ७	आर्थिक भूगर्भ शास्त्र
छ७:१५	खोज
छ७:१५५	प्राप्ति स्थान
छ७:१६	उत्पत्ति
ज	**उद्भिच्छास्त्र**
ज:१२	वनस्पति
ज:१२०२	भारतीय वनस्पति
ज:१३	लोकप्रिय वर्णन
ज:१८	तालिका
ज:२	अंग विन्यास
ज:३	शरीरक्रिया
ज:५	पारिस्थिकी
ज:६७	प्रजनन
ज:७३	औरणिकी
ज२	आप्यक (एल्गे. समुद्री तृणक)
ज३	छत्राकुर (फन्गाइ)
ज३५	कुकरमुत्ता
ज३२	सेवार
ज५	वानस्पत्य

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
झ	**कृषि**	झ३७६	अंगूर
झः१	मृत्तिका	झ३७७	आम
झः२	खाद	झ३७अ	अखरोट
झः२ः३१	प्रसारण	झ३७इ	इमली
झः३	प्रवर्धन रीति	झ३७क	कटहल
झः४	रोग	झ३७फ	फालसा
झः५	सस्य विकास	झ३८	अनाज
झः७	लुनना	झ३८१	चावल
झ१	उद्यान कार्य	झ३८२	गेहूँ
झ२	पशु खाद्य फसल	झ३८३	जई
झ२५१	घास	झ३८६	जौ
झ२८२	घोड़े का दाना	झ३८७	बाजरा
झ३	खाद्य फसल	झ३८८	चना
झ३२१	आलू	झ३५१	चाय
झ३२२	सकरकन्द	झ३५२	तम्बाकू
झ३२५	भारतीय गोभी	झ[illegible]८१	कहवा
झ३२६	प्याज	झ[illegible]८२	काका
झ३२७	लहसुन	झ[illegible]८३	पोस्त
झ३३१	पालक	झ६११	हींग
झ३३[illegible]	गाजर	झ६५१	दालचीनी
झ३४१	ईख	झ६६१	लवंग
झ३५१	साग	झ६७१	लाल मिर्च
झ३५२	बन्द गोभी	झ६७२	इलायची
झ३५८	पान	झ६७३	धनिया
झ३[illegible]१	फूल गोभी	झ६८१	काली मिर्च
झ३७	फल	झ६८२	सरसों
झ३७१	सेब	झ७१८	सनई
झ३७२	सन्तरा	झ७३१	पटसन
झ३७३	तरबूज	झ७३४	पटुआ
झ३७४	केला	झ७४३	सन

वर्गसंख्या	विषय
झ७७१	रुई
झ९२१	हल्दी
झ६६१	गुलाब
झ९८१	मूँगफली
झ६८२	नारियल
झ९८३	तिल
झ६८८	सोयाबीन
ट	**जन्तु शास्त्र**
ट:१२	जन्तु
ट:१२:२	भारतीय जन्तु
ट:१३	वर्णन
ट:२	अंग विन्यास
ट:३	शरीर क्रिया
ट:५	पारिस्थिकी
ट:५८	देशान्तर गमन
ट:७३	औणिकी
ट१	अपृष्ठवंशी
ट६	कृमि
ट८६	कीट
ट९	पृष्ठवंशी
ट९२	मछली
ट९३	उभयचर
ट९४	सरीसृप
ट९६	पक्षी
ट९७	स्तनन्धय
ड	**आयुः शास्त्र**
ड:१३	परिचर्यालय
ड:१४	चिकित्सालय
ड:१५	आरोग्यशाला
ड:२	अंग विन्यास

वर्गसंख्या	विषय
ड:३	शरीर क्रिया
ड:४	रोग
ड:४:१	परिचर्या
ड:४:२	रोग हेतु
ड:४:३	रोग निदान
ड:४:४	व्याधि
ड:४:५	निरोध
ड:४:६	उपचार
ड:४:६२	शारीरिक
ड:४:६२५	क्ष-किरण
ड:४:६३	औषध
ड:४:६४२६	उपवास चिकित्सा
ड:४:६५	जल चिकित्सा
ड:४:६६	लसी चिकित्सा
ड:४:६७	अंगरस चिकित्सा
ड:४:६८	वायु चिकित्सा
ड:४:७	शल्य कर्म
ड:४:८	आहार नियमन
ड:४:९१	रोगोपरान्त संभाल
ड:४:९७	प्रथम चिकित्सा
ड:४२	संक्रामक रोग
ड:४२१	क्षय
ड:४२३	चेचक
ड:४७३	वर्ध्म (हर्निया)

टिप्पणी : प्रत्येक विशिष्ट रोग ड:४ की भांति पुनः विभेदित किया जा सकता है।

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
	उदाहरण	ड:६८	भेषज निर्माण
ड:४२१:२	क्षय रोग-हेतु	ड:८	शारीरिक ममर्थता
ड:४०२५:६२५३	नासूर का क्षकिरण उपचार	ड१	प्रादेशिक
ड:४७३:७	वर्ध्म के लिए शल्यकर्म	ड१२:४६	मेदुरता
ड:५	जन स्वास्थ्य	ड१८३	कर्ण
ड:५१	जीवन समंक (गणना)	ड१८५	नेत्र
ड:५२	राज्य नियन्त्रण	ड१९२	जोड़
ड:५२१	निवास स्थान	ड२	पाचन प्रणाली
ड:५२२	पशु	ड२१	मुख
ड:५२३	आहार	ड२१४	दन्त
ड:५४	निरोधक उपाय	ड२२	कण्ठ
ड:५५	जनस्वस्थवृत्त	ड२५	अन्त्र
ड:५७	वैयक्तिक स्वस्थवृत्त	ड२५:४२४१	आन्त्र ज्वर
ड:५७१	निवास	ड२५:४२४२	आमातिसार
ड:५७२	आमोद प्रमोद	ड२५:४२५१	हैजा
ड:५७३	आहार	ड२५:४३७२	अंकुश कृमि (हुकवर्म)
ड:५७४	उत्तेजक	ड२५:४५१	बद्ध कोष्ठ
ड:५७५	प्रसाधन	ड२५:४५२	अतिसार
ड:५७७	वस्त्र	ड२६१:४५३	कामला
ड:५७८	निद्रा	ड२६३:४६२	बहुमूत्र
ड:६	भेषज ज्ञान	ड३	संचार प्रणाली
ड:६२	भेषजिका	ड३२	हृदय
ड:६५	भेषज संहिता	ड३५	रुधिर
ड:६६	भेषज द्रव्य	ड३५:४११	रक्तहीनता
		ड३५:४२६१	हिमज्वर
		ड३९४८१	श्लीपद
		ड३९६:४२४१	प्लेग
		ड४	श्वास प्रणाली

वर्ग संख्या	विषय
ड४:४२४१	प्रतिश्याय
ड४:४२४२	कूकर खांसी
ड४१	नासिका
ड४१:४२४१	प्रबलास, डिफ्थीरिया
ड४४:४१५	फेफड़े की सूजन
ड४४:५३	श्वास रोग
ड४५	फेफड़े
ड४५:४२१	क्लोम क्षय रोग
ड४५:४२४	क्लोम पाक
ड५	जननमूत्र प्रणाली
ड५५	स्त्रीजनन अवयव
ड६	अप्रणाल ग्रन्थियां
ड६२:४२६१	कालाजार
ड७	नाड़ी प्रणाली
ड७:४१	नाड़ी दुर्बलता
ड७:४२	अनिद्रा
ड७१	मस्तिष्क
ड७१:४५३	अपस्मार
ड७२	पृष्ठ वंश
ड७६:४११	लकवा
ड८२	अस्थि
ड८२:४६३	बाल वक्र
ड८७	चर्म
ड९१	बाल आयु:शास्त्र
ड९५	स्त्री आयु:शास्त्र
ड९५:३	प्रसूति
ड९५:३२	गर्भस्थ शिशु
ड९५:३४	गर्भपात

वर्गसंख्या	विषय
ड९५:३५	गर्भ पीड़ा
ड९५:४	स्त्री रोग शास्त्र
ड९८	उष्ण देश आयु:शास्त्र
डइ	आयुर्वेद
डऊ	सिद्ध
डक	यूनानी
डड	होमियोपेथी
डढ	प्राकृतिक चिकित्सा

टिप्पणी: ड९१ से डढ तक सभी वर्ग ड की भांति पुनः विभाजित किए जा सकते है।

उदाहरण

ड९१४४:४१५:३	बाल-फेफड़े की सूजन का निदान
डइ२९१:४५३:६	कामले की आयुर्वेदीय चिकित्सा

ढ	कला
ढ१	ग्रन्थ उत्पादन
ढ१३	कागद निर्माण
ढ१४	मुद्रण
ढ१४८	मुद्रलेखन
ढ१५	संपुटन
ढ२	पत्रकारी
ढ३	गृह-शास्त्र
ड३:३	पाक

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
ढ४	लोहकारी	ढस१	शारीरिक दीक्षा
ढ५	बढ़ईगीरी	ढस१२	भारी व्यायाम
ढ६	काच उद्योग	ढस१३	व्यायाम कला
ढ७	वस्त्र	ढस२	खेलकूद
ढ७:१	कातना	ढस२१२१	फुटबॉल
ढ७:२	बुनना	ढस२१३१	टेनिस
ढ७१	रुई	ढस२१३२	बेडमिन्टन
ढ७२	ऊन	ढस२१४१	क्रिकेट
ढ७३	रेशम	ढस२२	स्पर्धी क्रीड़ा
ढ८	दर्जीगिरी	ढस२५	जल क्रीड़ा
ढ९२	पेसराजी	ढस२५१	तैरना
ढ९५	आलोक चित्रण	ढस३	गृहान्तःक्रीड़ा
ढ९७	चर्म कार्य	ढस३१	ताश खेल
ढभ७	रज्जु निर्माण	ढस४	बाजीगरी
ढट	**जन्तु कला**	ढस५	पशु धावन
ढट३१	गव्य शाला	ढस६	शिकार, मृगया
ढट३१:७१	दूध	ढस७	स्वयंसेवक
ढट३१:७३	मक्खन	ढस९७५	टिकट एकत्रीकरण
ढट३३२	धीवर कर्म		
ढट३५	गृह्य आहार पक्षी		
ढट४४२	घोड़ा		
ढट५४	पालतू पशु		
ढट५४१	कुत्ता		
ढट५४२	बिल्ला		
ढट६११	मधुमक्खी		
ढट७७१	कौशेय कृमि		
ढन	आशु लिपि		

अध्यात्म विद्या व गूढ़ विद्या

△:३४	प्राणायाम
△:८	गुह्य विद्या
△:८:१६	अध्यात्मवाद

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
△ :८६	भविष्यवाणी	थ५	चित्र कला
△ :८६२	आकृति सामुद्रिक	थ७	नृत्य
		थ८	संगीत
△ :८६२७	हस्त सामुद्रिक	थ८२	वायु वाद्य
△ :८६२८	मस्तिष्क विद्या	थ८२२	बांसुरी
△ :८६४	फलित ज्योतिष	थ८२९१	हारमोनियम
△ :८६९२	शकुन	थ८३	तन्तु वाद्य
△ :८७	जादू टोना	थ८३१	वीणा
△ २	हिन्दू योग	थ८३२	वॉयलिन
△ २२	हठ	थ८३४	पियानो
△ २३	ज्ञान	थ८४	आघात वाद्य
△ २४	कर्म	थ८ १	दुन्दुभि
△ २५	भक्ति	थ८९१	गीत
△ २६	र ज	थ९१	नाट्य
△ २८	सद्ध	थ९१५	चलचित्र
थ	ललित कला	थ९ ८२	जल्पी
थ१	वास्तु कला	थ९१८	कालक्षेप
थ१:१	नगर योजना		
थ२	मूर्ति कला		
थ३	उत्किरण		
थ४	बिन्दुरेखाग्र कला		

द साहित्य

आगे जो लिखा जाएगा उसमें हिन्दी इष्ट भाषा मानी गई है।

द-हिन्दी साहित्य

द-:लं	इतिहास. हिन्दी साहित्य
द-:लंथ३ थ४०	शुक्ल (रामचन्द्र) : हिन्दी साहित्य का इतिहास
द-:लंथ३ थ४६	श्यामसुन्दरदास : हिन्दी साहित्य
द-:१शं	पद्य संग्रह

द-:१शं८० थ४५ धीरेन्द्र वर्मा तथा
रामकुमार वर्मा : आधुनिक हिन्दी काव्य
द-:१शं८ थ४८ वियोगी हरि. संपा. ब्रज माधुरी सार
द-:१:९ पद्य समीक्षा
द-:१:९ थ३९ प्रसाद (जयशङ्कर) : काव्य और कला
द-:१:९ढ७ थ४७ गौड (राजेन्द्रसिंह) : प्राचीन कवियों की काव्य साधना

आदि काल

द-:१ पद्य
द-:१छ२५:१ नरपति नाल्ह : वीसलदेव रासो
द-:१च००:१ चन्दवरदाई : पृथ्वीराज रासो

पूर्व मध्य काल

पद्य

द-:१छ७०:१ विद्यापति : पदावली
द-:१ज००:१शं कबीरदास : वचनावली
द-:१ज००:९ थ४२ द्विवेदी (हजारीप्रसाद) : कबीर
द-:१ज०३ मीराँबाई
द-:१ज०३:९ थ३४ मिश्र (भुवनेश्वरप्रसाद) मीरा की प्रेम साधना
द-:१ज२०:१ जायसी (मलिक मुहम्मद) : पद्मावत
द-:१ज७९वं थ०३ ब्रजरत्न शर्मा : सूरदास का जीवन चरित्र
द- १ज७९:१ सूरदास : सूरसागर
द:-१ज७९:९ थ४१ भटनागर (रामरत्न) : सूरसाहित्य की भूमिका
द-:१झ२४:१ नरोत्तमदास : सुदामाचरित
द-:१झ३२ तुलसीदास
द-:१झ३२वं ढ९५ कमल कुमारी देवी : गोस्वामी तुलसीदासजी का जीवन चरित्र
द-:१झ३२:११टं थ३७ सूर्यकान्त : तुलसी रामायण शब्द सूचि
द-:१झ३२:११ तुलसीदास : रामचरितमानस
द-:१झ३२:११:९ थ४० मिश्र (वलदेव प्रसाद) : मानस मन्थन
द-:१झ३२:११:९०
भः५२१ थ३९ पाण्डेय (चन्द्रशेखर) : रामायण के हास्यस्थल

द-:१क३२:१२	तुलसीदास :	विनय पत्रिका
द-:१क३२:१३		कवितावली
द-:१क३२:१४		दोहावली
द-:१क३२:१५		गीतावली
द-:१क३२:१६		पार्वती मंगल
द-:१क३२:१७		जानकी मंगल
द-द:१क३२.१८		बरवै रामायण
द-:१क३२:२१		रामललानहछू
द-:१क३२:२२		कृष्ण गीतावली
द-१क३२ २३		वैराग्य सन्दीपिनी
द-:१क३२:२४		रामाज्ञा प्रश्न
द-:१क३२:९ थ३४	मिश्र (बलदेवप्रसाद) : तुलसी दर्शन	
द-.१क३२ ९ थ४२	गुप्त (माताप्रसाद) : तुलसीदास	
द-.१क३२ ९ थ४६	शुक्ल (रामचन्द्र) : गोस्वामी तुलसीदास	
द द १क३२:९ थ४७	भटनागर (रामरतन) : तुलसीदास : एक अध्ययन	
द-१क३३.१	नन्ददास : रासपञ्चाध्यायी	
द-.१क३३:२		भँवरगीत
द-.१क४०	चतुर्भुजदास	
द- १क५४	रहीम (अ. अब्दुर्रहीम खानखाना)	
द-:१क५५.१	केशवदास : रामचन्द्रिका	
द-:१क५७	परमानन्ददास	
द:-१क५८	रसखान	
द- १क८९:१	सेनापति : कवित्तरत्नाकर	
द-:१क९५:१	बिहारी : सतसई	
द- १ट०१:१	नाभादास : भक्तमाल	
द-:१ट०६:१	त्रिपाठी (चिन्तामणि) : रामायण	
द-.१ट१२.१	भूषण : शिवाबावनी	
द-:१ट१८:१	मतिराम : ललितललाम	

उत्तर मध्य काल

पद्य

द-:१ट७३.१	देव : अष्टयाम

द-:१ट९०:१	घनानन्द : सुजानसागर
द-:१ड००	नागरीदास
द-:१ड०५:१	वृन्द : सतसई
द-:१ड१४	गिरधर कविराय.
द-:१ड५३:१	पद्माकर : गंगालहरी
द-:१ड७५	सूदन
द-:१ड९४	ग्वाल
द-:१ढ०१	दीनदयाल गिरि
द-:१ढ१५:१	मिश्रण (सूर्यमल्ल) : वीर सतसई

आधुनिक काल

पद्य

द-:१ढ५०:१	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
द-:१ढ५५शं	चौधरी (बदरीनारायण) : प्रेमघन सर्वस्व
द-:१ढ६०	पाठक (श्रीधर)
द-:१ढ६१	नाथूराम शङ्कर
द- १ढ६५:१	उपाध्याय (अयोध्यासिंह) : प्रिय प्रवास
द-:१ढ६७:१	जगन्नाथदास रत्नाकर : गंगावतरण
द-:१ढ६८	भगवानदीन
द-:१ढ८०	सत्यनारायण कविरत्न
द-:१ढ८३:१	शुक्ल (रामचन्द्र) : बुद्धचरित
द-:१ढ८३१	शुक्ल (गयाप्रसाद) (अ. सनेही)
द-:१ढ८४	पाण्डेय (रूपनारायण)
द-:१ढ८५	पाण्डेय (लोचनप्रसाद)
द-:१ढ८६:१६	गुप्त (मैथिलीशरण) : साकेत
द-:१ढ८६:१६:९ थ४०	नगेन्द्र : साकेत : एक अध्ययन
द-:१ढ८६:९ थ३७	शुक्ल (गिरिजादत्त) : गुप्तजी की काव्यधारा
द-:१ढ८८	चतुर्वेदी (माखनलाल)
द-:१ढ८९	प्रसाद (जयशङ्कर)
द-:१ढ९१	गोपालशरणसिंह

द-:१ढ९६	त्रिपाठी (सूर्यकान्त) (अ. निराला)
द-:१ढ९७	गुप्त (सियारामशरण)
द-:१ढ९७१	भट्ट (उदयशङ्कर)
द-:१ढ९७२	बालकृष्ण शर्मा नवीन
द-:१ढ९७३:१	वियोगी हरि (अ. हरिप्रसाद) : वीर सतसई
द-:१थ००	अनूप शर्मा
द-:१थ००१	आरसीप्रसादसिंह
द-:१थ०१	पन्त (सुमित्रानन्दन)
द-:१थ०२	हरिवंशराय बच्चन
द-:१थ०३	भगवती चरण वर्मा
द-:१थ०५	रामकुमार वर्मा
द-:१थ०६	गुरुभक्त सिंह
द-:१थ०७	महादेवी वर्मा
द-:१थ०७१	खत्री (जगन्नाथ प्रसाद)
द-:१थ०८	रामधारी सिंह दिनकर
द-:१थ१०:१	पाण्डेय (श्यामनारायण) : हल्दी घाटी
द-:१थ१०:२	जौहर
द-:१थ११	उपेन्द्रनाथ अश्क
द-:१थ१५	नरेन्द्र
द-:१थ१५१	डालमिया (दिनेश नन्दिनी)
द-:१थ१८	चोरड्या (दिनेश नन्दिनी)
द-:१थ१९	शुक्ल (रामेश्वर) (अ. अञ्चल)
द-:२	**नाट्य**
द-:२र्श थ४१	गुप्त (अमरनाथ). सपा. एकाङ्की नाटक
द-:२:९ थ३२	श्यामसुन्दरदास : रूपक रहस्य
द-:२:९ थ३७	वेदव्यास : हिन्दी नाट्यकला

उत्तर मध्यकाल

नाट्य

द-:२ड८९:१	विश्वनाथसिंह : आनन्द रघुनन्दन

द-:२ङ९३	गणेश
द-:२ढ०८	मिश्र (लक्ष्मीनारायण)
द-:२ढ४०	रत्नचन्द्र
द-:२ढ४३	शालिग्राम
द-:२ढ४४	भट्ट (बालकृष्ण)
द-:२ढ४९	दामोदर शास्त्री

आधुनिक काल

नाट्य

द-:२ढ५०	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : भारतेन्दु नाटकावली
द-:२ढ५१	श्री निवासदास
द-:२ढ५४	भट्ट (केशवराम)
द-:२ढ५५	चौधरी (बदरीनारायण) (अ. प्रेमघन)
द-:२ढ५६	मिश्र (प्रतापनारायण)
द-:२ढ५७	गोस्वामी (राधाचरण)
द-:२ढ५८	व्यास (अम्बिकादत्त)
द-:२ढ५८१	सीताराम
द-:२ढ५९	रामकृष्ण वर्मा
द-:२ढ६०	शिवनन्दन सहाय
द-:२ढ६२	ज्वालाप्रसाद
द-:२ढ६३	पुरोहित (गोपीनाथ)
द-:२ढ६४	गुप्त (बालमुकुन्द)
द-:२ढ६५	किशोरी लाल
द-:२ढ६५१	राधाकृष्णदास
द-:२ढ६६	उपाध्याय (अयोध्यासिंह)
द-:२ढ६७	गोपालराम गहमरी
द-:२ढ६८	देवीप्रसाद पूर्ण
द-:२ढ६९	बलदेव प्रसाद
द-:२ढ७७	चतुर्वेदी (जगन्नाथ प्रसाद)
द-:२ढ८०	प्रेमचन्द
द-:२ढ८४	पाण्डेय (रूपनारायण)

द-:२ढ८५१	सत्यनारायण
द-:२ढ८५	मिश्रबन्धु
द-:२ढ८६	गुप्त (मैथिलीशरण)
द:२ढ८७	चतुरसेन शास्त्री
द-:२ढ८८	चतुर्वेदी (माखनलाल)
द-:२ढ८९:११	प्रसाद (जयशङ्कर) : सज्जन
द-:२ढ८९:१२	कल्याणी परिणय
द:-२ढ८९:१३	करुणालय
द-:२ढ८९:१४	प्रायश्चित्त
द-:२ढ८९:१५	राज्यश्री
द-:२ढ८९:१६	विशाख
द-:२ढ८९:१७	अजातशत्रु
द-:२ढ८९:१८	कामना
द-:२ढ८९:२१	जनमेजय का नागयज्ञ
द-:२ढ८९:२२	स्कन्दगुप्त
द-:२ढ८९:२३	एक घूंट
द-:२ढ८९:२४	चन्द्रगुप्त
द-:२ढ८९:२५	ध्रुवस्वामिनी
द-:२ढ८९:९ थ४१	जैन (शिखरचन्द्र) : प्रसाद का नाट्य चिंतन
द-:२ढ८९:९ थ४४	व्यास (विनोदशङ्कर) : प्रसाद और उनका साहित्य
द-:२ढ८९:९ थ४८	जगन्नाथ प्रसाद शर्मा : प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन
द-:२ढ८९१	रामचन्द्र वर्मा
द-:२ढ९०	त्रिपाठी (रामनरेश)
द-:२ढ९१	विश्वम्भर नाथ शर्मा (अ. कौशिक)
द-:२ढ९११	श्रीवास्तव (गंगा प्रसाद)
द-:२ढ९५	भट्ट (बद्रीनाथ)
द-:२ढ९६	सुदर्शन
द-:२ढ९७	गुप्त (सियारामशरण)
द-:२ढ९७१	भट्ट (उदयशङ्कर)

द-:२ढ९७३	वियोगी हरि (अ. हरिप्रसाद)
द-:२ थ०१	पन्त (सुमित्रानन्दन)
द-:२ थ०११	हरिकृष्ण प्रेमी
द-:२ थ०५	गोविन्ददास
द-:२ थ०७१	खत्री (जगन्नाथप्रसाद)
द-:२ थ०८	पन्त (गोविन्दवल्लभ)
द-:२ थ१०	उपेन्द्रनाथ अश्क
द-.२ थ११	सत्येन्द्र
द-:३	**कथा उपन्यास**
द-:३लंथर थ४५	श्रीवास्तव (शिवनारायण) : हिन्दी उपन्यास
द-:३:९ थ४१	व्यास (विनोदशङ्कर) : उपन्यास कला

उत्तर मध्य काल

कथा उपन्यास

द-:३ड६४	इंशा अल्ला खां (सैयद)
द-:३ढ४४	भट्ट (बालकृष्ण)

आधुनिक काल

कथा उपन्यास

द-:३ढ५८	व्यास (अम्बिकादत्त)
द-:३ढ-६	उपाध्याय (अयोध्यासिंह)
द-:२ढ६७	गोपालराम गहमरी
द-:३ढ७४	ब्रजनन्दन सहाय
द-:३ढ८०:११	प्रेमचन्द : सेवासदन
द-:३ढ८०:१२	प्रेमाश्रम
द-:३ढ८०:१३	रंगभूमि
द-:३ढ८०.१४	कायाकल्प
द-:३ढ८०:१५	निर्मला
द-:३ढ८०:१६	गबन
द-:३ढ८०:१७	कर्मभूमि
द-:३ढ८०:१८	गोदान
द-:३ढ८०:९ थ३४	झा (जर्नादनप्रसाद) : प्रेमचन्द कीउ पन्यास कला

द-:३ढ८०:६ थ४७	गुप्त (मन्मथनाथ) तथा राजेन्द्र नाथ वर्मा : कथाकार प्रेमचन्द
द-:३ढ८०:६०स३१ थ४१	टंडन (प्रेमनारायण) : प्रेमचन्द और ग्राम समस्या
द-:३ढ८३	चन्द्रधर शर्मा गुलेरी
द-:३ढ८७	चतुरसेन शास्त्री
द-:३ढ८६	प्रसाद (जयशङ्कर)
द-:३ढ६०	वृन्दावन लाल वर्मा
द-:३ढ६१	विश्वम्भरनाथ शर्मा (अ. कौशिक)
द-:३ढ६२	राधिकारमण प्रसाद सिंह
द-:३ढ६४	राहुल साङ्कृत्यायन
द-:३ढ६६	त्रिपाठी (सूर्यकान्त)
द-:३ढ६७	गुप्त (सियारामशरण)
द-:३ढ६८	मित्रा (उषा देवी)
द-:३ढ६६	वाजपेयी (भगवती प्रसाद)
द-:३थ००	अनूपलाल मंडल
द-:३थ०१	पाण्डेय (बेचन शर्मा) (अ. उग्र)
द-:३थ०२	ठाकुर (श्रीनाथसिंह)
द-:३थ०३	जोशी (इलाचन्द्र)
द-:३थ०३१	भगवती चरण वर्मा
द-:३थ०३२	व्यास (विनोद शङ्कर)
द-:३थ०५	जैनेन्द्र कुमार
द-:३थ०८	पन्त (गोविन्द वल्लभ)
द-:३थ१०	उपेन्द्रनाथ अश्क
द-:३थ११	वात्स्यायन (सच्चिदानन्द हीरानन्द)
द-:३थ१४	यशपाल
द-:३थ१८	गुप्त (मन्मथनाथ)
द-:३थ१८१	कृष्ण कुमार सिंह
द-:३थ२०	सौनरिक्सा (चन्द्रकिरण श्रीमती)

द-:६	**गद्य**
द-:६:९थ० थ३९	जगन्नाथ प्रसाद शर्मा : हिन्दी की गद्यशैली का विकास
	उत्तर मध्य काल
	गद्य
द-:६ड६४	लल्लूजी लाल
द-:६ड७४	सदल मिश्र
द-:६ढ४४	भट्ट (बालकृष्ण)
	आधुनिक काल
	गद्य
द-:६ढ५६	मिश्र (प्रतापनारायण)
द-:६ढ६५	गुप्त (बालमुकुन्द)
द-:६ढ७१	द्विवेदी (महावीरप्रसाद)
द-:६ढ७१:९ थ३९	टंडन (प्रेमनारायण) : द्विवेदी मीमांसा
द-:६ढ७७	चतुर्वेदी (जगन्नाथप्रसाद)
द-:६ढ८०	प्रेमचन्द
द-:६ढ८३:१	शुक्ल (रामचन्द्र) : चिन्तामणि
द-:६ढ९६	त्रिपाठी (सूर्यकान्त) (अ. निराला)
द-:६ढ९७	झा (अमरनाथ)
द-:६थ०३	भगवती चरण वर्मा
द-:६थ०७	महादेवी वर्मा
द-:९	**अलङ्कार शास्त्र, समीक्षा तत्त्व**
द-:९ढ२:थ२८	साहित्य सन्देश. आगरा
द-:९शंभ५५:१	केशवदास : कविप्रिया
द-:९शंट०९:१	त्रिपाठी (चिन्तामणि) : काव्यविवेक
द-:९शंट१३:१	भूषण : शिवराजभूषण
द-:९शंट१८:१	मतिराम : रसराज
द-:९शंट१८:२	साहित्यसार
द-:९शंट७३:१	देव : भावविलास
द-:९शंड०३:१	रूपिनाथ : अलङ्कारमणिमञ्जूषा

द-:९शंथ१	वाजपेयी (नन्ददुलारे)
थ४८	तथा मिश्र (लक्ष्मीनारायण). संपा. साहित्य-सुषमा
द-:९ थ४१	सूर्यकान्त शास्त्री : साहित्य मीमांसा
द-:९ थ४४	मिश्र (रामदहिन) : काव्यालोक
द-:९ थ४५	पाण्डेय (गङ्गाप्रसाद) : छायावाद और रहस्यवाद
द-:९ थ४७	द्विवेदी (महावीरप्रसाद) : रसज्ञरञ्जन
द-:९ थ४७१	मिश्र (रामदहिन) : काव्यदर्पण
द-:९ थ४७२	पोद्दार (कन्हैयालाल) : काव्य कल्पद्रुम
द-:९ थ४८	भटनागर (रामरतन):हिन्दी साहित्य एक अध्ययन
द-:९ थ४८१	द्विवेदी (हजारीप्रसाद):हिन्दी साहित्य की भूमिका
द-:९०न	**छन्दशास्त्र**
द-९०नशंट१८:१	मतिराम : छन्दसार
द-:९०नशंड०८:१	भिखारीदास : छन्दोर्णवपिङ्गल
द-:९०न थ१७	जगन्नाथप्रसाद भानु : छन्दसारावली
द-:९०न थ२२	नारायणप्रसाद बेताब : पिङ्गलसार
द-:९	समीक्षा
द-:९०भ५३१ थ४५	श्रीवास्तव (गङ्गाप्रसाद) : हास्यरस
द-:९०भ५५५ थ४८	मीतल (प्रभुदयाल) : ब्रजभाषा साहित्य का नायिकाभेद
द-:९थ१ थ४६	मदान (इन्द्रनाथ) : हिन्दी कलाकार
द-:९थ३ थ४६	धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी तथा देवेन्द्रनाथ शर्मा. संपा. साहित्यिक निबन्धावली
द-:९थ२ १११थ३९	मदान (इन्द्रनाथ) : मॉडर्न हिन्दी लिटरेचर

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
द१११	**आंग्ल साहित्य**	द१११:२फ६४	विलियम शेक्सपियर
द१११:१	आंग्ल काव्य	द१११:२ढ८७	बर्नार्ड शॉ
द१११:१ट०८	जॉन मिल्टन		
द१११:१ढ६१	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	द१११:३	आंग्ल कथादि
द१११:२	आंग्ल नाटक	द१११:३ड७१	वाल्टर स्कॉट

वर्गसंख्या	विषय
द१११:६	आंग्ल निबन्ध
द-:१५	**संस्कृत साहित्य**
द१५:१	संस्कृत काव्य
द१५:२	संस्कृत नाट्य
द१५:२ख४०	कालिदास
द१५:२ख६०	हर्ष
द१५:२ख७०	भवभूति
द१५:२ख७८	मुरारि

साहित्य मुख्य वर्ग के ग्रन्थों के वर्गीकरण के लिए तथा उपर्युक्त विधि से उनकी वर्ग संख्या के निर्माण के लिए वर्गकार निम्नलिखित तालिकाओं की सहायता ले सकता है :—

(१) अनुच्छेद ५४ में दी हुई भाषा तालिका;

(२) अनुच्छेद ५५ में दी हुई काल तालिका; तथा साहित्य के रूपों की निम्नलिखित तालिका :—

१. पद्य, २. नाट्य, ३. कथादि, ४. पत्र, ५. व्याख्यान, ६. गद्य तथा ७. चम्पू। ग्रन्थालय की इष्ट भाषा के विषय में भाषा संख्या के स्थान में '-' हाइफन का उपयोग करना चाहिए। निम्नलिखित मुख परिसूत्र में विभिन्न संख्याओं के संयोजन का क्रम दिखाया गया है।

द [भाषा संख्या] : [रूप संख्या] [ग्रन्थकार संख्या] : [कृति संख्या]

कृति संख्या के निर्माण का यह मार्ग है। सब कृतियों को कालक्रम के अनुसार व्यवस्थित कर लिया जाए। यदि उनकी संख्या ९ से कम है तो १, २, ३. इस प्रकार संख्या दी जाए। यदि उनकी संख्या ८ से अधिक हो तो ११,१२. ··· १८. २१. २२.···२८, ३१. ३२ इस प्रकार संख्या दी जाए। सामान्य उपभेदों का उपयोग अनुच्छेद ५२ में स्पष्ट किया गया है।

वर्गसंख्या	विषय
न	**भाषा शास्त्र**

आगे जो लिखा जाएगा उसमें हिन्दी इष्ट भाषा मानी गई है।

वर्गसंख्या	विषय
न-	हिन्दी भाषा शास्त्र
न-:ग	प्राचीन हिन्दी
न-:भ	मध्य हिन्दी
न-:ड	आधुनिक हिन्दी
न-:ड१	आधुनिक हिन्दी स्वरशास्त्र
न-:ड२	आधुनिक हिन्दी पदरचना
न-:ड३	आधुनिक हिन्दी वाक्य विन्यास
न-:ड४ट	आधुनिक हिन्दी शब्द कोष
न१११	आंग्ल भाषा शास्त्र
न१११:भ४ट	शब्दकोष
न१५:ट	वैदिक व्याकरण

वर्गसंख्या	विषय
प२२:२२९३	भार्गव
प२२:४१७शां१	नलयिर प्रबन्ध
प२२:४१७३शां१	विष्णुसहस्रनाम
प२३	शैव
प२३:२१शां१	रुद्र
प२३:२१शां२	चमक
प२३:२१	पुराण
प२३:२११	वायु
प२३:२२२	अग्नि
प२३:२२३	लिङ्ग
प२३:२२४	गणेश
प२३:२२४४	गणेश गीता
प२३:२२५	मत्स्य
प२३:२२६	स्कन्द
प२३:२२६१	सूतसंहिता
प२३:२२६२	ब्रह्मगीता
प२३:२२७	कूर्म
प२३:२२७१	ईश्वर गीता
प२३:२२८	सौर
प२३:२२९१	शिव
प२३:४१७शां१	तेवारम्
प२३२	आगम शैव
प२३३	काश्मीर शैव
प२३४	वीर शैव
प२४	गाणपत्य
प२५	शाक्त
प२५शां१	शङ्कर : सौन्दर्य लहरी
प२५:२१शां५	श्रीसूक्त
प२५:२१शां६	दुर्गा सूक्त
प२५:२२	पुराण
प२५:२२१	देवी भागवत
प२५:२२२	बृहद्धर्म
प२५:२२३	कालिका
प२५:२२५	ललितापाख्यान
प२५:२२९१	देवीमहात्म्य
प२५:४१७३शां१	ललिता सहस्रनाम
प२६	षाण्मुख
प२८	सौर
प२८:२२	पुराण
प२८:२२१	आदित्य
प२८:२२३	साम्ब
प२९९८	ग्राम्य देवता पूजक
प३	जैन
प३१	श्वेताम्बर
प३१:२११	अङ्ग
प३१:२१२	उपाङ्ग
प३१:२१३	प्रकीर्ण
प३१:२१६	मूलसूत्र
प३२	दिगम्बर
प४	बौद्ध
प४१	हीनयान
प४१:२	त्रिपिटक
प४२	महायान
प५	यहूदीय
प६	ख्रिस्तीय
प६:२१	बाइबल
प६:२२	ओल्ड टेस्टमेन्ट
प६:२३	न्यू टेस्टेमेन्ट
प६:२३१	सेन्ट मेथ्यू

वर्गसंख्या	विषय
प६:२३२	सेन्ट मार्क
प६:२३३	सेन्ट ल्यूक
प६:२३४	सेन्ट जॉन
प७	मुहम्मदीय
प७:२१	कुरान
फ	**दर्शन**
फ१	तर्क
फ११	विशेषानुमान
फ१२	सामान्यानुमान
फ३	आत्मतत्त्व
फ४	नीति
फ४:प२	हिन्दू नीति
फ५	सौन्दर्य शास्त्र
फ६	भारतीय दर्शन
फ६१	हिन्दू दर्शन
फ६२	न्याय वैशेषिक
फ६२१	वैशेषिक
फ६२५	न्याय
फ६३	सांख्य. योग
फ६३१	सांख्य
फ६३५	योग
फ६४	पूर्वमीमांसा
फ६४१	भाट्ट मीमांसा
फ६४५	प्रभाकर मीमांसा
फ६५	वेदान्त
फ६५:०	उपनिषद्
फ६५:२७	बृहदारण्यक
फ६५:३१	छान्दोग्य
फ६५:५	ब्रह्मसूत्र
फ६५:६	भगवद्गीता

वर्गसंख्या	विषय
फ६६	अद्वैत
फ६६३	प्रत्यभिज्ञा(काश्मीरी)
फ६७	विशिष्टाद्वैत
फ६७२	वैष्णव
फ६७३	शैव सिद्धान्त
फ६८	द्वैत

टिप्पण : फ६६ से फ६८, फ६५ के समान पुनः विभेदित हो सकते हैं।

वर्गसंख्या	विषय
फ६९	अन्य भारतीय मत
फ६९३	जैन
फ६९४	बौद्ध
भ	**मानस शास्त्र**
भ:४३	स्मृति
भ:४४	तर्क
भ:४६	मति
भ:५	भावना
भ:६	इच्छाशक्ति का प्रयत्न
भ:७	व्यक्तित्व
भ:७२	मेधा
भ:७३	योग्यता
भ:७४	चारित्र्य
भ:७५	स्वभाव
भ:७६	अन्तर्बुद्धि
भ:८	परोमानस
भ:८१	सुषुप्ति
भ:८११	स्वप्न
भ:८१५	अर्द्ध चेतन
भ:८५१	मोह निद्रा
भ:८५२	व्यञ्जन
भ१	बाल

वर्गसंख्या	विषय
	उदाहरण
र२.२	भारत का प्राकृतिक भूगोल
र२८.२६१	आसाम की घन-वातिकी
र५.२.थ५	भारत का राजनैतिक भूगोल (१९५०)
र६४१.५.छ	चौदहवीं शताब्दी में यूरोप के व्यापार मार्ग
र८.१.ट६	संसारभ्रमण (१६६६)

ल इतिहास

इतिहास के वर्गीकरण के उदाहरण अधिकतर वर्तमान भारत के लिए दिये गए हैं। भारतीय इतिहास के अन्य युगों के लिए, बिन्दु के पश्चात् आने वाले काल मुख के लक्ष्य को यथायोग्य परिवर्तित कर देना चाहिए।

इसके कुछ उदाहरण भी दिये गए हैं। अन्य देशों के इतिहास के लिए, ल के अनुपद आने वाले प्रदेश मुख के लक्ष्य को भी यथायोग्य परिवर्तित कर देना चाहिए।

वर्गसंख्या	विषय
ल१थ	राष्ट्रसंघ
ल१थ४	संयुक्त राष्ट्र
ल२:१ घ३	भारत का राजनैतिक इतिहास (१२३९ तक)
ल२:१:ङ५	भारत का राजनैतिक इतिहास (१७५६ तक)
ल२:१.थ५	आज तक का भारत का राजनैतिक इतिहास
ल२:११.थ५	स्वराष्ट्र नीति
ल२:१७.थ५	औपनिवेशिक नीति
ल२:१९.थ५	परराष्ट्र नीति
ल२:२.थ५	विधान
ल२:२२.थ५	कार्यकारिणी
ल२:२३.थ५	धारासभा
ल२:२४.थ५	दल
ल२:२५ढ८५	कांग्रेस दल
ल२:२५वंढ६९	महात्मा गान्धी
ल२:२५.थ५	नागरिक शास्त्र
ल२:२६.थ५	स्थानीय समष्टि
ल२:७	पुरातत्त्व
ल२:७२	अभिलेख
ल२:८	पुरालेख
	अन्य उदाहरण
ल३:२२.थ३	अंग्रेजी संसद् का इतिहास (१९३९ तक)
ल३:७२	ब्रिटिश अभिलेख

वर्गसंख्या	विषय
ल७३:२.ढ०	संयुक्त राज्य अमेरिका का विधान (१८०६ तक)
ल७४:७१	मेक्सिको के पुरातत्त्व

एक देश की दूसरे देश के प्रति परराष्ट्र नीति के विषय में, प्रमेय लक्ष्य १६ के अनन्तर ० तथा दूसरे देश की संख्या क्रमशः लगानी चाहिए। उदाहरण—

ल२:१६०४१.थ५	भारत की चीनी परराष्ट्र नीति, (१६५६ तक)

वर्गसंख्या	विषय
व:६१५	शान्ति
व:६१५४	निःशस्त्रीकरण
व४	राजतंत्र
व४६	सीमित राजतंत्र
व६४	एकसत्तावाद
व६६१	साम्यवाद
व७	स्वप्नलोकवाद
व८१	क्रान्ति
व८७	सविनय अवज्ञा (निष्क्रिय प्रतिरोध)

टिप्पण : व४ से व७ तक के प्रत्येक भेदों को केवल व के उपभेदों के समान पुनः विभेदित किया जा सकता है।

व	राजनीति
व:१	निर्वाचन
व:२	प्रशासन के अङ्ग
व:२१	राष्ट्रपति
व:२२	कार्यकारिणी
व:२३	धारासभा
व:२४	दल संघटन
व:२५	स्थानीय समष्टियां
व:२७	न्यायाधिकारी
व:२८	शासन प्रबन्ध
व:३	प्रशासन धर्म
व:५	नागरिक शास्त्र
व:६	परराष्ट्र सम्बन्ध
व:६११	कूटनीति
व:६१४	युद्ध

श	अर्थशास्त्र
श:१	उपभोग
श:१६	जीवनस्तर
श:१७	आर्थिक संरक्षण
श:२	उत्पादन
श:२७	साधन सम्पत्ति
श:३	वितरण
श:३१	राष्ट्रिय आय
श:३२	अधिकारानुसार वितरण
श:३२२	भाटक
श:३२५	दस्तूरी
श:३२६	ब्याज
श:३२८	लाभ
श:३२६	मजूरी

वर्गसंख्या	विषय
शा:३ढ	समाजवाद
शा:४	यातायातन
शा:५	वाणिज्य
शा:५१	आपणन
शा:५१२	विज्ञापनन
शा:५१२१	मतार्थना
शा:५२	फुटकर बिक्री
शा:५३	प्रशुल्क (टेरिफ)
शा:५३१	संरक्षण
शा:५३३	उन्मुक्त व्यापार
शा:५३५	निर्यात कर
शा:५३६	आयात कर
शा:५४	निर्यात एवं आयात
शा:५४५	निर्यात
शा:५४६	आयात
शा:५७	विदेशी विनिमय
शा:५७५	व्यापार सन्तुलन
शा:५९१	अन्तर्देशीय व्यापार
शा:६	अर्थवहन
शा:७	मूल्य
शा:७३	पूर्ति एवं मांग
शा:७४	व्यापार चक्र
शा:७५	संयोजित अर्थनीति
शा:७६	दाम
शा:८	प्रबन्ध
शा:८१	स्वामित्व
शा:८५	लेख्य
शा:८६	धन-विनियोग
शा:८७	लेखा
शा:८८	आय व्यय जांच

वर्गसंख्या	विषय
शा:८९३	सभा संचालन
शा:९	श्रम
शा:९१	श्रम पद्धति
शा:९२	उपलब्ध श्रमिक
शा:९४	सामाजिक दशा
शा:९४१	आवासन
शा:९४८	सुधार संस्थाएं
शा:९५	भृत्यत्व अभिसन्धि
शा:९६	श्रमिक संघ
शा:९७	हड़ताल
शा:९७७	पञ्चनिर्णय
शा४	यातायात
शा४१५	रेलपथ
शा४२५	महासागर
शा४२८	बन्दरगाह
शा४६	डाक और तार
शा६१	धन और मुद्राचलन
शा६२	महाजनी
शा६४	सराफा
शा६९	बैंक के प्रकार
शा७	सरकारी अर्थ कोष
शा७१	आय-व्ययक (बजट)
शा७२	कर निर्धारण
शा७५	सरकारी ऋण
शा७९६	स्थानीय सरकारी अर्थ
शा८	बीमा
शा९	उद्योग
शा९१	ग्रामोद्योग
शा९१ढ७	खद्दर

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
५३	**प्रदेश भेद**	२१३५	त्रिचनापल्ली
१	जगत्	२१३६	कोयम्बतूर
१-	साम्राज्य	२१५	पश्चिमी तट
१-३	ब्रिटिश साम्राज्य	२१५३	मलाबार
१३	प्रशान्त देश	२१५४	दक्षिणी कानड़ा
१५	अतलान्तिक देश	२१६१	कुडप्पा
१५१	भूमध्य देश	२१६२	अनन्तपुर
१६	प्राकृतिक भेद	२१६३	बेल्लरी
१६१	भूभाग	२१८	आन्ध्र देश
१६२	द्वीप	२१८१	नेल्लोर
१६३	दलदल; किनारे के भाग	२१८२	गुन्तूर
		२१८३	कृष्णा
१६४	अन्तर्जलीय भाग	२१८४	गोदावरी पश्चिम
१६५	जलीय भाग	२१८५	गोदावरी. पूर्व
१६६	पर्वतीय भाग	२१८६	विजगापट्टम
१६८	वायुमण्डल	२१६१	सलेम
१न१११	अंग्रेजी भाषाभाषी देश	२१६२	उत्तरी अर्काट
		२१६३	चित्तूर
१प७	मुसलमानी देश	२२	दक्षिण (मद्रास के बिना)
२	मातृदेश (भारत)		
२-२	देशी भारत	२२२	ट्रावणकोर
२-५३	फ्रान्सीसी भारत	२२३	कोचीन
२१	मद्रास (भारतीय राज्यों के बिना)	२२४	मैसूर
		२२५	हैदराबाद
२११	पूर्वी जिले	२२६	कुर्ग
२१११	मद्रास	२३१	बम्बई
२११४	तंजौर	२३१११	अहमदनगर
२१३	दक्षिणी जिले	२३११२	शोलापुर
२१३३	तिन्नवेल्ली	२३११३	अकलकोट
२१३४	मदुरा	२३११५	जमखण्डी

अध्याय ८

पारिभाषिक शब्दावली

अग्रा	Leading line
अग्राक्षर नाम	Initionym
अग्रानुच्छेद	Leading section
अतिरिक्त	Additional
– संलेख	Added entry
अङ्क	Digit
अङ्कन	Impression, Notation
अतिदेय	Overdue
अनुकार	Parody
अनुकूल क्रम	Helpful order
अनुलग्न सेवा	Reference service
अनुलग्नी	– Librarian
अनुवर्ग क्रम	Classified order
– सूची	– catalogue
अनुवर्ण	Dictionary
– सूची	– catalogue
अन्तर्मार्ग दर्शक	Gangway guide
अन्तर्विषयी संलेख	Cross reference entry
अंशकार	Contributor
– निर्देशी संलेख	– index entry

वर्गसंख्या	विषय
	उदाहरण
र२.२	भारत का प्राकृतिक भूगोल
र२८.२६१	आसाम की घन-वातिकी
र५.२.थ५	भारत का राजनैतिक भूगोल (१९५०)
र६४१.५.छ	चौदहवीं शताब्दी में यूरोप के व्यापार मार्ग
र८.१.ट६	संसारभ्रमण (१६६६)

ल इतिहास

इतिहास के वर्गीकरण के उदाहरण अधिकतर वर्तमान भारत के लिए दिये गए हैं। भारतीय इतिहास के अन्य युगों के लिए, बिन्दु के पश्चात् आने वाले काल मुख के लक्ष्य को यथायोग्य परिवर्तित कर देना चाहिए।

इसके कुछ उदाहरण भी दिये गए हैं। अन्य देशों के इतिहास के लिए, ल के अनुपद आने वाले प्रदेश मुख के लक्ष्य को भी यथायोग्य परिवर्तित कर देना चाहिए।

वर्गसंख्या	विषय
ल१थ	राष्ट्रसंघ
ल१थ४	संयुक्त राष्ट्र
ल२:१ घ३	भारत का राजनैतिक इतिहास (१२३९ तक)
ल२:१:ड५	भारत का राजनैतिक इतिहास (१७५६ तक)
ल२:१.थ५	आज तक का भारत का राजनैतिक इतिहास
ल२:११.थ५	स्वराष्ट्र नीति
ल२:१७.थ५	औपनिवेशिक नीति
ल२:१९.थ५	परराष्ट्र नीति
ल२:२.थ५	विधान
ल२:२२.थ५	कार्यकारिणी
ल२:२३.थ५	धारासभा
ल२:२४.थ५	दल
ल२:२५ढ८५	कांग्रेस दल
ल२:२५वंढ६६	महात्मा गान्धी
ल२:२५.थ५	नागरिक शास्त्र
ल२:२६.थ५	स्थानीय समष्टि
ल२:७	पुरातत्त्व
ल२:७२	अभिलेख
ल२:८	पुरालेख

अन्य उदाहरण

वर्गसंख्या	विषय
ल३:२२.थ३	अंग्रेजी संसद् का इतिहास (१६३६ तक)
ल३:७२	ब्रिटिश अभिलेख

वर्गसंख्या	विषय
ल७३:२.ढ०	संयुक्त राज्य अमेरिका का विधान (१८०६ तक)
ल७४:७१	मेक्सिको के पुरातत्त्व

एक देश की दूसरे देश के प्रति परराष्ट्र नीति के विषय में, प्रमेय लक्ष्य १६ के अनन्तर ० तथा दूसरे देश की संख्या क्रमशः लगानी चाहिए। उदाहरण—

ल२:१९०४१.थ५	भारत की चीनी परराष्ट्र नीति, (१६५६ तक)

वर्गसंख्या	विषय
व:६१५	शान्ति
व:९१५४	निःशस्त्रीकरण
व४	राजतंत्र
व४६	सीमित राजतंत्र
व६४	एकसत्तावाद
व६९१	साम्यवाद
व७	स्वप्नलोकवाद
व८१	क्रान्ति
व८७	सविनय अवज्ञा (निष्क्रिय प्रतिरोध)

टिप्पण : व४ से व७ तक के प्रत्येक भेदों को केवल व के उपभेदों के समान पुनः विभेदित किया जा सकता है।

व	राजनीति
व:१	निर्वाचन
व:२	प्रशासन के अङ्ग
व:२१	राष्ट्रपति
व:२२	कार्यकारिणी
व:२३	धारासभा
व:२४	दल संघटन
व:२५	स्थानीय समष्टियां
व:२७	न्यायाधिकारी
व:२८	शासन प्रबन्ध
व:३	प्रशासन धर्म
व:५	नागरिक शास्त्र
व:६	परराष्ट्र सम्बन्ध
व:६११	कूटनीति
व:६१४	युद्ध

श	अर्थशास्त्र
श:१	उपभोग
श:१६	जीवनस्तर
श:१७	आर्थिक संरक्षण
श:२	उत्पादन
श:२७	साधन सम्पत्ति
श:३	वितरण
श:३१	राष्ट्रिय आय
श:३२	अधिकारानुसार वितरण
श:३२२	भाटक
श:३२५	दस्तूरी
श:३२६	व्याज
श:३२८	लाभ
श:३२९	मजूरी

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
शा:३ढ	समाजवाद	शा:८९३	सभा संचालन
शा:४	यातायातन	शा:९	श्रम
शा:५	वाणिज्य	शा:९१	श्रम पद्धति
शा:५१	आपणन	शा:९२	उपलब्ध श्रमिक
शा:५१२	विज्ञापनन	शा:९४	सामाजिक दशा
शा:५१२१	मतार्थना	शा:९४१	आवासन
शा:५२	फुटकर बिक्री	शा:९४८	सुधार संस्थाएं
शा:५३	प्रशुल्क (टेरिफ)	शा:९५	भृत्यत्व अभिसन्धि
शा:५३१	संरक्षण	शा:९६	श्रमिक संघ
शा:५३३	उन्मुक्त व्यापार	शा:९७	हड़ताल
शा:५३५	निर्यात कर	शा:९७७	पञ्चनिर्णय
शा:५३६	आयात कर	शा४	यातायात
शा:५४	निर्यात एवं आयात	शा४१५	रेलपथ
शा:५४५	निर्यात	शा४२५	महासागर
शा:५४६	आयात	शा४२८	बन्दरगाह
शा:५७	विदेशी विनिमय	शा४६	डाक और तार
शा:५७५	व्यापार सन्तुलन	शा६१	धन और मुद्राचलन
शा:५९१	अन्तर्देशीय व्यापार	शा६२	महाजनी
शा:६	अर्थवहन	शा६४	सराफा
शा:७	मूल्य	शा६९	बैंक के प्रकार
शा:७३	पूर्ति एवं मांग	शा७	सरकारी अर्थ कोष
शा:७४	व्यापार चक्र	शा७१	आय-व्ययक (बजट)
शा:७५	संयोजित अर्थनीति	शा७२	कर निर्धारण
शा:७६	दाम	शा७५	सरकारी ऋण
शा:८	प्रबन्ध	शा७९६	स्थानीय सरकारी अर्थ
शा:८१	स्वामित्व		
शा:८५	लेख्य	शा८	बीमा
शा:८६	धन-विनियोग	शा९	उद्योग
शा:८७	लेखा	शा९१	ग्रामोद्योग
शा:८८	आय व्यय जांच	शा९१ढ७	खद्दर

वर्गसंख्या	विषय
श२९झ	कृषि अर्थशास्त्र
श२९ढ७	वस्त्र व्यवसाय

टिप्पण : श४ से श९ तक के प्रत्येक भेद केवल श के उपभेदों के अनुसार पुनः विभेदित किए जा सकते हैं।

उदाहरण

श४१५:८१	रेल मार्गों का स्वामित्व
श९ढ७:९६	वस्त्र व्यवसाय में श्रमिक संघ

जहां कहीं आवश्यकता हो वहां प्रदेश तथा काल के भेद लगाए जा सकते है।

उदाहरण

श.२.थ५	आज तक की, भारत की आर्थिक दशा।
श.४१.थ३	१९३६ तक की जापान की आर्थिक दशा।
श:७४.७३.थ३	१९३९ तक के अमेरिकी व्यापार-चक्र
श:९७.२.थ५	१९५९ तक की भारतीय हड़तालें
श४१५:८१.२.थ५	१९५९ तक की भारतीय रेलों का स्वामित्व

वर्गसंख्या	विषय
स	**समाज शास्त्र**
स:१	सभ्यता
स:३४	रीतियां
स:४१	असंयम
स३१	देहाती समाजशास्त्र
स४९२	दास
स५७	हरिजन
स५९२	वर्ण
स७१	पूर्व ऐतिहासिक समाज शास्त्र
स७२	प्राचीन समाजशास्त्र
ह	**विधि**
ह:९१	विधितत्त्व
ह१	अन्तर्राष्ट्रीय विधि
ह२	भारतीय विधि
ह२:२	सम्पत्ति
ह२:२:४	परावर्तन
ह२:२:६	बंधक
ह२:२११	स्थावर संपत्ति
ह२:२११:३	जमींदार और कृषक
ह२:३	संविदा
ह२:३३	भागहारिता
ह२:४	पर-क्षति
ह२:५	अपराध
ह२:८०१	दीवानी व्यवहार विधि
ह२:८०५	दंड विधि
ह२:९४	साक्ष्य

अन्य देशों के विधि की संख्या प्राप्त करने के लिए, अनुच्छेद ५३ में दी हुई प्रदेश तालिका में से उस देश की संख्या लेकर ह के आगे जोड़ दी जाए।

वर्गसंख्या	विषय
	जाति विशेष के विधि की प्राप्ति के लिए, ह के आगे. उस जाति की संख्या लगानी चाहिए । उदाहरण निम्नलिखित हैं :—
हप२	हिन्दू विधि
हप७	मुसलमानी विधि
	किसी भी देश अथवा जाति के विधि को ह२ भारतीय विधि के उपभेदों के अनुसार विभेदित किया जा सकता है । उदाहरण:—
ह३:२११	स्थावर संपत्ति का अंग्रेजी विधि
ह५३:३	फ्रांसीसी संविदाओं का विधि
ह७३:४	संयुक्त राज्य का पर-क्षति का विधि

५२ सामान्य उपभेद

वर्गसंख्या	विषय
इं	वाङ्मय सूचि
ऊं	व्यवसाय
कं	प्रयोगशाला. वेधशाला
खं	अजायबघर. प्रदर्शनी
घं	नक्शा. मानचित्रावली
छं	संस्था
टं	विश्वकोष, शब्दकोष, पदसूची
ढं	सामयिक
थं	वार्षिक ग्रन्थ, निर्देशिका, तिथिपत्र
नं	सम्मेलन. कांग्रेस, सभा
पं	विधेयक, विहित, कल्प
फं	प्रशासन का विभागीय विवरण तथा समष्टि का तत्समान विवरण
भं	परिगणन (समङ्क)
मं	आयोग, समिति
रं	यात्रा. अभियान. अन्वेषण, वर्णनात्मक वृत्त, खोज. स्थानवर्णन
लं	इतिहास
वं	चरित. पत्र
शं	संकलन. चयन
हं	सार

किसी भी वर्गसंख्या के आगे सामान्य उपभेद लगाये जा सकते हैं । अनुच्छेद ५७ में कुछ उदाहरण दिये गए हैं । उनके द्वारा आनुषङ्गिक रूप में यह दिखलाया गया है कि द्विबिन्दु के सामान्य उपभेदों को प्रदेश तथा कालमुखों द्वारा किस प्रकार वर्धित किया जा सकता है ।

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
५३	**प्रदेश भेद**	२१३५	त्रिचनापल्ली
१	जगत्	२१३६	कोयम्बतूर
१-	साम्राज्य	२१५	पश्चिमी तट
१-३	ब्रिटिश साम्राज्य	२१५३	मलाबार
१३	प्रशान्त देश	२१५४	दक्षिणी कानड़ा
१५	अतलान्तिक देश	२१६१	कुडप्पा
१५१	भूमध्य देश	२१६२	अनन्तपुर
१६	प्राकृतिक भेद	२१६३	बेल्लरी
१६१	भूभाग	२१८	आन्ध्र देश
१६२	द्वीप	२१८१	नेल्लोर
१६३	दलदल; किनारे के भाग	२१८२	गुन्तूर
१६४	अन्तर्जलीय भाग	२१८३	कृष्णा
१६५	जलीय भाग	२१८४	गोदावरी पश्चिम
१६६	पर्वतीय भाग	२१८५	गोदावरी. पूर्व
१६८	वायुमण्डल	२१८६	विजगापट्टम
१न१११	अंग्रेजी भाषाभाषी देश	२१९१	सलेम
१प७	मुसलमानी देश	२१९२	उत्तरी अर्काट
२	मातृदेश (भारत)	२१९३	चित्तूर
२-२	देशी भारत	२२	दक्षिण (मद्रास के बिना)
२-५३	फ्रान्सीसी भारत	२२२	ट्रावणकोर
२१	मद्रास (भारतीय राज्यों के बिना)	२२३	कोचीन
२११	पूर्वी जिले	२२४	मैसूर
२१११	मद्रास	२२५	हैदराबाद
२११४	तंजौर	२२६	कुर्ग
२१३	दक्षिणी जिले	२३१	बम्बई
२१३३	तिन्नवेल्ली	२३१११	अहमदनगर
२१३४	मदुरा	२३११२	शोलापुर
		२३११३	अकलकोट
		२३११५	जमखण्डी

वर्गसंख्या	विषय
२३११६	बीजापुर
२३१२१	धारवाड़
२३१३१	उत्तरी कानड़ा
२३१४१	बेलगाँव
२३१४२	सांगली
२३१४३	सावन्तवाड़ी
२३१४४	कोल्हापुर
२३१५१	रत्नागिरि
२३१५३	सतारा
२३१५४	औन्ध
२३१५५	भोर
२३१५६	पूना
२३१६१	सूरत
२३१६२	भरुच
२३१६३	काठियावाड़
२३१६४	पालनपुर
२३१७१	खानदेश, पश्चिमी
२३१७२	खानदेश, पूर्वी
२३१७३	नासिक
२३१८१	अहमदाबाद
२३१८२	बड़ौदा
२३१८४	पंचमहाल
२३१८५	रेवाकान्ठा
२३२	बलूचिस्तान
२३३	सिन्ध
२३५	उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रदेश
२३६	पंजाब
२३६११	अम्बाला
२३६१२	करनाल
२३६१३	रोहतक
२३६४१	मुल्तान
२३६४४	लायलपुर
२३६७१	अमृतसर
२३६८२	कांगड़ा
२३६८३	चम्बा
२३६८४	शिमला
२३६८५	शिमला राज्य
२३६९१	पंजाब रियासतें
२३६९११	पटियाला
२३६९१२	फरीदकोट
२३६९३	लाहौर
२३६९४	जालन्धर
२३६९६	लुधियाना
२४	हिमालय प्रदेश
२४१	काश्मीर
२४५	नेपाल
२४७	भूटान
२५	उत्तरी भारत
२५१	देहली
२५२	संयुक्त प्रान्त
२५२११	आज़मगढ़
२५२१२	बलिया
२५२१३	बनारस
२५२१४	गाज़ीपुर
२५२१५	जौनपुर
२५२२१	मिर्ज़ापुर
२५२२२	इलाहाबाद
२५२२३	प्रतापगढ़

वर्ग संख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
२५२३१	बांदा	२५२७५	बहराइच
२५२३२	हम्मीरपुर	२५२७६	गोंडा
२५२३३	झांसी	२५२८१	बस्ती
२५२३४	जालौन	२५२८२	गोरखपुर
२५२३५	इटावा	२५२९१	उन्नाव
२५२३६	कानपुर	२५२९२	लखनऊ
२५२३७	फतहपुर	२५२९३	बाराबंकी
२५२४१	हरदोई	२५२९४	रायबरेली
२५२४२	फर्रुखाबाद	२५२९५	सुल्तानपुर
२५२४३	मैनपुरी	२५२९६	फैजाबाद
२५२४४	आगरा	२५३	बिहार और उड़ीसा (१९३६ विभाजन से पूर्व)
२५२४५	मथुरा		
२५२४६	अलीगढ़	२५३११	संथाल परगना
२५२४७	एटा	२५३१२	मानभूम
२५२५१	बदायुं	२५३१५	सिंघभूम
२५२५२	बुलन्दशहर	२५३१६	बालासोर
२५२५३	मेरठ	२५३३१	कटक
२५२५४	मुजफ्फरनगर	२५३३६	उड़ीसा की सामन्त रियासतें
२५२५५	मुरादाबाद		
२५२५६	रामपुर	२५३५१	सम्भलपुर
२५२५७	बरेली	२५३५२	रांची
२५२६१	सहारनपुर	२५३५५	शाहाबाद
२५२६२	देहरादून	२५३७१	सारन
२५२६४	गढ़वाल	२५३७२	चम्पारन
२५२६५	अल्मोड़ा	२५३७३	मुजफ्फरपुर
२५२६६	नैनीताल	२५३७४	दरभंगा
२५२६७	बिजनौर	२५३७५	मुंगेर
२५२७१	सीतापुर	२५३७७	पूर्निया
२५२७२	शाहजहांपुर	२५३९१	हजारी बाग
२५२७३	पीलीभीत	२५३९२	गया
२५२७४	खेरी	२५३९३	पटना

वर्ग.संख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
२५४	उड़ीसा (१९३६ विभाजन के पश्चात्)	२७१३६	नागपुर
		२७१४१	अमरावती
२५४१	कटक	२७१५१	बेतूल
२५४२	पुरी	२७१५२	होशंगाबाद
२५४३	गन्जाम	२७१५४	छिंदवाड़ा
२६१	आसाम	२७१६१	सागौर
२६२	बंगाल	२७१६३	जबलपुर
२६२११	मैमनसिंह	२७१७१	माण्डला
२६२१२	ढाका	२७१८४	रायगढ़
२६२१४	त्रिपुरा	२७१९१	बालाघाट
२६२१५	चटगांव पहाड़ी भूखण्ड	२८	मध्यभारत और राजपूताना
२६२१६	चटगांव	२८१	मध्यभारत
२६२१७	नोआखली	२८१११	रीवां
२६२३३	२४ परगना	२८११३	पन्ना
२६२३४	हावड़ा	२८११८	अन्य पूर्वी रियासतें
२६२३६	मिदनापुर	२८१५१	ग्वालियर
२६२५३	बर्दवान	२८१५२	भूपाल
२६२५५	मुर्शिदाबाद	२८१५४	इन्दौर
२६२७१	दार्जिलिंग	२८१५८	अन्य पश्चिमी रियासतें
२७१	मध्य प्रदेश		
२७१११	बिलासपुर	२८२	राजपूताना
२७११२	रायपुर	२८२११	कोटा
२७११४	दुर्ग	२८२४१	बांसवाड़ा
२७१२१	बस्तर	२८२४३	मेवाड़
२७१३१	नन्दगांव	२८२५१	सिरोही
२७१३२	चान्दा	२८२५२	मारवाड़
२७१३३	यवतमाल	२८२५३	जैसलमेर
२७१३४	अकोला	२८२६१	बीकानेर
२७१३५	वर्धा	२८२७१	जयपुर

वर्गसंख्या	विषय
२८२८१	अलवर
२८२८२	भरतपुर
२८२९१	बूंदी
२८२९२	अजमेर-मेरवाड़ा
२९	द्वीप
२९२	अन्डमन
२९८	सीलोन

१५ अगस्त १९४७ को भारत के विभाजन के पश्चात् यह आवश्यक हो गया है कि २५७ पाकिस्तान के अन्तर्गत क्षेत्रों को २ भारत के भेदों में से निकाल दिया जाए।

भारत के अवयव राज्यों का भाषा के आधार पर पुनर्निर्माण आवश्यक है। एकमात्र वही आधार राष्ट्रिय है। किन्तु उसके लिए कुछ वर्षों का विलम्ब है। उस समय तक अनेक प्रकार के परिवर्तन पुनः पुनः होते ही रहेंगे। अतः 'द्विबिन्दु वर्गीकरण' की तृतीय आवृत्ति में दी हुई तालिका के संशोधन का प्रयत्न नहीं किया गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ की अंग्रेजी आवृत्ति में केवल उपर्युक्त अनुच्छेद में सुझाए हुए जिलों को निकाल दिया गया है। यहां कुछ विशिष्ट भेद दिए जा रहे हैं।

वर्गसंख्या	विषय
२५७	पाकिस्तान
२५७१	पूर्वी पाकिस्तान
२५७२	पूर्वी बंगाल
२५७२१	चटगांव डिविजन
२५७२२	ढाका डिविजन
२५७२२२	ढाका
२५७२३	राजशाही डिविजन
२५७२३१	रंगपुर
२५७२३२	दिनाजपुर
२५७२३३	बोगरा
२५७२३४	राजशाही
२५७२३५	पबना
२५७२३६	नदिया
२५७२३७	जैसोर
२५७२३८	खुलना
२५७३	पश्चिमी पाकिस्तान
२५७४	सिन्ध
२५७४१	थार-परकर
२५७४२	हैदराबाद
२५७४३	करांची
२५७४४	दादू
२५७४५	नवाबशाह
२५७३६	खैरपुर
२५७४७	लड़काना
२५७४८	सक्खर
२५७५	बलूचिस्तान
२५७६	उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रान्त
२५७७	पश्चिमी पंजाब
३	इष्ट देश (ग्रेट ब्रिटेन)
३१	इंगलैंड

वर्गसंख्या	विषय
३२	वेल्स
३३	स्कॉटलैंड
३४	आयरलैंड
४	एशिया
४१	चीन
४२	जापान
४३	दक्षिण पूर्वी एशिया
४३१	हिन्द चीन
४३३	स्याम
४३५	मलाया रियासतें
४३६	पूर्वी द्वीप समूह
४३८	ब्रह्मा
५	यूरोप
५१	यूनान
५२	इटली
५३	फ्रांस
५४१	स्पेन
५४२	पुर्तगाल
५५	जर्मनी
५७	स्कैन्डिनेविया
५७१	स्वीडन
५७२	डेनमार्क
५७३	नार्वे
५७४	आइसलैंड
५७५	फिनलैंड
५८	रूस
५९१	टर्की
५९२	बालकन राज्य
५९३१	आस्ट्रिया
५९३२	हंगरी

वर्गसंख्या	विषय
५९४	स्विट्जरलैंड
५९५	पोलैंड
५९६	नीदरलैंड
५९६१	बेलजियम
५९६२	हॉलैंड
६	अफ्रीका
६३	दक्षिणी अफ्रीका संघ
६७१	मिस्र
६८२	अबासीनिया
७	अमेरिका
७१	उत्तरी अमेरीका
७१९१	ग्रीनलैंड
७२	कैनाडा
७३	संयुक्त राज्य
७४	मेक्सिको
७५	मध्य अमेरिका
७६१	दक्षिणी अमेरिका
७६२	वेस्ट इण्डीज
८	आस्ट्रेलिया
९	महासागर
९१	हिन्द महासागर
९३	प्रशान्त महासागर
९५	अतलान्तिक महासागर

तत्त्वसाधन के लिए वर्ण-युक्ति लगाने के पूर्व प्रदेश संख्या के आगे इनका उपयोग किया जाए।

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
(१) त	तड़ाग, झील इत्यादि	१५१२	महाराष्ट्री
(२) न	नगर, कस्बा, गांव,	१५१६	अर्धमागधी
	इत्यादि	१५१७	मागधी
(३) प	पर्वत, पहाड़ी,	१५१८	अपभ्रंश
	चोटी, इत्यादि	१५१९८	सिंहली
(४) म	मरुस्थल	१५२	हिन्दी
(५) स	सरिता, नहर, इत्यादि	१५३	पंजाबी
	उदाहरण	१५४	गुजराती
२पह३	हिमालय	१५५	मराठी
२सब८	ब्रह्मपुत्र	१५६	उड़िया
२सग१	गङ्गा	१५७	बंगाली
२सस६	सिन्ध	१५८	नेपाली
२३१नअ३	अहमदाबाद	१६	ईरानी
२३१नप७	पूना	१६४	फारसी
२५२नब२	बनारस	१६८	उर्दू
४तक१	कैस्पियन सागर	२	सेमिटिक
६मस१	सहारा	२५	हिब्रू
६सन५	नील	२८	अरबी
	५४ भाषाभेद	३	द्राविड़
१	भारोपीय	३१	तामिल
११	ट्यूटोनिक	३२	मलयालम
१११	अंग्रेजी	३३	कनाडी
११३	जर्मन	३५	तेलगू
१२	लैटिन	४१	चीनी
१२२	फ्रैंच	४२	जापानी
१२४	पुर्तगीज	४३३	स्यामी
१३	ग्रीक	४३५	मलय
१५	संस्कृत		
१५१	प्राकृत	४३८	बर्मी
१५११	पालि	६६७८७	एस्पेरेन्टो

वर्गसंख्या	विषय	वर्गसंख्या	विषय
	५५ कालभेद	ढ	१८०० से १८९९ ई.
इ	१९९९ ई पू. से पूर्व	थ	१९०० से १९९९ इत्यादि
ऊ	१९९९ से १००० ई. पूर्व		उदाहरण
क	९९९ से १ ई. पू.	क६	३००-३९९ ई पू.
ख	१ से ९९९ ई.	क६७	३२० से ३२८ ई. पू
ग	१००० से १०९९ ई.	ख४	४००-४९९ ई.
घ	११०० से ११९९ ई.	ख४०	४०० से ४०९ ई.
च	१२०० से १२९९ ई.	झ६	१५६०-१५६९
छ	१३०० से १३९९ ई.	झ६४	१५६४
ज	१४०० से १४९९ ई.	थ४	१९४०-१९४९
झ	१५०० से १५९९ ई.	थ४२	१९४२
ट	१६०० से १६९९ ई.	थ६	१९६०-१९६९
ठ	१७०० से १७९९ ई.	थ६९	१९६९

५६ पुस्तक संख्या

किसी एक विशिष्ट विषय के विभिन्न ग्रन्थों को एक दूसरे से पृथक् करने के लिए वर्ग संख्या के आगे जो अतिरिक्त संख्या लगाई जाती है उसे ग्रन्थ संख्या कहते हैं।

५६१ तिथि संख्या

ग्रन्थ संख्या में बहुधा काल संख्या ही रहती है। वह ग्रन्थ के प्रकाशन वर्ष को सूचित करती है। उसका निर्माण तालिका ५५ के अनुसार किया जाता है। उदाहरणार्थ. प्रस्तुत ग्रन्थ की ग्रन्थसंख्या थ५१ है। यह तब किया जाता है जब ग्रन्थ ग्रन्थालय की इष्ट भाषा में हो।

५६२ भाषा संख्या

यदि ग्रन्थ और किसी भाषा में हो तो उसकी भाषा की संख्या को उसकी वर्ष संख्या के पूर्व लगा दिया जाता है। उदाहरणार्थ. प्रस्तुत ग्रन्थ की अंग्रेजी आवृत्ति की संख्या १११थ५१ होगी।

५६३ परिग्रहण अंश

यदि ग्रन्थालय में किसी एक ग्रन्थ की दो या उससे अधिक

प्रतियां हों, अथवा किसी एक विशिष्ट विषय में उसी वर्ष में एक से अधिक ग्रन्थ संख्या हो तो हम द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ इत्यादि ग्रन्थों के लिए क्रमशः वर्ष संख्या के आगे १,२,३ इत्यादि अङ्क जोड़ देते हैं। उदाहरणार्थ, इस ग्रन्थ की द्वितीय प्रति की संख्या थ५११ होगी।

५६४ संपुट संख्या

यदि किसी ग्रन्थ के दो या उससे अधिक संपुट हों तो उन संपुटों के तत्त्वसाधन के लिए वर्ष संख्या अथवा ग्रन्थ संख्या के परिग्रहण अंश के पश्चात (जैसा अवसर हो) एक बिन्दु लगाकर उसके आगे संपुट संख्या लिखी जाती है। उदाहरणार्थ, यदि प्रस्तुत ग्रन्थ के दो संपुट हों तो उनकी ग्रन्थ संख्याएं थ५१.१ तथा थ५१.२ होंगी। द्वितीय प्रति के लिए वे थ५११.१ तथा थ५११.२ होंगी।

५६५ लेखन शैली

ग्रन्थ संख्या दो प्रकार से लिखी जाती है। या तो वर्ग संख्या के नीचे या उसके दाहिनी ओर, कुछ स्थान छोड़ कर। स्थान इतना छोड़ा जाए मानो वह दूसरा पद हो। वर्ग संख्या तथा पुस्तक संख्या दोनों मिलाकर क्रामक संख्या कही जाती है। उदाहरणाथ, प्रस्तुत ग्रन्थ की क्रामक संख्या या तो २२ थ५१ अथवा २२
थ५१ इस प्रकार लिखी जाएगी। पहली शैली सूची संलेखों में और दूसरी शैली आख्या पत्र पृष्ठ पर अपनाई जाती है।

५७ उदाहरण

नीचे क्रामक संख्याओं के कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं। उनके द्वारा यह दिखलाया गया है कि उपर्युक्त तालिकाओं का किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है। सामयिकों के सम्बन्ध में पुस्तक संख्या उस संपुट की दी गई है जिसका उल्लेख है।

क्रामक संख्या	
३२:थ३६ थ३६.१-.५	हिन्दी विश्वभारती. ५ संपु.
५२:ढ६६ थ२६	सरस्वती. संपु. ३७. १६३६.
ऊ१श१:१ थ२५	भास्कराचार्य : लीलावती
न१५:कश१:१:६३ थ४१	नागेश भट्ट : लघुशब्देन्दुशेखर
ल२:२२१वंढ८६ थ४८	नेहरू (जवाहरलाल) : मेरी कहानी

अध्याय ६

सूचीकरण

ग्रन्थालय सूची के धर्म तथा अधिकार, ग्रन्थालय शास्त्र के सूत्रों की दृष्टि से अनुच्छेद १४६ में भली भांति प्रतिपादित हैं। वहां उनकी पर्याप्त चर्चा की जा चुकी है। हमने यह सिद्ध पाया कि वे सभी सूत्र उसी प्रकार की सूची के पक्ष में मत देंगे जो पाठक के लिए उसके अभीष्ट विशिष्ट ग्रन्थ को न्यूनतम समय में प्रस्तुत कर दे। अब वह ग्रन्थ चाहे कोई भी हो और उस सम्बन्ध में पाठक की स्मृति कितनी ही सीमित हो। संभव है उस ग्रन्थ के विषय में पाठक को कुछ विशेष स्मरण न हो। अतः यह आवश्यक है कि प्रत्येक ग्रन्थ का, उससे सम्बद्ध प्रत्येक संगत विवरण के आधार पर संलेख किया जाए। अर्थात् उसका विशिष्ट विषय अथवा प्रतिपाद्य विषय, ग्रन्थकार, उसका सहकार, यदि कोई हो, संपादक, अनुवादक, टीकाकार, चित्रकार, ग्रन्थ की माला, माला के संपादक आदि सभी के नामों से सूची के संलेख बनाने पड़ेंगे। यहां तक कि जब आख्या काल्पनिक हो और ग्रन्थ के प्रतिपाद्य विषय को स्पष्ट न करे तो उसके नाम से भी संलेख बनाना पड़ेगा। आज यह प्रथा भली भांति मान ली गई है कि ग्रन्थ के मुख्य संलेख में ग्रन्थ के प्रतिपाद्य विषय को प्रमुख स्थान दिया जाए। उस मुख्य संलेख में ही ग्रन्थ के विषय में विस्तृततम विवरण दिया जाता है। उसमें विषय को ही प्रधानता मिलनी चाहिए। अतः उस संलेख के अग्रानुच्छेद में स्वभावतः ग्रन्थ की क्रामक संख्या ही दी जाती है। इस लिए उसे 'अनुवर्ग सूची कल्प' (*Classified catalogue code*) की परिभाषा के अनुसार क्रामक संख्या संलेख भी कहा जा सकता है। इस प्रकार के मुख्य संलेख का उदाहरण यह है :—

उदाहरण १

१.१ २२ थ५१
रंगनाथन (श्रीयाली रामामृत) तथा नागर (मुरारि लाल).
ग्रन्थालय प्रक्रिया.
(भारतीय ग्रन्थालय संघ, हिन्दी ग्रन्थमाला, २).
१२३४५

प्रस्तुत ग्रन्थ का आख्या पत्र मुख निम्नलिखित है :—

ग्रन्थालय प्रक्रिया
श्री. रा. रंगनाथन
तथा
मुरारि लाल नागर
देहली
भारतीय ग्रन्थालय संघ
१६५१

और इसका उपाख्या पत्र मुख निम्नलिखित है :—

भारतीय ग्रन्थालय संघ
हिन्दी ग्रन्थमाला, २
ग्रन्थालय प्रक्रिया

६१ मुख्य संलेख

मुख्य संलेख में पांच अनुच्छेद हो सकते हैं। यह ऊपर के उदाहरण में दिखलाया ही गया है। जो ग्रन्थ किसी माला में न प्रकाशित हुए हों उनके लिए केवल चार ही अनुच्छेद होंगे। मुख्य संलेख के विभिन्न अनुच्छेदों द्वारा निम्नलिखित विवरण (सूचन) दिया जाता है :—

प्रथम अथवा अग्र अनुच्छेद ग्रन्थ की क्रामक संख्या।

द्वितीय अनुच्छेद ग्रन्थकार का नाम. (व्यक्ति अथवा समष्टि); जो ग्रन्थ ग्रन्थकार के नाम के बिना प्रकाशित हुए हों, अथवा कूट नाम के साथ प्रकाशित हुए हों तथा अन्य कतिपय अवसरों पर ग्रन्थकार के नाम का प्रतिनिधि।

तृतीय अनुच्छेद. ग्रन्थ का आख्या भाग, जो बहुधा आख्या पत्र की प्रतिलिपि होता है। उसमें से असार एवं अनावश्यक शब्द निकाल दिये जाते हैं। उसमें संपादक अथवा अनुवादक आदि का संलेख किया जाता है।

चतुर्थ अनुच्छेद. ग्रन्थमाला का नाम तथा ग्रन्थ की क्रमिक संख्या। यह कोष्ठक में होता है।

पञ्चम अनुच्छेद. परिग्रहण संख्या।

६२ अतिरिक्त संलेख

ग्रन्थ के अन्य संलेख इसी मुख्य संलेख से लिये जाएंगे। अर्थात् , वर्ग संख्या से कतिपय लेख उद्भूत होंगे। वे लेख उस वर्ग के अन्य ग्रन्थों द्वारा सामान्य रूप से अङ्गीकृत किए जाएंगे। ग्रन्थकार तो है ही, उसके अतिरिक्त अनुवादक संपादक तथा उस वर्ग के जिस किसी व्यक्ति का नाम मुख्य संलेख के आख्या भाग में लिखा हुआ हो वे सब नाम विभिन्न संलेखों के उद्भव में कारण होंगे। इन सब के लिए विभिन्न संलेख बनाने पड़ेंगे। ग्रन्थमाला के कारण एक और संलेख लिखा जाएगा। परिग्रहण संख्या ही एक ऐसा वस्तु है जिसके कारण कोई संलेख नहीं लिखा जाता। इन सभी गौण संलेखों को अतिरिक्त संलेख कहा जाता है। इनमें जो संलेख अन्य ग्रन्थों के द्वारा सामान्य रूप से अङ्गीकृत किए जाते हैं वे सामान्य अतिरिक्त संलेख कहे जाते हैं, तथा जो किसी विशिष्ट ग्रन्थ से ही सम्बन्ध रखते हैं वे विशिष्ट अतिरिक्त संलेख कहे जाते हैं।

६२१ सामान्य अतिरिक्त संलेख

६२११ वर्ग निर्देशी संलेख

ये संलेख ग्रन्थ की वर्ग संख्या से बनाये जाते हैं। इन्हें वर्ग निर्देशी संलेख कहा जाता है। ऊपर दिए हुए उदाहरण की वर्ग संख्या हम लें और उन संलेखों का परीक्षण करें जो उस वर्ग संख्या से बनाये जा सकते हैं। इस विषय में प्रथम पदक्रम यह है कि वर्ग संख्या को वर्गों की परंपरा के रूप में उपस्थापित किया जाए। नीचे उसे प्रदर्शित किया जा रहा है :—

२ = ग्रन्थालय शास्त्र

↓

२२ = सर्वजन ग्रन्थालय

उपरिनिर्दिष्ट शृङ्खला में दो कड़ियां हैं। दोनों ही सार्थक पदों की द्योतक हैं। इनमें से प्रत्येक का अग्र शब्द अथवा मुख्य शीर्षक के रूप में उपयोग किया जाएगा। साथ ही, यदि आवश्यक हो तो तत्त्वसाधक पद भी लगाये जाते हैं। इस प्रकार निम्नलिखित वर्ग निर्देशी संलेख लिखे जाएंगे :—

१.२ सर्वजन ग्रन्थालय.

प्रस्तुत वर्ग के तथा उसके उपभेदों के ग्रन्थों के लिए सूची के अनुवर्ग भाग में आगे दी हुई वर्गसंख्या के नीचे देखिए २२

१.३ ग्रन्थालय शास्त्र.

प्रस्तुत वर्ग के तथा उसके उपभेदों के ग्रन्थों के लिए सूची के अनुवर्ग भाग में आगे दी हुई वर्ग संख्या के नीचे देखिए २

वर्ग निर्देशी संलेख द्वारा पाठक सूची के मुख्य भाग के उस प्रदेश में पहुँचता है जहाँ उसकी अभिरुचि के ग्रन्थ क्रमशः संलिखित रहते हैं। उसके इष्ट विषय का संपूर्ण प्रदेश उसकी आंखों के सामने आ जाता है। इस विषय में अधिक विवरण जानने के लिए हमारे 'ग्रन्थालय सूची : तत्त्व एवं प्रक्रिया' (*Library catalogue: Fundamentals and procedure*) तथा 'अनुवर्ग सूची कल्प' (*Classified catalogue code*) का अवलोकन किया जा सकता है।

इस प्रकार के संलेख उसी वर्ग संख्या वाले अन्य ग्रन्थों के लिए भी सामान्य (समान रूप के) होंगे। अतः इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यदि और किसी ग्रन्थ की सूची बनाते हुए इस प्रकार का कोई और संलेख बना लिया हो तो पुनः उसी प्रकार का दूसरा संलेख न बनाया जाए।

६२१२ नामान्तर निर्देशी संलेख

सूची में ऐसे संलेख भी दिए जाते है जिनमें माला के संपादक के नाम का उपयोग किया जाता है। ये संलेख पाठक का ध्यान उस संलेख की ओर आकृष्ट करते हैं जिसमें माला का नाम शीर्षक के रूप में व्यवहृत होता है। जो वस्तु शीर्षक के रूप में व्यवहृत हो उसका यदि कोई वैकल्पिक नाम हो तो अस्वीकृत नाम से स्वीकृत नाम की ओर निर्देश किया जा सकता है। इस प्रकार के संलेखों को नामान्तर निर्देशी संलेख कहा जाता है।

६२२ ग्रन्थ निर्देशी संलेख

यदि पाठक को उसके इष्ट विशिष्ट ग्रन्थ के सम्बन्ध में अधिक स्मृति न हो, और केवल उसके ग्रन्थकार. सहकार. सम्पादक अथवा उसी प्रकार के किसी और व्यक्ति का नाम स्मरण हो तो उसकी भी इष्ट सिद्धि के लिए ये संलेख लिखे जाते है। इनका कार्य यह है कि पाठक को जिस नाम का स्मरण हो उस नाम से उसके ग्रन्थ की ओर निर्देश कर दिया जाए। उस नाम के द्वारा उसे उसका ग्रन्थ प्राप्त करा दिया जाए। इस अध्याय के आरम्भ में उदाहरण के रूप में दिये हुए ग्रन्थ के लिए निम्नलिखित ग्रन्थ निर्देशी संलेख होंगे।

१.४ रंगनाथन (श्रीयाली रामामृत) तथा नागर (मुरारि लाल).
ग्रन्थालय प्रक्रिया. २२ थ५१

१.५. नागर (मुरारि लाल). सहग्रन्थ.
ग्रन्थालय प्रक्रिया, रंगनाथन तथा नागर कृत.
२२ थ५१

१.६. भारतीय ग्रन्थालय संघ. हिन्दी ग्रन्थमाला.
२ रंगनाथन तथा नागर : ग्रन्थालय प्रक्रिया.
२२ थ५१

उपर्युक्त संलेखों का मुख्य संलेख से मिलान किया जाए और उन विवरणों पर ध्यान दिया जाए जो छोड़ दिए गए है।

उदाहरण २

निम्नलिखित ग्रन्थ को द्वितीय उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। एक खड़ी रेखा पङ्क्ति के भेद को सूचित करती है :—

आख्या पत्र मुख : महाकवि श्री बिल्हण विरचित। विक्रमाङ्कदेवचरित। महाकाव्य। संपादक। शास्त्री मुरारि लाल नागर। साहित्याचार्य। साधोलाल रिसर्च स्कॉलर। सरस्वती भवन, बनारस। १९४५

उपाख्या पत्र मुख :

प्रिन्सेस आफ वेल्स। सरस्वती भवन। ग्रन्थमाला। प्रधान संपादक। डा० मङ्गलदेव शास्त्री। सं. ८२। विक्रमाङ्कदेवचरित।

मुख्य संलेख

२.१ द१५:१ग४०:१ थ४५

बिल्हण.

विक्रमाङ्कदेवचरित. मुरारि लाल नागर संपा.

(प्रिन्सेस आफ वेल्स. सरस्वती भवन ग्रन्थमाला, मंगलदेव शास्त्री संपा., ८२).

११३४५

वर्ग निर्देशी संलेख

२.२ विक्रमाङ्कदेवचरित.

प्रस्तुत वर्ग के तथा उसके उपभेदों के ग्रन्थों के लिए सूची के अनुवर्ग भाग में आगे दी हुई वर्ग संख्या के नीचे देखिए

द१५:१ग४०:१

२.३ बिल्हण. काव्य.

प्रस्तुत वर्ग के तथा उसके उपभेदों के ग्रन्थों के लिए सूची के अनुवर्ग भाग में आगे दी हुई वर्ग संख्या के नीचे देखिए

द१५:१ग४०

विक्रमाङ्कदेवचरित काव्यात्मक कृति होने के नाते. तथा बिल्हण कवि होने के नाते वर्ग रूप में माने गए हैं तथा उनके लिए वर्ग निर्देशी संलेख दिए गए हैं।

२.४ काव्य. संस्कृत.

प्रस्तुत वर्ग के तथा उसके उपभेदों के ग्रन्थों के लिए सूची के अनुवर्ग भाग में आगे दी हुई वर्ग संख्या के नीचे देखिए

द१५:१

२.५ संस्कृत. साहित्य.

प्रस्तुत वर्ग के तथा उसके उपभेदों के ग्रन्थों के लिए सूची के अनुवर्ग भाग में आगे दी हुई वर्ग संख्या के नीचे देखिए

द१५

२.६ साहित्य.

प्रस्तुत वर्ग के तथा उसके उपभेदों के ग्रन्थों के लिए सूची के अनुवर्ग भाग में आगे दी हुई वर्ग संख्या के नीचे देखिए

द

अवाञ्छित होने के कारण 'टयूटोनिक-साहित्य' इस शीर्षक का संलेख नहीं दिया गया है।

संपादक निर्देशी संलेख

२.७ नागर (मुरारि लाल). संपा.

विक्रमाङ्कदेवचरित, बिल्हणकृत.

द१५:१ग४०:१ थ४५

माला निर्देशी संलेख

२.८ प्रिन्सेस आफ वेल्स, सरस्वती भवन ग्रन्थमाला.

८२ बिल्हण : विक्रमाङ्कदेवचरित.

द१५:१ग४०:१ थ४५

माला संपादक निर्देशी संलेख

२.९ मंगलदेव शास्त्री. संपा.

द्रष्टव्य

प्रिन्सेस आफ वेल्स, सरस्वती भवन

ग्रन्थमाला.

प्रस्तुत ग्रन्थ में तथा उसकी इस आवृत्ति में कुछ विषय ऐसे हैं जो ग्रन्थ की वर्ग संख्या द्वारा प्रकट नहीं हो सकते। यदि उन्हें प्रकाश में न लाया गया तो पाठक उनसे वञ्चित रहेंगे, तथा वे (विषय) पाठक से वञ्चित रहेंगे। यह ग्रन्थालय शास्त्र सूत्रों के लिए असह्य है। अत: सूची में ऐसे विषयों के लिए विशिष्ट व्यवस्था की जाती है।

विक्रमाङ्कदेवचरित महाकाव्य में तथा उसकी इस प्रस्तुत आवृत्ति में निम्नलिखित विषय निहित रूप में विद्यमान हैं:—

(१) कल्याण चालुक्यों का इतिहास;
(२) कल्याण चालुक्यों के इतिहास की वाङ्मय सूचि;
(३) काश्मीर देश का भौगोलिक वर्णन;
(४) काश्मीर देश का तत्कालीन इतिहास;
(५) महाकवि बिल्हण का जीवन चरित;
(६) महाकवि बिल्हण की समालोचना; तथा
(७) विक्रमाङ्कदेवचरित की समालोचना.

अन्तर्विषयी संलेख

२.१० ल२२५नक१:१:ग९

और द्रष्टव्य

द१५:१ग४०:१ थ४५

बिल्हण : विक्रमाङ्कदेवचरित. सर्ग १-१७ तथा

उपो. पृष्ठ १८-४०.

२.११ ल२२५नक१:१३

और द्रष्टव्य

द१५:१ग४०:१ थ४५

बिल्हण: विक्रमाङ्कदेवचरित. प्राक्कथन पृ. ६-७.

२.१२ र८:२४१:ग६
और द्रष्टव्य
द१५:१ग४०:१ थ४५
बिल्हण : विक्रमाङ्कदेवचरित. सर्ग १८ तथा
उपो. पृ. ८—१०.

२.१३ ल२४१:१:ग६
और द्रष्टव्य
द१५:१ग४०:१ थ४५
बिल्हण : विक्रमाङ्कदेवचरित. सर्ग १८ तथा
उपो. पृ. ८-१०.

२.१४ द१५:१ग४०वं
और द्रष्टव्य
द१५:१ग४०:१ थ४५
बिल्हण : विक्रमाङ्कदेवचरित. सर्ग १८ तथा
उपो. पृ. ५-१८.

२.१५ द१५:१ग४०:६
और द्रष्टव्य
द१५:१ग४०:१ थ४५
बिल्हण : विक्रमाङ्कदेवचरित. उपो. पृ. ५-१८.

२.१६ द१५:१ग४०:१:६
और द्रष्टव्य
द१५:१ग४०:१ थ४५
बिल्हण : विक्रमाङ्कदेवचरित. उपो. पृ.१६-१८.

मुख्य संलेख का पृष्ठभाग

ल२२५नक१:१ सर्ग १-१७	विक्रमाङ्कदेवचरित.
तथा उपो. पृ. १८-४०.	बिल्हण. काव्य.
ल२२५नक१:१ई प्राक्कथन	काव्य. संस्कृत.
पृ. ६-७.	संस्कृत. साहित्य.
र८:२४१:ग६ सर्ग१८	साहित्य.
तथा उपो. पृ. ८-१०.	कल्याण चालुक्य. इतिहास.
ल२४१:१:ग६ सर्ग१८	वाङ्मय सूचि. कल्याणचालुक्य
तथा उपो. पृ. ८-१०.	इतिहास.
द१५:१ग४०वं सर्ग१८	काश्मीर. यात्रा.*
तथा उपो. पृ ५-१८.	काश्मीर. इतिहास.
द१५:१ग४०:६ उपो. पृ.	चरित. बिल्हण.
५-१८.	समालोचना. बिल्हण
द१५:१ग४०:१:६ उपो. पृ.	समालोचना. विक्रमाङ्कदेवचरित.
१६-१८	नागर (मुरारि लाल). संपा.
	प्रिन्सेस ऑफ वेल्स, सरस्वती भवन ग्रन्थमाला.
	मंगलदेव शास्त्री. संपा.

मुख्य संलेख के पृष्ठ भाग में ग्रन्थ के सभी अतिरिक्त संलेखों का लेखन किया जाता है। इससे लाभ आगे बताया गया है।

मुख्य पत्रक के दक्षिण पार्श्व में दी गई वस्तुओं में आदि के १२ में से प्रत्येक के लिए एक एक वर्ग निर्देशी संलेख किया जाएगा।

उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों के उदाहरणों द्वारा यह दिखाया गया है कि संलेखों के लिखने की शैली क्या है। इनमें से प्रत्येक संलेख में कितने विभाग हैं, कितना प्रान्त भाग छोड़ा गया है और क्रामक संख्या तथा परिग्रहण संख्या किस स्थान पर लिखी गई है—इन बातों पर विशेष ध्यान दिया जाए। हमारे 'अनुवर्ग सूची कल्प' में (*Classified catalogue code*) इस सम्बन्ध की विस्तृत धाराएं दी गई हैं।

६३ पत्रक सूची

अन्तिम संलेख में उन सब संलेखों का निर्देश है जो इस ग्रन्थ के लिए बनाए गए हैं। यह आवश्यक है कि किसी विशेष ग्रन्थ से सम्बद्ध संलेखों को जब चाहे तब खोज निकाला जा सके। कारण, बहुधा उन संलेखों में आगे चलकर संशोधन करना पड़ता है। किसी समय किसी ग्रन्थ का ग्रन्थालय से बहिष्करण भी करना पड़ता है। उस समय उससे सम्बन्ध रखने वाले संलेखों का बहिष्करण भी आवश्यक हो सकता है। जब सूची उपयोग में आती रहे उस समय भी सुधार की अथवा पुनः पुनः वर्धन की आवश्यकता पड़ती रहती है। अतः यह नियम बनाया जाता है कि किसी ग्रन्थ के सम्बन्ध में जितने भी संलेख हों उन सब का निर्देश उस ग्रन्थ के मुख्य पत्रक के पीछे कर दिया जाए। यह भी सर्वथा आवश्यक है कि ग्रन्थालय सूची में जो क्रम आरम्भ से ही हो उसमें किसी प्रकार की अव्यवस्था किए बिना पूर्व क्रम विद्यमान रक्खा जाए।

उपर्युक्त समस्त उद्देश्यों की सिद्धि तभी हो सकती है जब सूची को पत्रकों के रूप में रक्खा जाए। सामान्यतः प्रत्येक पत्रक में एक ही संलेख होता है। मानित पत्रक ५″ × ३″ × .०१″ आकार के होते हैं। सुन्दरता की सिद्धि के लिए यह वाञ्छनीय है कि रेखायुक्त पत्रकों का उपयोग किया जाए।

संलेखों को हाथों से ही लिखना सर्वोत्तम है। छोटे ग्रन्थालयों में तो यही सन्तोषजनक रीति है। किन्तु हाथों से लिखने में यह भय है कि भिन्न भिन्न प्रकार की लेखन शैलियों के सम्मिश्रण से ग्रन्थालय सूची खिचड़ी बन जाएगी। प्रत्येक व्यक्ति भिन्न प्रकार से लिखेगा। अतः यह वाञ्छनीय है कि सूचीकार अवैयक्तिक लिपि का अभ्यास करें। इसे ग्रन्थालय लिपि कहा जाता है।

ग्रन्थालय लिपि का अर्थ यही है कि संलेख के सब वर्ण तथा अङ्क स्पष्ट, ऊर्ध्वग और विरल हों। हमारे 'अनुवर्ग सूची कल्प' में इस विषय की विस्तृत धाराएं दी गई हैं। इनमें उपर्युक्त विषय के तथा समस्त प्रकार के संलेखों के वरण तथा उपकल्पन के प्रश्नों का विस्तृत विवेचन है, तथा उनका समुचित समाधान भी दिया गया है।

ग्रन्थालय में अनेक जटिल ग्रन्थ आते रहते हैं। कई ग्रन्थ नैकसम्पुटक होते हैं। सामयिक प्रकाशनों की अपनी स्वतन्त्र समस्याएं ही अलग हैं। इन सब के लिए विभिन्न प्रकार के विशेष संलेख बनाए जाते हैं। उपर्युक्त ग्रन्थ में उन विषयों के लिए भी विस्तृत एवं यथार्थ धाराएं दी गई हैं। किन्तु हमारे भारतीय छोटे मोटे ग्रन्थालयों में इतना विशाल संग्रह ही नहीं होता कि उन धाराओं की आवश्यकता पड़े। जहां कहीं आवश्यक हो. वहां इस ग्रन्थ के उपयोक्ता भी उस 'कल्प' का अवलोकन कर सकते हैं। आगे कुछ धाराएं दी जा रही हैं। साधारण ग्रन्थालयों में सूचीकरण के लिए वे पर्याप्त होंगी ऐसी आशा है।

६४ धाराएं

जिन धाराओं का यहां 'कल्प' से भागोद्ग्रह किया जा रहा है उनकी संख्याएं वे ही दी गई हैं जो कल्प में हैं। यह सुविधा के लिए किया गया है। कहीं कहीं धाराओं में थोड़ा बहुत संशोधन-परिवर्तन भी कर दिया गया है।

१ मुख्य संलेख

११ क्रामक संख्या

११ क्रामक संख्या ग्रन्थ के आख्या पत्र पृष्ठ से ली जाए। वर्गकार वर्गीकरण की धाराओं के अनुसार उसे यथास्थान लगा देता है।

१११ वर्ग संख्या तथा पुस्तक संख्या (चिह्न) के बीच तीन स्थान रिक्त छोड़े जाएं।

१२ शीर्षक का वरण

१२ ग्रन्थ के स्वरूप के अनुसार, निम्नलिखितों में से कोई एक शीर्षक होगा :—

१. व्यक्ति ग्रन्थकार का नाम;
२. दो व्यक्ति ग्रन्थकारों के नाम;
३. समष्टि ग्रन्थकार का नाम;
४. दो समष्टि ग्रन्थकारों के नाम;
५. कैतव नाम, एक अथवा दो;

६. ग्रन्थकार से भिन्न व्यक्ति का नाम, अर्थात् सहग्रन्थकार से भिन्न सहकार का नाम;

७. ग्रन्थकारों से भिन्न दो व्यक्तियों के नाम, अर्थात् सहग्रन्थकारों से भिन्न दो सहकारों के नाम; तथा

८. आख्या प्रथम शब्द; उपपद अथवा मानपद छोड़कर।

१२११ ईसाई तथा यहूदी नाम

१२११ वर्तमान काल के ईसाई तथा यहूदी नामों के लिए, नामान्त्य शब्द (शिरोनाम) आदि में लिखा जाए तथा नामादिशब्द (एक अथवा अनेक) उसके पश्चात् लगा दिया जाए।

उदा. आइनस्टाइन (अलफ्रेड).
शेक्सपीयर (विलियम).
शॉ (जार्ज बर्नार्ड).

१२१२ हिन्दू नाम

१२१२ वर्तमान काल के हिन्दू नामों के लिए अन्तिम तत्त्व-शब्द आरम्भ में लिखा जाए तथा और सभी पूर्व शब्द तथा नामाग्राक्षर उसके पश्चात् लगा दिये जाएं। किन्तु, दक्षिण भारतीय नामों के लिए, यदि अन्तिम तत्त्व-शब्द केवल जाति अथवा उपजाति को सूचित करे और उपान्त्य शब्द आख्या पत्र पर पूर्ण रूप में दिया हुआ हो तो दोनों तत्त्व शब्द, उनके स्वाभाविक क्रम में, आरम्भ में लिखे जाएं।

ग्रन्थकार का नाम	मातृभाषा
१. ठाकुर (रवीन्द्रनाथ)	बंगाली
२. मालवीय (मदनमोहन)	हिन्दी
३. राय (लाजपत)	पंजाबी
४. गांधी (मोहनदास करमचन्द)	गुजराती
५. गोखले (गोपालकृष्ण)	मराठी
६. राधाकृष्णन (सर्वपल्ली)	तेलगू
७. शङ्करन नायर (चेट्टूर)	मलयालम
८. चेट्टूर (जी. के.)	मलयालम

ग्रन्थकार का नाम	मातृभाषा
९. कृष्णमाचारी (पी.)	तामिल
१०. श्रीनिवास शास्त्री (वी. एस)	तामिल
११. रामचन्द्र दात्तिनार (वी. आर.)	तामिल
१२. शिवस्वामी ऐयर (पी. एस.)	तामिल
१३. ऐयर (ए. एस. पी.)	तामिल
१४. रमन (सी. वी.)	तामिल
१५. राजगोपालाचारी (पी.)	तामिल
१६. चारी (पी. वी.)	तामिल
१७. मंगेश राव (सवूर)	कन्नड़
१८. सवूर (आर. एस.)	कन्नड़

८, १३, १४, १६ तथा १८ उदाहरणों में जाति नाम अथवा अन्य अवैयक्तिक नामों को ही प्रथम स्थान देना पड़ेगा, कारण स्वयं ग्रन्थकारों ने आख्या पत्र पर उन नामों के लिए पक्षपात दिखलाया है। उन्होंने अपने नाम के वैयक्तिक शब्दों को जान बूझकर नामाक्षर बना दिया है।

१२२ सहग्रन्थकार

१२२ यदि आख्या पत्र पर केवल दो ही व्यक्ति-ग्रन्थकारों के नाम हों तो दोनों नामों का शीर्षक के रूप में उपयोग किया जाए। उन दोनों को संयोजक 'तथा' से जोड़ दिया जाए।

उदा. श्रीनिवासन (जी. ए.) तथा कृष्णमाचारी (सी.).
कुप्पुस्वामी शास्त्री (एस.) तथा चिन्तामणि (टी. आर.).
रंगनाथन (श्री. रा.) तथा शिवरमन (के. एम.).

१२२२ यदि तीन अथवा अधिक व्यक्ति सहग्रन्थकार हों तो प्रथम ग्रन्थकार का नाम शीर्षक के रूप में उपयुक्त किया जाए। उसके पश्चात् 'इदि' लगा दिया जाए।

१२३ समष्टि ग्रन्थकार

प्रशासन, उसके किसी विभाग अथवा अन्य संस्थाओं द्वारा प्रकाशित प्रकाशन साधारणतः समष्टि ग्रन्थकार के माने जाते हैं। कार्या-

लयीय (अधिकारानुमोदित) प्रकाशनों के विषय में. किसी व्यक्ति-विशेष का नाम आख्या पत्र पर दिया हो तब भी उसे अवैयक्तिक ग्रन्थ-कार-कृत माना जाए। इस प्रकार के प्रकाशनों के लिए निम्नलिखित धाराएं अनुसृत की जाएं :—

१२३ यदि ग्रन्थ द्वारा समष्टि-ग्रन्थकारता सूचित की जाए तो उस समष्टि के नाम को शीर्षक के रूप में लिया जाए।

१२३१ प्रशासन ग्रन्थकार

१२३१ यदि समष्टि ग्रन्थकार अखण्ड प्रशासन हो और उसका कोई विशिष्ट खण्ड न हो तो शीर्षक के लिए उस प्रदेश के नाम का उपयोग किया जाए जो प्रदेश उस समष्टि का अधिकारक्षेत्र हो। यदि समष्टि ग्रन्थकार प्रशासन का कोई खण्ड हो तो उपर्युक्त शीर्षक को मुख्य शीर्षक माना जाए। यदि ग्रन्थकार अखण्ड प्रशासन न हो, और राष्ट्रपति, कार्यकारिणी, धारासभा अथवा कोई विभाग जैसा खण्ड हो तो उस खण्ड अथवा विभाग के नाम को उपशीर्षक के रूप में लिया जाए। वह पृथक् वाक्य होगा।

उदाहरण:—

१. मद्रास.
२. मद्रास. राज्यपाल.
३. मद्रास धारासभा.
४. मद्रास. शिक्षा (– विभाग).

१२३२ संस्था ग्रन्थकार

१२३२ यदि समष्टि ग्रन्थकार संस्था हो तो उस संस्था के नाम को शीर्षक के रूप में लिया जाए। आख्या पत्र, उपाख्या पत्र अथवा ग्रन्थ के अन्य किसी भाग में उस संस्था का जो नाम लघुतम रूप में पाया जाए उसी का उपयोग किया जाए। आरम्भ में अथवा अन्त में, यदि कोई असार शब्द हों तो उन्हें छोड़ दिया जाए। यदि समष्टि ग्रन्थकार उस संस्था का विभाग, परिभाग अथवा अन्य कोई अङ्ग हो तो उसका नाम उपशीर्षक के रूप में लगाया जाए।

उदाहरण:—

१. राष्ट्रसंघ.
२. दक्षिण भारत शिक्षक संघ.
३. मद्रास विश्वविद्यालय.
४. रामानुजन स्मारक समिति.
५. मद्रास धारासभा. सर्वजन लेखा समिति.

१२३३ सम्मेलन ग्रन्थकार

१२३३ यदि समष्टि ग्रन्थकार सम्मेलन हो तो उस सम्मेलन के नाम को शीर्षक के रूप में लिया जाए। उसके तत्त्वसाधन के लिए, जिस स्थान में वह सम्मेलन हुआ हो उसका नाम तथा वर्ष लिखा जाए। इन दोनों को पृथक् वाक्य माना जाए।

उदाहरण:—

प्राच्यविद्या विशारद सम्मेलन. शिमला. १९११.
तामिल ग्रन्थ प्रेमी सम्मेलन. मद्रास. १९३३.
अखिल भारतीय ग्रन्थालय सम्मेलन. १. कलकत्ता. १९३३.

अन्तिम उदाहरण में सम्मेलन की क्रमिक संख्या को, सम्मेलन और स्थान नामों के बीच, पृथक् वाक्य के रूप में अन्तर्निविष्ट कर दिया गया है। यह ध्यान देने योग्य है। जो सम्मेलन समय समय पर हुआ करते हों उनके लिए ऐसा व्यवहार विहित है।

१२५ कैतवनाम

१२५ यदि आख्या पत्र पर ग्रन्थकार के नाम के स्थान में केवल कैतव-नाम ही दिया गया हो तो उस कैतवनाम को ही शीर्षक के रूप में लिया जाए। उसके पश्चात 'कैतव' यह वर्णक पद पृथक् वाक्य के रूप में लिखा जाए।

उदाहरण:—

केरलपुत्र. कैतव.
इतिहासप्रेमी. कैतव.
विहङ्गम. कैतव.

१२५१ यदि आख्या पत्र पर ग्रन्थकार का नाम भी गौण रूप में दिया हुआ हो तो वर्णक पद 'कैतव' के आगे उसे भी लगा दिया जाए। वह पृथक् वाक्य के रूप में वृत्त कोष्ठक में लिखा जाए, तथा उसके पूर्व 'अ.' यह चिह्न लगा दिया जाए।

उदाहरण:—

एक भारतीय आत्मा. कैतव. (अ. माखनलाल चतुर्वेदी).

१२६ सहकार

१२६ यदि धारा १२९ तथा उसकी उपधाराओं में से किसी का प्रसङ्ग न हो, ग्रन्थ के आख्या पत्र पर न तो एक व्यक्ति ग्रन्थकार का और न दो व्यक्ति ग्रन्थकारों के नाम दिए हों, न समष्टि-ग्रन्थकारता सूचित होती हो. और न कैतवनाम ही दिया हो, किन्तु किसी सहकार का नाम दिया हुआ हो तो उस नाम को शीर्षक के रूप में लिया जाए। उस व्यक्ति के स्वरूप का निर्देशक योग्य वर्णक पद उसके आगे लगा दिया जाए। इस प्रकार योजित वर्णक पद पृथक् वाक्य माना जाए।

१२६१ शीर्षक के रूप में स्वीकृत नाम धारा १२१ तथा उसकी उपधाराओं के अनुसार लिखा जाए।

उदाहरण:—

१. शङ्कर. भाष्य.

ब्रह्मसूत्र भाष्य.

प्रस्तुत ग्रन्थ के आख्या पत्र पर शङ्कराचार्य का नाम भाष्यकार के रूप में दिया हुआ है। अत: 'शङ्कर' को शीर्षक के रूप में लिया गया है।

२. प्रेमचन्द. संपा.

संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियां.

प्रस्तुत ग्रन्थ के आख्या पत्र पर प्रेमचन्द का नाम सम्पादक तथा भाषान्तरकार के रूप में दिया हुआ है। अत: 'प्रेमचन्द' को शीर्षक के रूप में लिया गया है।

३. गुप्त (केदारनाथ). संग्रा.

कवियों की झांकी.

प्रस्तुत ग्रन्थ के आख्या पत्र पर केदारनाथ गुप्त का नाम संग्राहक के रूप में दिया हुआ है। अतः 'गुप्त (केदारनाथ)' को शीर्षक के रूप में लिया गया है।

१२७ आख्या प्रथम शब्द

१२७ मुख्य संलेख के शीर्षक के लिए उपयोज्य प्रकारों का ऊपर परिगणन किया गया है। किन्तु ऐसे भी ग्रन्थ होते हैं जिनमें उपर्युक्त शीर्षकों में से कोई भी उपलब्ध नहीं होता। ऐसी अवस्था में आख्या का प्रथम शब्द ही शीर्षक के रूप में व्यवहृत किया जाए। यदि वह उपपद हो तो उत्तरपद को उस उद्देश्य के लिए व्यवहृत किया जाए। भारतीय भाषाओं में ऐसे ग्रन्थ बहुधा पाये जाते हैं।

उदाहरणार्थ, निम्नलिखित ग्रन्थ उपस्थित किया जाता है। इसमें आख्या पत्र पर ग्रन्थ की आख्या तथा मुद्रणाङ्क आदि से अतिरिक्त और कोई विशेष विवरण नहीं दिया गया है। इसका मुख्य संलेख निम्नलिखित होगा :—

प१२२:२१:६   १५थ२५

चारायणीय. प्रथमशब्द.

चारायणीय मन्त्रार्पाध्याय.

५२५०७

१३ आख्य-भाग

१३ आख्या भाग में एक, दो अथवा तीन खण्ड हो सकते हैं। यह आख्या पत्र पर दिए हुए विवरण पर निर्भर है। आख्य-भाग में क्रमशः निम्नलिखित दिये जाएंगे। उनका एक अनुच्छेद होगा।

१. आख्या;

२. भाष्यकार, सम्पादक, भाषान्तरकार, संग्राहक, संशोधक, संक्षेपक आदि के विषय में विवरण, यदि महत्त्वपूर्ण हो तो चित्रकार

तथा उपोद्घात, भूमिका, परिशिष्ट आदि ग्रन्थ के गौण खण्डों के लेखकों का भी नाम दिया जा सकता है; तथा

३. आवृत्ति।

१३१ वाक्य के प्रथम खण्ड में आख्या पत्र के उतने संगत अंश-विशेष की प्रतिलिपि होगी जिससे ग्रन्थ के प्रतिपाद्य, विस्तार तथा उद्यन्मुखीकरण के सम्बन्ध में यथार्थ ज्ञान हो जाए। वह भागोद्ग्रह संगत और सुबोध हो। यदि आख्या पत्र ग्रन्थालय की इष्ट भाषा में न हो तो उसका इष्ट भाषा में लिप्यन्तरीकरण कर लिया जाए।

१३२४ जिस खण्ड से आख्या-भाग का अंश लिया जाए उसमें से यदि किसी शब्द का लोप कर दिया जाए तो उसका सूचन किया जाए। लुप्त शब्द यदि वाक्य के मध्य में हो तो (···) तीन बिन्दुओं द्वारा तथा अन्त में हो तो 'इदि' द्वारा सूचित किया जाए।

१४ माला टिप्पण

१४१ माला टिप्पण में क्रमशः निम्नलिखित होंगे :—

१. माला का नाम, उपपद अथवा मानपद हो तो उसे छोड़ दिया जाए;
२. अल्प विराम;
३. माला के संपादक का नाम (एक अथवा दो), तथा 'संपा' यह शब्द, (यदि माला का कोई संपादक हो); तथा अल्प विराम; और
४. क्रमिक संख्या।

२ अन्तर्विषयी संलेख

२ अन्तर्विषयी संलेख में क्रमशः निम्नलिखित अनुच्छेद होंगे:—

१. ग्रन्थ के जिस विषय का अन्तर्विषय के रूप में निर्देश हो उस विशिष्ट विषय की वर्ग संख्या (अग्रानुच्छेद);
२. 'और द्रष्टव्य' देशक पद;
३ ग्रन्थ की क्रामक संख्या; तथा

४. ग्रन्थ का शीर्षक, द्विबिन्दु, ग्रन्थ की लघु आख्या, पूर्ण विराम तथा अनुसंधेय अध्याय अथवा पृष्ठ।

द्रष्टव्य उदाहरण २.१०—२.१६.

३ निर्देशी संलेख

३१ वर्ग निर्देशी संलेख

३१ प्रत्येक मुख्य संलेख तथा अन्तर्विषयी संलेख की वर्ग संख्या को शृङ्खला के रूप में प्रस्तुत किया जाए; शृङ्खला की सार्थक कड़ियों में से प्रत्येक के अन्तिम अङ्क के वाचक पद का शीर्षक के रूप में उपयोग किया जाए तथा वर्ग निर्देशी संलेख लिखा जाए।

द्रष्टव्य उदाहरण १.२—१.३; २.२—२.६.

३२ ग्रन्थ निर्देशी संलेख

३२ ग्रन्थ निर्देशी संलेख में क्रमशः निम्नलिखित अनुच्छेद होंगे :—

१. शीर्षक (अग्रानुच्छेद), तथा

२. अन्तर्लेख्य तथा निर्देशी संख्या।

द्वितीय अनुच्छेद में दोनों भागों के पृथक् वाक्य होंगे।

द्रष्टव्य उदाहरण १.४—१.६, २.७—२.८.

३२१ शीर्षक

३२१ ग्रन्थ निर्देशी संलेख में निम्नलिखितों में से कोई एक शीर्षक के रूप में लिया जाए। वरण ग्रन्थ पर निर्भर है।

१. मुख्य संलेख का शीर्षक, यदि उसका उसी रूप में ग्रन्थ के लिए संगत वर्ग निर्देशी संलेख के शीर्षक के रूप में व्यवहार न किया जाने वाला हो;

२. यदि उपर्युक्त प्रथम प्रकार के शीर्षक में सहग्रन्थकार के अथवा सह-सहकारों के नाम हों तो द्वितीय ग्रन्थकार अथवा द्वितीय सहकार का नाम;

३. मुख्य संलेख के आख्या भाग के द्वितीय खण्ड में उल्लिखित प्रत्येक व्यक्ति का नाम;

४. मुख्य संलेख के प्रत्येक स्वतंत्र टिप्पण में दी हुई माला का नाम;

५. ग्रन्थ की आख्या, यदि वह काल्पनिक हो; अर्थात ग्रन्थ के प्रतिपाद्य विषय को व्यक्त न करती हो, साथ ही ग्रन्थ के लिए संगत वर्ग निर्देशी संलेख के शीर्षक के रूप मे उसका उपयोग न किया जाने वाला हो; साथ ही मुख्य संलेख का शीर्षक आख्या प्रथम शब्द न हो।

४ नामान्तर निर्देशी संलेख

४ निम्निलिखितों के लिए नामान्तर निर्देशी संलेख दिया जाता है :—

१. माला का सम्पादक;

२. जब कैतव नाम का शीर्षक के रूप में उपयोग किया जाए तब वास्तविक नाम;

३. जब सूचीकारक द्वारा वृत शीर्षक का नामान्तर हो तब वह नामान्तर.

६५ संलेखों का व्यवस्थापन

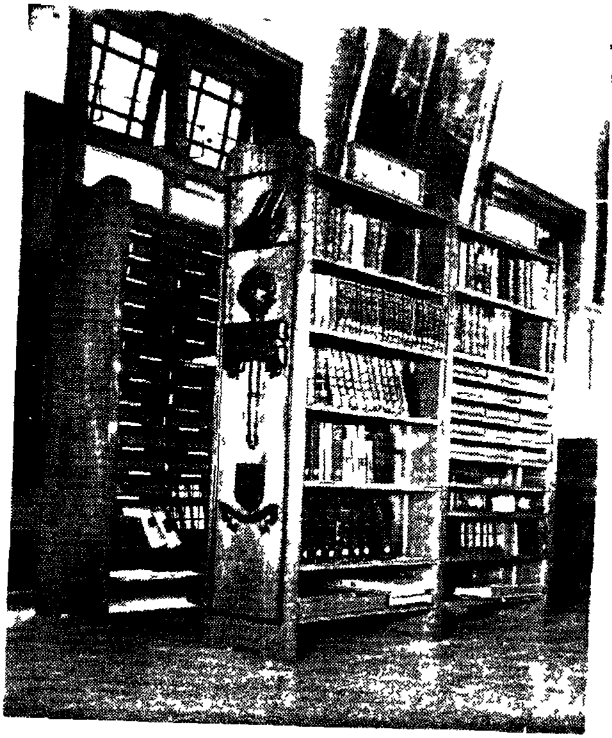
हम यह देख चुके हैं कि प्रत्येक संलेख पत्रक पर लिखा जाता है। इन पत्रकों को पात्रकों मे व्यवस्थापित रखा जाता है। उन पत्रकों के तल भाग में एक छिद्र होता है। एक सलाई (छड़), उनमें से गुजरती है, और उन्हें नियन्त्रित कर रखती है। छोटे ग्रन्थालयों में ऐसा पात्रक मण्डल रखा जा सकता है, जिसमें प्रत्येक स्तम्भ में तीन पात्रक हों। इस व्यवस्था में यह सुविधा होती है कि नये पत्रकों का अन्तर्निवेश इच्छानुसार किया जा सकता है। इसके लिए पहले से रखे हुए किसी पत्रक को न तो अव्यवस्थित किया जाता है और न पुनः ही लिखा जाता है।

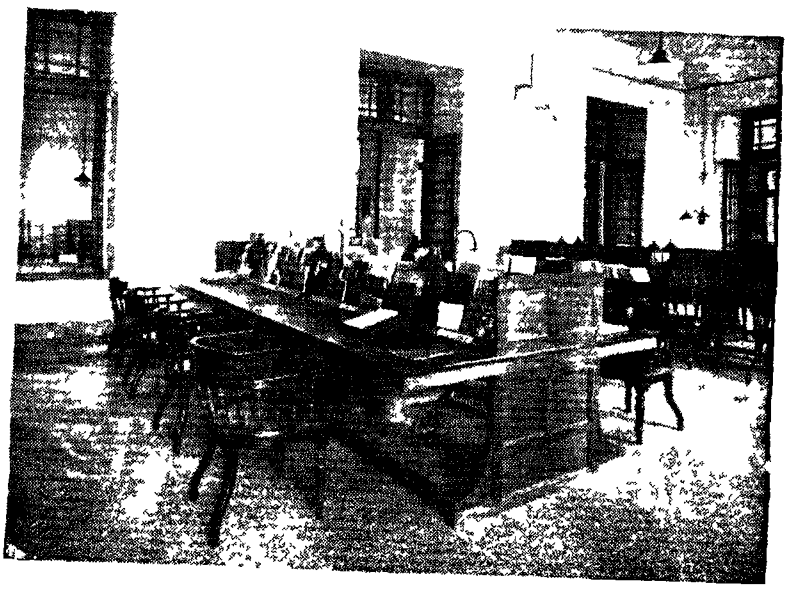
प्रस्तुत ग्रन्थ में दो प्रकार के संलेख दिए गए हैं। अर्थात् एक तो वे हैं जिनके शिरोभाग में संख्याएं हैं, तथा दूसरे वे हैं जिनमें केवल शब्द ही है। यह स्पष्ट है कि इन दो संघातों को एक साथ नहीं मिलाया जा सकता। इन दोनों को दो विभिन्न कक्षाओं में रखना

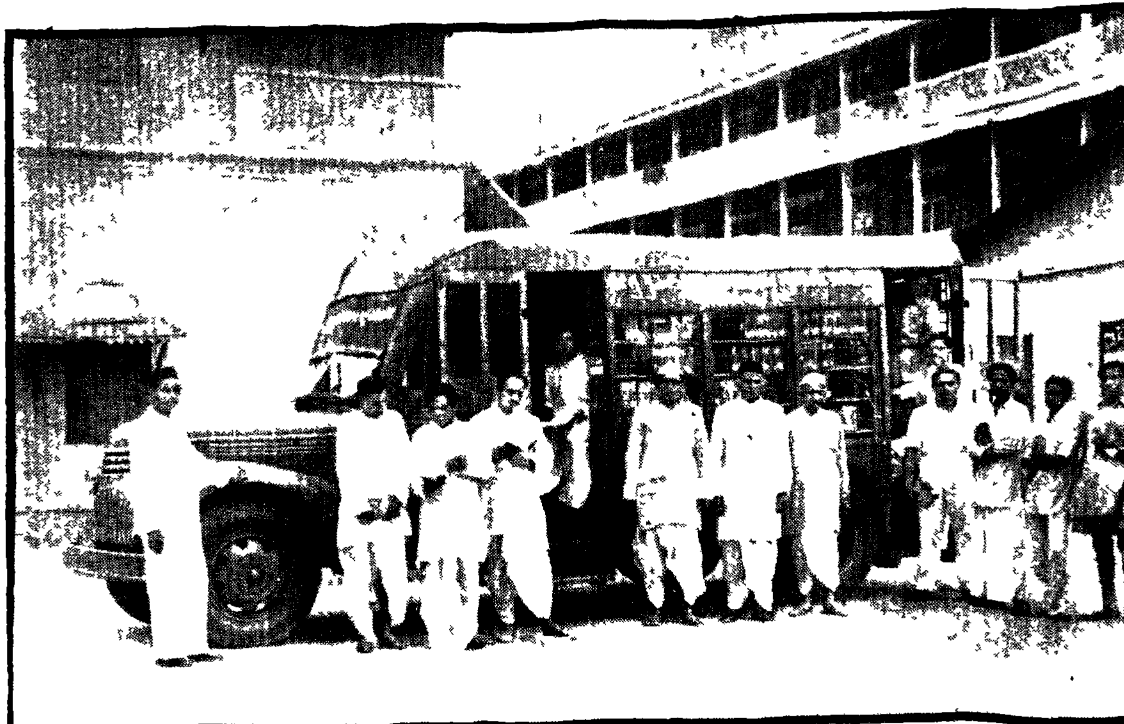
पड़ेगा। प्रथम कक्षा पत्रकों की वर्ग संख्या के स्थानक्रम के अनुसार व्यवस्थित की जाएगी। जिन संलेखों में वर्ग संख्या समान हो उन में पुस्तक संख्या सहित संलेखों को पूर्ववर्तिता दी जाती है। उनके आन्तरिक व्यवस्थापन के लिए उनकी पुस्तक संख्याओं के स्थान क्रम का सहारा लेना पड़ता है। जिन संलेखों के अग्रानुच्छेद में पुस्तक संख्या नहीं होती उन्हें अन्तर्विषयी संलेख कहा जाता है। वे उपर्युक्त संलेखों के पश्चात् आते हैं। उनके व्यवस्थापन के लिए उनके तृतीय अनुच्छेद में दी हुई पुस्तक संख्या का सहारा लेना पड़ता है।

किन्तु अनुवर्ण भाग में व्यवस्था वर्णमाला के अनुसार होती है। इसे क ख ग के समान सरल माना जाता है। किन्तु वस्तुतः यह भ्रम है। इसमें अनेक समस्याएं उठती हैं और उनका अनेक प्रकार से समाधान किया जाता है। इस सम्बन्ध में 'अनुवर्ग सूची कल्प' (*Classified catalogue code*) के अध्याय ०६ का अवलोकन किया जा सकता है।

—++++—







अहमदाबाद नगर निगम के सौजन्य से प्राप्त

अध्याय ७

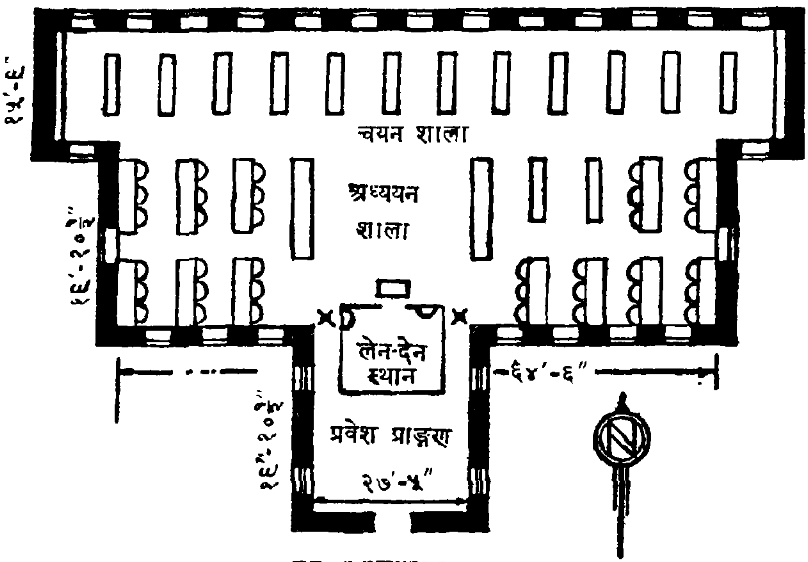
भवन तथा भाण्डार

ग्रन्थालय भवन से सम्बद्ध मुख्य कार्य संभार-सामग्री की संयोजना है। ग्रन्थालय के उपयोग के लिए जो लेखनादि सामग्री (स्टेशनरी) आवश्यक होती है उसका योगक्षेम साधारणतः उपजीव्य समष्टि ही किया करती है। तथापि उससे सम्बद्ध कुछ परिपाटी का निर्वाह ग्रन्थालय को करना ही पड़ता है। परिपाटी की चर्चा के पूर्व कतिपय अन्य विषयों की चर्चा की जाएगी। छोटे ग्रन्थालयों में उनकी आशा की जा सकती है। यह चर्चा उपयुक्त होगी।

७१ भवन

अनन्तर पृष्ठ पर दिए हुए रेखा चित्र में कुछ आवश्यक वस्तुएं (स्वरूप) दिखलाई गई हैं। ग्रन्थालय भवन में उनकी व्यवस्था होनी ही चाहिए। चयनशाला में ग्रन्थ चयन होगा। वे (चयन) सम रेखाओं में फैल रहेंगे। उनकी पङ्क्तियां एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र तक ६′ दूर होंगी ग्रन्थ चयन १८″ चौड़े एकक ग्रन्थाधारों का बना हुआ होगा। इस प्रकार ग्रन्थाधारों की दो निकटस्थ पङ्क्तियों के बीच ४½′ अन्तर्मार्ग बन जाएगा। इस प्रकार ग्रन्थाधारों के द्वारा बनाए हुए प्रत्येक अन्तर्मार्ग के अन्त पर ४′ चौड़ा और ६′ ऊंची खिड़की होनी चाहिए, जिससे अन्तर्मार्ग में पूर्ण प्रकाश छाया रहे। दीवाल के साथ साथ एक अन्तर्मार्ग होना चाहिए। उस अन्तर्मार्ग की चौड़ाई कम से कम ३′ हो। इस अन्तर्मार्ग द्वारा वर्षा और धूप से ग्रन्थाधारों की रक्षा हो सकेगी। साथ ही यह अतिरिक्त सावधानता रखनी चाहिए। हमारे देश में यह अत्यन्त आवश्यक है। जिस लम्बी दीवाल में चयनशाला की ये लम्बी खिड़कियां बनी हों वह दीवाल पूर्व से पश्चिम की ओर

फैली हुई हो। धरती या तो अशब्दजनक हो। अथवा यदि आज की भारतीय आर्थिक दुरवस्था में इस प्रकार की मंहगी वस्तु न खरीदी जा सके तो भूमि को किसी प्रकार की चटाई आदि से ढक देना चाहिए। नारियल की जटा की चटाई बहुत सस्ती होगी और हमारे छोटे ग्रन्थालय भी उसे खरीदने में समर्थ होंगे। भवन के अन्य विवरण रेखाचित्र में स्पष्टतया दृष्टिगोचर हो रहे हैं।



एक-महाशाला व्यवस्था
मान १ इंच=१६ फीट

७२ ग्रन्थाधार

एकक ग्रन्थाधार के लिए निम्नलिखित निर्धारण हैं :—

हमने मद्रास विश्वविद्यालय ग्रन्थालय के लिए जिस मानित एकक ग्रन्थाधार की योजना की है उसमें दो मुख हैं। प्रत्येक मुख में दो खात होते हैं अर्थात एकक ग्रन्थाधार चतुष्खात ग्रन्थाधार होता है। प्रत्येक पार्श्व में दो खात होते हैं। प्रौढ़ ग्रन्थालयों में तो ऊंचाई ७ फीट हो सकती है। किन्तु बाल ग्रन्थालयों में वह ५ फीट से अधिक न होनी चाहिए।

१. प्रौढ़ ग्रन्थालय के लिए एकक ग्रन्थाधार के प्रमाण तथा निर्धारण निम्नलिखित हैं :—

११ बाह्य परिमाण ६' ६" × १' ६" × ७'

१२ तीन खड़े तख्ते, प्रत्येक २" × १'६" × ७'

१३ सात फलक तख्ते प्रत्येक ३' × ८½" × १"

फलक-तख्तों में से दो जड़े हुए होंगे—एक सिरे के निकट तथा दूसरा तले के निकट। अन्य पांच हिलने वाले हों तथा इच्छानुसार एक एक इंच की दूरी पर ऊपर नीचे लगाये जा सकते हों। यदि प्रत्येक एकक ग्रन्थाधार के लिए दो खाली तख्तों की व्यवस्था की जा सके तो बड़ा अच्छा हो।

२ ग्रन्थाधार का तल भाग स्वच्छ करने योग्य हो, अर्थात् सबसे निचला तख्ता भूमि से ६ इंच की ऊंचाई पर लगाया जाए। इससे ग्रन्थाधार के नीचे की भूमि को स्वच्छ करने मे सुविधा होगी तथा सरलता से अवधान रखा जा सकेगा। सबसे ऊपरी तख्ता खड़े तख्तों के सिरे से ६ इंच नीचे लगाया जाए।

३. एक मुख की ओर के ग्रन्थ संवादी दूसरे मुख की ओर के ग्रन्थों से मिश्रित हो सकते हैं। इसके बचाव के लिए यह व्यवस्था की जाती है कि इन दोनों मुखों के बीच में पतली धातु की चद्दर लगा दी जाए। इसी को समाविष्ट करने के लिए तख्ते केवल ८½ इंच ही चौड़े रखे जाते हैं। इस प्रकार ग्रन्थाधार के मध्य में १ इंच स्थान खाली छूट जाता है। इसी में वह चद्दर आ जाती है। पतली चद्दर का विभाजन सबसे निचले, जड़े हुए तख्ते से ६ इंच की ऊंचाई को छोड़ कर आरम्भ होना चाहिए। इससे यह सुविधा होगी कि महाकार ग्रन्थ यदि एक फुट से अधिक हुए तो वे सबसे निचले जड़े हुए तख्ते पर लिटाकर रखे जा सकेंगे। वे एक मुख से दूसरे मुख तक फैले रहेंगे। यदि चद्दर पीतल की न होकर फौलाद की हो तो उस पर जंग न लगे इसके लिए उसे जंग-बचाने वाले रंग से रंग देना चाहिए।

४. प्रत्येक तख्ते के अगले किनारे में खांचे कटे होने चाहिएं। इसमें फलक दर्शक लगाये जाएंगे। यदि इन खांचों को सावधानी के साथ काटा जाए तो फलक दर्शक एक सिरे से दूसरे सिरे तक

खिसकाये जा सकेंगे। यह इसी लिए कि ग्रन्थ भी समय समय पर आगे पीछे अवश्य ही खिसकाये जाएंगे।

५. तीनों खड़े तख्ते जड़े हुए तख्ते के चार युग्मों से आपस में बंधे हुए रहेंगे। यदि इस बन्धन को फौलाद की दो बन्ध-छड़ों द्वारा दृढ़ीकृत कर दिया जाए तो अच्छा रहेगा। वे दोनों छड़ें इन तीनों तख्तों को जोड़े रहेंगी। एक छड़ तल से २½' ऊंचाई पर लगाई जाए तथा दूसरी सिरे से २½' नीचे। इन छड़ों को समाविष्ट करने के लिए यह आवश्यक होगा कि धातु की चद्दर का विभाजन तीन भागों में बनाया जाए। इन भागों की फ्रेमों के बीच से वे छड़ें गुजरेंगी।

६. प्रत्येक खात में मानचित्रों के रखने के लिए स्प्रिंग ब्लाइन्ड-होल्डर लगाना सुविधाजनक होगा। प्रत्येक खात के सामने कम से कम दो मानचित्र लगाये जा सकते हैं। साधारणतः ये मानचित्र लपेटे हुए ही रहेंगे। जब कभी आवश्यकता हो तो अवलोकनार्थ उन्हें बाहर निकाला जा सकता है।

७१. जो सागवान की लकड़ी लगाई जाए वह सूपचारित हो। ठेकेदार से यह करार करा लेना चाहिए कि यदि पूर्ति के एक वर्ष के बीच ही उसमें कोई दरार पड़ गई तो उसे ठीक करना पड़ेगा

७२. सभी फलक तख्तों की लम्बाई सर्वथा ठीक ठीक होनी चाहिए, जिससे कि बिना किसी रुकावट के उनकी आपस में अदल-बदल की जा सके।

८. इस प्रकार के एकक ग्रन्थाधार के लिए प्रायः १० घन फीट सागवान की लकड़ी आवश्यक होती है। इनमें ग्रन्थों को रखने के लिए, ८४ फीट विस्तृत फलक-स्थान होता है। सामान्यतः, माध्य रीति से, इसमें प्रायः ७५० संपुट रखे जा सकते हैं। जब इसमें ग्रन्थ भरे रहेंगे तब इसका भार १ टन होगा।

७३ उद्घाटन परिपाटी

मुख्य द्वार को खोलने के पहले, भवन के चारों ओर घूमना चाहिए और देखना चाहिए कि कोई अव्यवस्था तो नहीं है। रात्रि के प्रहरी से पूछना चाहिए कि रात्रि में उसने क्या देखा और क्या सुना। यह भी देखना चाहिए कि मुख्य द्वार का ताला सुरक्षित है और

किसी ने उसके साथ छेड़छाड़ नहीं की है। इसके पश्चात् यह देखना चाहिए कि दरवाजे तथा खिड़कियां ठीक ठीक बन्द हैं। इसके बाद चपरासी से कहना चाहिए कि वह उन्हें खोले और यदि उनमें कोई गड़बड़ी हो तो सूचित करे। जो कुछ भी टूटा फूटा हो उसकी सूचना वह दे। इसके बाद भवन के भिन्न भागों में घूमना चाहिए। इस देखभाल के लिए एक विधियुक्त योजना बना लेनी चाहिए। यह देखना चाहिए कि बिजली के अधिष्ठापन में कोई दोष तो नहीं हैं। यह भी देखना चाहिए कि चूहे, चिमगादड़, गिलहरी तथा इसी प्रकार के अन्य जन्तुओं ने कहीं कोई हानि तो नहीं पहुँचाई है। कहीं दीमकों के तो चिह्न नहीं हैं यह भी देखना चाहिए। विगत दिन यदि पानी पड़ा हो तो यह देख लेना चाहिए कि कहीं पानी तो नहीं चुआ [illegible] के यान्त्रिक द्वार उचित अवस्था में हैं तथा भली भांति काम कर सकते हैं, इसकी भी जांच कर लेनी चाहिए। [illegible] देखना [illegible] चाहिए कि [illegible] घटक ठीक अच्छी अवस्था में हैं [illegible] हैं। जब [illegible] घूम रहे हों और हमें किसी प्रकार का [illegible] दिखलाई पड़े तो अपनी दैनन्दिनी में उसे यथार्थ रूप में लिख लेना चाहिए। जब यह कार्य समाप्त हो जाए तो जितने भी दोष दिखाई पड़े हों उनमें से प्रत्येक के लिए आवश्यक कार्यवाही की जाए। यदि किसी प्रकार की भयानक घटना घटी हो तो उसी क्षण ग्रन्थालयी के पास सन्देश भेजना चाहिए। विभाग की दैनन्दिनी में उद्घाटन से सम्बद्ध स्तम्भों को भर देना चाहिए। सब घड़ियों में उचित अवधि के अनुसार चाबी भर देनी चाहिए तथा आवश्यक हो तो समय भी मिला लेना चाहिए। यह भी देखते रहना चाहिए कि झाड़ पोंछ करने वाले व्यक्ति काम करने लग गए हैं।

७४ संवरण परिपाटी

भवन को बन्द करने से पूर्व यह देख लेना चाहिए कि उसके किसी भाग में कोई व्यक्ति है तो नहीं। किसी चपरासी से कहना चाहिए कि वह चारों ओर जाए और विधियुक्त रीति से सब दरवाजों और खिड़कियों को बन्द कर सिकड़ी-चटकनी आदि लगा दे। प्रत्येक दरवाजे और खिड़की को भली भांति देख लेना चाहिए और यह

समाधान कर लेना चाहिए कि वह बन्द है। यह भी देख लेना चाहिए कि कोई ज्वलनशील वस्तु तो इधर-उधर बिखरी नहीं पड़ी है। यदि हो तो उसे हटा देना चाहिए। चूहेदानियों में चारा लगा देना चाहिए। उन्हें ग्रन्थालय के उन भागों में रख देना चाहिए जहां चूहे अधिकतर आया करते हों। हमारा यह अनुभव है कि हमें समय समय पर चारे का प्रकार बदलना चाहिए. और समय समय पर उन स्थानों में भी हेर फेर करनी चाहिए जहां चूहेदानियां रखी जाती हों। मनुष्य अपने को चाहे कितना ही बुद्धिमान माने, किन्तु चूहे उसकी अपेक्षा अधिक चतुर होते हैं। वे उसके फन्दों से बच जाते हैं; उसके सभी प्रयत्नों को व्यर्थ बना देते हैं और ग्रन्थालय के किसी न किसी कोने में अपना शिकार खेलते ही रहते हैं। यदि भवन को चूहों के लिए अगम्य ही बना लिया जाए तो इस प्रकार की झंझटें कभी उपस्थित ही न हों।

विभाग की दैनन्दिनी अपने साथ ले लेनी चाहिए। इसके पश्चात् बिजली के पंखों तथा बत्तियों को एक एक करके बन्द कर दिया जाए। इसके पहले इस बात का समाधान कर लेना चाहिए कि ग्रन्थालय के किसी भाग में कोई आदमी रह तो नहीं गया है। उसके पश्चात् उपमुख्य-घटक दबा देना चाहिए। सब के अन्त में मुख्य घटक दबा देना चाहिए। उसके बाद चपरासी से कहना चाहिए कि मुख्य दरवाजे को मजबूती से बन्द कर दे। स्वयं भी यह जांच कर लेनी चाहिए कि वह ठीक ठीक बन्द कर दिया गया है। रात्रि के प्रहरी से कह देना चाहिए कि वह भी उसकी जांच कर ले और इसका सन्तोष कर ले कि ताला भली भांति बन्द कर दिया गया है। इसके पश्चात् उस पर मुहर लगा देनी चाहिए। फिर विभागीय दैनन्दिनी में संवरण से सम्बद्ध स्तम्भों की खाना-पूरी कर दी जाए। ग्रन्थालय की कुञ्जी तथा दैनन्दिनी उस व्यक्ति के पास भेज देनी चाहिए जिसके अधिकार में वे वस्तुएं रात्रि के समय रहती हों।

७५ भाण्डार

संग्रह तथा निर्गम की एक संयुक्त पञ्जिका द्वारा वस्तुओं का निर्गम नियन्त्रित किया जा सकता है। प्रत्येक वस्तु के सम्बन्ध में

निम्नलिखित स्थिराङ्क स्थिर करने चाहिएं। अधिक अनुभव के आधार पर समय समय पर उनमें परिवर्तन भी किया जाना चाहिए।

१. अधिकतम मात्रा, जहां तक समय समय पर संग्रह बढ़ाया जा सके। वह समय वर्ष में एक बार हो सकता है। प्रत्येक वस्तु के लिए समय निर्धारित होना चाहिए।

२. न्यूनतम मात्रा, जिसके नीचे संग्रह न जाने दिया जाए, अर्थात् जब संग्रह उस स्थिति पर पहुँचे तब उसके पुनः भरण के लिए प्रयत्न किए जाएं।

३. वार्षिक उपभोग

४. निर्गम की मात्रा। यदि वस्तुओं को निश्चित मात्राओं में दिया जाए तो सुविधा हो और समय की भी बचत हो। प्रत्येक वस्तु की मात्रा उसके स्वरूप के अनुसार निश्चित की जाएगी। उदाहरणार्थ, सूची पत्रकों को केवल १०० की मात्रा में ही दिया जाए अथवा विभाग केवल १०० पत्रकों को अथवा १०० के गुणनस्वरूप पत्रक को ही मांगे। वह मात्रा के अंश को कदापि न मांगे। लिखने के कागज की मात्रा १०० पत्र हो सकती है। इसी प्रकार और भी समझना चाहिए।

इन संख्याओं के आधार पर तथा निर्गम के पौनःपुन्य के अनुभव के आधार पर प्रत्येक वस्तु के लिए संग्रह-निर्गम-पञ्जिका में कुछ पृष्ठ दिये जाएं। उद्देश्य यह हो कि सभी वस्तुओं को दिये हुए पृष्ठ प्रायः उसी एक समय में समाप्त हो जाएं।

निर्गम की मात्रा का इस प्रकार मानक स्थिर किया जाए। इसके अतिरिक्त यह भी वाञ्छनीय है कि समय की दृष्टि से भी निर्गम को नियन्त्रित किया जाए तथा उसमें मानक स्थिर किए जाएं। किसी कार्य के बीच ही में लेखन सामग्री का समाप्त हो जाना और चाहे जब संग्रह में शून्यता उत्पन्न हो जाने देना बड़ा ही भद्दा और उपहासजनक है। नीचे नमूने के रूप में समय तालिका दी जाती है। उससे यह जाना जा सकेगा कि क्या लक्ष्य रखना चाहिए :—

१. शनिवार, प्रातः ११ बजे अर्थन प्रपत्रों का भरना

२. शनिवार, अपराह्न २ बजे अर्थनों के अनुसार संग्रह का निर्गम

इसका अर्थ यह होता है कि सप्ताह की आवश्यकताओं का आरम्भ से ही अनुमान कर लेना चाहिए। इसमें न तो अधिकता की जाए और न न्यूनता। दोनों अनुचित हैं।

७५१ लेखनादि सामग्री

भाण्डार कार्य के संगठन में एक महत्त्वपूर्ण अङ्ग वस्तुओं के संग्रह से सम्बन्ध रखता है। प्रपत्र तथा पञ्जिकाओं के लिए योग्य आकार प्रकार के आधार-पात्र आवश्यक होते हैं। अध्याय ३ तथा ४ के ७ अङ्क से समाप्त होने वाले अनुच्छेदों में प्रपत्र तथा पञ्जिकाओं की सङ्केत संख्या दी है उनका व्यवस्थापन सर्वथा उन्हीं के आधार पर किया जाना चाहिए। लेखन सामग्री तथा अन्य वस्तुओं को भी उचित आकार प्रकार के आधार पात्रों में रखना चाहिए तथा उनका भी किसी सुविधापूर्ण रीति में व्यवस्थापन करना चाहिए। भाण्डार-शाला अत्यन्त सावधानी के साथ साफ सुथरी रखनी चाहिए। यदि विभाजन की मात्रा-रीति बरती गई और वस्तुओं को भी मात्राओं में भर कर रखा गया तो भाण्डार व्यवस्था में सुसज्जता स्वयं सिद्ध हो जाएगी। इसके अतिरिक्त संग्रह प्रमाणीकरण में भी अत्यधिक सुविधा हो जाएगी। नीचे लेखन सामग्री की एक तालिका दी जाती है। ग्रन्थालय में इन वस्तुओं की आवश्यकता पड़ सकती है।

दफ्ती	पेपर क्लिप (लौह)
पैकिंग कागज (६० पाउण्ड)	मषी शोषक
ब्रिस्टल बोर्ड	अनुयोग दफ्तियां
लेजर कागज २७" × १७" (मुद्रणार्थ)	पेन्सिल (काली)
कागज (श्वेत) २१ पाउण्ड २७" × १७" (मुद्रणार्थ)	पेन्सिल (नीली)
कागज (श्वेत) १६ पाउन्ड २७" × १७"	पेन्सिल (लाल)
कार्बन पेपर	पेन-होल्डर
स्टेन्सिल पेपर	निब

काली स्याही
लाल स्याही
रबर स्टाम्प स्याही
मसीदायक गद्दी
स्टेन्सिल (वर्णमाला तथा अङ्क)
रूलर
पत्रभार (पेपरवेट)
पिन
जेम क्लिप
फुट रूल
चाकू
कैंची
पेपर काट
छाता
गेहूँ का आटा
फेनाइल
साबुन
धागा
गोंद शीशी
मुहर लाह
मिट्टी का तेल
बढ़ईगीरी के उपकरण
स्याही बोतल
दवात
खुरचनी
खुरचनी स्याही (काली)
खुरचनी स्याही (लाल)
स्टेन्सिल स्याही
सुई
इंच फीता
तिथ्यङ्कक
आह्वान घण्टी
टाइपराइटर
टाइपराइटर रिबन
टाइपराइटर खुरचनी
कपड़ा
प्रतिलिपिक मशीन तथा उसके उपकरण
बिजली के लट्टू
साइकिल तथा उसके उपकरण
दियासलाई
लालटेन
बालू का कागज

ग्रन्थालय का सम्पूर्ण संग्रह वर्ष में कम से कम एक बार मिला लिया जाए यह वाञ्छनीय है। इसका सर्वोपयोगी समय वह है जब कि वर्ष के लिए पूर्ति आ पहुँचे।

७६ ग्रन्थ शत्रु

जन्तु जगत में ग्रन्थों के कई शत्रु होते हैं। वे ग्रन्थों को बड़ी हानि पहुँचाया करते हैं। उनमें दीमक सर्वप्रधान है। इन जन्तुओं के स्वरूप तथा उनसे बचने के उपायों की विस्तृत चर्चा इस ग्रन्थ की अंग्रेजी आवृत्ति में की गई है। सबसे अच्छा तो यह है कि

ग्रन्थालय भवन ही ऐसा बनाया जाए कि इन कृमियों की पहुँच न हो सके। औषधोपचार के अतिरिक्त, धूप तथा हवा की व्यवस्था करने से भी पर्याप्त बचाव किया जा सकता है।

७६१ ग्रन्थों का करस्पर्शन

ग्रन्थों को उनके जन्तु शत्रुओं से बचाने का सर्वश्रेष्ठ उपाय तो आमुक्त प्रणाली है। जहां तक पाठकों की पहुँच हो सकती है उन प्रदेशों तक ग्रन्थों को सर्वदा ही हिलाया डुलाया जाता है। ग्रन्थ चलते फिरते ही रहते हैं। अतः वहां उन कृमियों की दाल नहीं गल सकती। किन्तु जिन प्रदेशों में पाठक न जाएं वहां के ग्रन्थों की देख-भाल विशेष रखनी चाहिए। ग्रन्थों को बाहर निकाल कर स्वच्छ किया जाए, उन्हें स्वच्छ हवा पहुँचाई जाए तथा सूर्य-किरणों से भी उनका परिचय कराया जाए। सपुटन में काले रंग की आवरण वस्तु का उपयोग न किया जाए। वे कृमि लाल रंग से बहुत ही कम आकृष्ट होते हैं, यह अनुभव से सिद्ध हो चुका है।

७७ प्रपत्र तथा पञ्जिका

प८८७१ अर्थन पत्र खण्ड. स्टेन्सिल. लेजर कागज. श्वेत. स्तम्भ शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

वस्तु (३ इंच); विद्यमान मात्रा ($\frac{1}{2}$ इंच); अपेक्षित मात्रा ($\frac{1}{2}$ इंच); विशेष.

स्तम्भ शीर्षकों के ऊपर निम्नलिखित लिखा जाएगा :—
विभाग की संख्या तथा नाम; विभागाध्यक्ष का हस्ताक्षर; तिथि; ग्र. की स्वीकृति तथा हस्ताक्षर।

प८८७२ मासिक पूर्ति अर्थन पत्र खण्ड. स्टेन्सिल. लेजर पेपर. श्वेत. पङ्क्ति शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

मास

वस्तु

व्यक्ति अथवा विभाग के क्रमशः नाम

संकलन

ग्र की स्वीकृति तथा हस्ताक्षर

५६६७५ अर्थन समूहन प्रपत्र. स्टेन्सिल. लेजर कागज. श्वेत. स्तम्भ शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

प्रपत्र अथवा वस्तु की संख्या (१ इंच); विभिन्न अर्थक विभागों में से प्रत्येक की संख्या ; संकलन (इन स्तम्भों में से प्रत्येक के लिए ½ इंच).

स६६७ संग्रह तथा निर्गम पंजिका. मुद्रित. १०पॉइन्ट टाइप. २१ पाउण्ड मुद्रण कागज. संपुटित पुस्तक. ३० रखाएं।
स्तम्भ शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

तिथि (१ इंच); किससे प्राप्त अथवा किसे प्रदत्त (२ इंच); प्राप्ति (१ इंच); निर्गमन (१ इंच), अवशेष (१ इंच); प्राप्तिकर्त्ता के हस्ताक्षर (½ इंच); विशेष.

७८ अनुयोग

नाम	वर्ग संख्या	अनुयोगभेदक
अर्थन	६६७२ अर्थन से सम्बद्ध वर्ष का अन्तिम अङ्क	पत्रव्यवहर्त्ता
प्रपत्र	६६७४ प्रपत्र की संख्या	..
वितरण	६६७६ वस्तु की संख्या	"
स्वीकृत अर्थन	६६७७ ...	...
संग्रह प्रमाणीकरण	६६७८ प्रमाणीकरण से सम्बद्ध वर्ष का अन्तिम अङ्क	पत्रव्यवहर्त्ता

पांच वर्षों के अनन्तर इन अनुयोगों को लेखसंग्रह में भेजा जा सकता है, तथा उसके तीन वर्ष पश्चात् नष्ट किया जा सकता है।

—++++++—

अध्याय ८

पारिभाषिक शब्दावली

अग्र	Leading line
अग्राक्षर नाम	Initionym
अग्रानुच्छेद	Leading section
अतिरिक्त	Additional
– संलेख	Added entry
अङ्क	Digit
अङ्कन	Impression, Notation
अतिदेय	Overdue
अनुकार	Parody
अनुकूल क्रम	Helpful order
अनुलय सेवा	Reference service
अनुलयी	– Librarian
अनुवर्ग क्रम	Classified order
– सूची	– catalogue
अनुवर्ण	Dictionary
– सूची	– catalogue
अन्तर्मार्ग दर्शक	Gangway guide
अन्तर्विषयी संलेख	Cross reference entry
अंशकार	Contributor
– निर्देशी संलेख	– index entry

अंशदान	Contribution
अवदान	Fascicule, Issue or Number (of a periodical)
अवरोपण	Discharging
- कार्य	- work
- पात्रक	- tray
अवान्तर	Alternative
अवान्तराख्या	- title
अष्टक रीति	Octave principle
अस्थायी कक्षा	Temporary sequence
आख्या	Title
- पत्र पृष्ठ	- page (Back of the)
आदेशन	Ordering
आयोजन	Planning
आरोपण	Charging
आरोपण पात्रक	- tray
आरोपित पात्रक	Charged tray
आवृत्ति	Edition
आसङ्ग	Open access
आसेव्य	Reader, inside(consultant)
उद्धरण	Loan
उन्मुद्रण	Off print, Reprint
उपशीर्षक	Subheading
उपसूत्र	Canon
उपस्कर	Furniture
उपाख्या	Auxiliary title
उपान्त्य	Penultimate
एकभागिक	Unipartite
एकलक्ष्यक	Unifocal
एकसंपुटक	Single-volumed
एकसंश्लिष्ट	Two-phased

कक्षा	Sequence
कर्तृगण	Personnel, Staff
कर्म	Work
कल्प	Code
कार्यभार ग्रन्थालय	Business library
कालक्रम	Chronological order
कृत्रिम समासित ग्रन्थ	Artificial composite book
कैतवनाम	Pseudonym
क्रम संख्या	Ordinal number
क्रमागत	Successive
क्रामकसंख्या	Call number
क्रिया	Job
खात दर्शक	Bay guide
गणना पञ्जिका	Statistics register
गवेषणा ग्रन्थालय	Research library
ग्रन्थकार	Author
– विश्लेषक	– analytical
– सूची	– catalogue
ग्रन्थ चिटिका	Book ticket
– दर्शक	Tag guide
– निर्देशी संलेख	Book index entry
– पञ्जिका	Shelf register
– प्रदर्शक गण	– section
– प्रदर्शन	Maintenance work
– वरण	Book selection
– व्यवस्थापन	Shelf arrangement
ग्रन्थाधार	Rack
ग्रन्थालय	Library
– लिपि	– hand
– शास्त्र पञ्चसूत्री	Five laws of library science

ग्रन्थालयी	Librarian
ग्राम केन्द्र ग्रन्थालय	Rural central library
चयन	Stack
– शाला	– room
चिरगहन ग्रन्थ	Classic
जङ्गम ग्रन्थालय	Travelling library
ज्ञाति	Filiatory
– क्रम	– order
ज्ञातेयता	Filiation
टिप्पण	Note
तालिका	Schedule
तिथ्यङ्कक	Dater
तिथि दर्शक	Date guide
– पत्र	– label
दर्शक	Guide
– पत्रक	– card
दशमलव वर्गीकरण	Decimal classification
दान संख्या	Donation number
द्वार पञ्जिका	Gate register
द्वितीय संश्लेष	Second secondary phase
– अनुच्छेदी	Intermediate item
द्वितीयोर्ध्व रेखा	Second vertical
द्विबिन्दु	Colon
– वर्गीकरण	Colon classification
द्विभागिक	Bipartite
द्विसंश्लिष्ट	Three-phased
देय तिथि	Due date
धर्म	Function
धारा	Rule
नगर केन्द्र ग्रन्थालय	City central library
नाम वृत्त	Who's who
नामान्तर निर्देशी संलेख	Cross reference index entry

नियम	Regulation
निरवदान	Serial
निरूपण कार्य	Technical work
निर्गम	Exit, Issue
– स्थान	Issue counter
निर्देशक	Director
निर्देशिका	Directory
निर्देशी	Index
– संलेख	– entry
निहित कक्षा	Reserved sequence
न्याय	Principle
पङ्क्ति	Array
पत्रक	Card
– दर्शक	Tab (projecting part of guide card)
– सूची	Card catalogue
पत्र पृष्ठ	Verso
– मुख	Recto
पदार्थ मुख	Substance faeet
पद्धति	Scheme
परम्परा	Chain
परम्परित	Subordinate
पराख्या	Later title
परिग्रहण	Accession
– संख्या	– number
परिपाटी	Routine
परिवृत्ताख्या	Changed title
परिसूत्र	Formula
पाठक चिटिका	Reader's ticket
पात्रक	Tray
पुनर्मुद्रित	Reprinted

पुष्पिका	Colophon
पुस्तक पत्रक	Book card
– संख्या	number
पुस्तिका	Pamphlet
पूर्ति	Supply
प्रकारान्तर	Adaptation
– कार	Adaptator
प्रणाली	System
प्रतिचिटिका	Duplicate ticket
प्रतिपाद्य-विषय	Subject-matter
प्रतिभावित	Guarantee
प्रतिभू	Guarantor
प्रतिरूप	Symbol
प्रतिश्रुत ग्रन्थ	Bespoken book
प्रत्यावर्तन	Return
– तिथि	– date
– स्थान	– counter
प्रथम संश्लेष	First secondary phase
प्रथमोद्र्ध्व रेखा	– vertical
प्रदर्शन कार्य	Shelf work
प्रदेश क्रम	Geographical order or Spatial order
– मुख	Geographical facet
प्रमेय मुख	Problem facet
प्रवेश	Entrance
प्रस्तुत अनुनय सेवा	Ready reference service
प्रातिभाव्य	Caution money
फलक	Shelf
– दर्शक	– guide
बहुमुख	Multifaceted
बहुसंपुटक	Multivolumed

भाग	Part
भागोद्धृत	Extract
भाषान्तरकार	Translator
भाष्यकार	Commentator
भूमिदर्शक	Tier guide
भेदक	Characteristic
महाविद्यालय ग्रन्थालय	College library
मानक	Standard
मानित पत्रक	– card
माला	Series
– टिप्पण	– note
मालिक संख्या	Serial number
मुख	Facet
– परिसूत्र	– formula
मुख्य वर्ग	Main class
– संलेख	– entry
मुक्ताङ्कन	Open notation
मुद्रणाङ्क	Imprint
मौलिक घटक पद	Fundamental constituent term
यान्त्रिक द्वार	Wicket gate
राज्य केन्द्र ग्रन्थालय	State central library
राष्ट्रिय केन्द्र ग्रन्थालय	National central library
रीति	Procedure
लक्ष्य	Focus
लघु-आख्या	Short title, Half title
वर्ग	Class
– कार	Classifier
– निर्देशी संलेख	Class index entry
– संख्या	– number
वर्गाचार्य	Classificationist

वर्गीकरण	Classification
वर्णक्रम	Alphabetical order
वर्णक्रमण	Alphabetisation
वाङ्मयसूचि	Bibliography
विकास क्रम	Evolutionary order
विक्रेता	Vendor
विद्यालय ग्रन्थालय	School library
– मण्डल ग्रन्थालय	Regional school library
विधि	Act
विनिमय सूची	Exchange list
विमिश्रण	Sorting
– पात्रक	– tray
विशिष्ट विषय	Specific subject
विशेष अन्तर्विषयी संलेख	Special cross reference entry
विश्वकोष	Encyclopædia
विश्वविद्यालय ग्रन्थालय	University library
विषय विश्लेषक संलेख	Subject analytical
विसेव्य	Borrower; Reader, outside; Member
– चिटिका	Membership card
व्यक्ति ग्रन्थकार	Personal author
व्यवस्थापन	Arrangement
व्याप्त अनुलय सेवा	Long-range reference
शाखा ग्रन्थालय	Branch library
शाला	Room
शीर्षक	Heading
श्रेणी	Train
संक्षेपक	Epitomiser
संख्या	Number
सग्राहक	Compiler

संघटन	Organisation
संघात	Set
संचारण	Circulation
संचालन	Administration
संपादक	Editor
संपादन	Editing
संपुट	Volume
संपुटन	Binding
– कक्षा	– sequence
संप्रदाय क्रम	Canonical order
संबन्ध	Phase relation
संयोजक चिह्न	Connecting symbol
संलेख	Entry
संशोधक	Reviser
संश्लिष्ट	Phased
संश्लेष	Phase
सद्यःक्रिया	Job, immediate
समगति	Parallel movement
– न्याय	Principle of parallel movement
समपङ्क्ति	Co-ordinate
समरेखा	Horizontal line
समर्पण प्रतिष्ठान	Delivery station
समलम्ब अनुयोग	Vertical file
समवाय	Compilation
समव्यापकत्व	Co-extensiveness
समष्टि	Corporate body
– ग्रन्थकार	– author
समावेश्याङ्कन	Inclusive notation
समाश्रित नाम	Compound name
– ग्रन्थ	Composite book
सर्वजन ग्रन्थालय	Public library

सर्वजन ग्रन्थालय विधि	Public libraries act
सर्व वर्ग	Generalia class
सहकार	Collaborator
सहग्रन्थकार	Joint author
सहज समासित ग्रन्थ	Ordinary composite book
सहसम्पादक	Joint editor
सहायक	Assistant
साधारण ग्रन्थ	Simple book
सामयिक	Periodical
– प्रकाशन	– publication
सारिणी	Table
सावदान	Periodical
सिद्धान्त	Theory
सूची	Catalogue
सूचीकरण	Cataloguing
सूचीकार	Cataloguer
सेव्य	Reader

निर्देशी

संख्याओं द्वारा भाग, अध्याय और अनुच्छेदों का अनुसन्धान किया गया है।

सूचीकरण की धारा का अनुसन्धान निम्नलिखित रूप में किया गया है। उदाहरण :—

हिन्दूनाम ६४ (१२१२)

का यह अर्थ है कि हिन्दू नाम से सम्बद्ध धारा अनुच्छेद ६४ की १२१२ धारा के रूप में पाई जाएगी।

सं. में=संबन्ध में

सं. में उद्‌धृ =संबन्ध में उद्‌धृत

सं. में उल्लि.=संबन्ध में उल्लिखित

सं. में व.=संबन्ध में वर्णित

निर्देशी

—++++—